प्राकृत भारती पुष्प—५०

उववाइय सुत्तं

(औपपातिक सूत्रम्)

मूल एवं हिन्दी-आंग्ल भाषानुवाद सहित

सम्पादक

गणेश ललवानी

हिन्दी अनुवादक

उपाध्याय-प्रवर श्री पुष्कर मुनिजी म० के शिष्यरत्न

रमेश मुनि शास्त्री

आंग्ल भाषानुवादक

स्व० प्रो० के. सी. ललवानी

भूमिका लेखक

डॉ० मुनि नगराजजी

प्रकाशक

प्राकृत भारती अकादमी, जयपुर

श्री जैन श्वेताम्बर नाकोडा पार्श्वनाथ तीर्थ, मेवानगर

प्रकाशक
देवेन्द्रराज मेहता
सचिव
प्राकृत भारती अकादमी
३८२६ यति श्यामलालजी का उपाश्रय
मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जौहरीबाजार
जयपुर ३०२००३ (राजस्थान)

एवं

पारसमल भंसाली
अध्यक्ष
श्री जैन श्वेताम्बर नाकोड़ा पार्श्वनाथ तीर्थ
मेवानगर, स्टे० बालोतरा ३४४०२५
जिला बाड़मेर (राजस्थान)

□ प्रथम संस्करण, अक्टूबर १९८८

मूल्य
सजिल्द रु० १००·००
अजिल्द रु० ८०·००

मुद्रक
डी. पी. मित्र
एल्म प्रेस
६३ बिडन स्ट्रीट
कलकत्ता ७००००६

Prakrit Bharati Publication—50

UVAVĀIYA SUTTAM

(AUPAPĀTIKA SŪTRAṂ)

Original Text with Hindi & English Translation

Editor

Ganesh Lalwani

Hindi Translator

Upadhyaya-Pravar Shri Pushkar Muniji's disciple

Ramesh Muni Shastri

English Translator

Late Prof. **K. C. Lalwani**

Foreword by

Dr. Muni Nagrajji

Publishers

PRAKRIT BHARATI ACADEMY, JAIPUR

SHRI JAIN SHWETAMBAR NAKODA PARSHWANATH TEERTH

MEWANAGAR

Publishers

Devendraraj Mehta
Secretary
Prakrit Bharati Academy
3826 Yati Shyamlalji ka Upashraya
Moti Singh Bhomia ka Rasta
Jauhari Bazar, Jaipur 302003 (Rajasthan)

&

Parasmal Bhansali
President
Shri Jain Shwetambar Nakoda Parshwanath Teerth
Mewanagar, Stn. Balotra 344025
Distt. Barmer (Rajasthán)

□ *First Edition* October, 1988

Price

Library Edition Rs. 100·00
Paper back Rs. 80·00

Printer

D. P. Mitra
Elm Press
63 Beadon Street
Calcutta 700 006

प्रकाशकीय

भगवान महावीर के सिद्धान्तों के प्रचार-प्रसार हेतु सन् १९७७ में 'प्राकृत भारती' की स्थापना हुई थी और उस समय इसका प्रथम पुष्प सचित्र कल्पसूत्र प्रकाशित हुआ था। हमें यह कहते हुए हार्दिक प्रसन्नता हो रही है कि १०-११ वर्ष के स्वल्पकाल में ही औपपातिक सूत्र के नाम से प्राकृत भारती का यह ५०वां प्रकाशन पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत कर रहे हैं। प्राकृत भारती और उसके प्रकाशनों के प्रति पौर्वात्य और पाश्चात्य विद्वानों/पाठकों के प्रेरणास्पद अभिमत पाकर एवं उदार दानदाताओं/संस्थाओं का सहयोग प्राप्त कर प्राकृत भारती अकादमी विकास की ओर अग्रसर है।

औपपातिक सूत्र :

बारह अंगों के समान बारह उपांगों की मान्यता का प्राचीन उल्लेख न होने पर भी १२वीं शताब्दी से यह मान्यता स्वीकृत रही है। बारह उपांगों में औपपातिक सूत्र प्रथम उपांग आगम है। नन्दीसूत्र और पाक्षिक सूत्र के अनुसार औपपातिक की गणना अंगबाह्य आवश्यक व्यतिरिक्त उत्कालिक सूत्रों में की गई है।

इस आगम का उल्लेख प्राकृत भाषा में 'उववाइय सुत्तं' नाम से हुआ है जिसका संस्कृत रूप 'औपपातिक सूत्र' है। औपपातिक की व्याख्या करते हुए आचार्य अभयदेव कहते हैं "उपपतनं उपपातः—देव-नारक-जन्म-सिद्धिगमनं च, अतस्तमधिकृत्य कृतमध्ययनं औपपातिकम्" अर्थात् उपपात/जन्म, देव और नारकियों के जन्म तथा सिद्धिगमन का वर्णन होने से इस आगम का नाम औपपातिक है। गद्य-पद्य मिश्रित होने पर भी यह गद्य-प्रधान प्राकृत भाषा में है। यह उपांग दो विभागों में विभक्त है। प्रथम विभाग का नाम समवसरण है और दूसरे का नाम उपपात है। समवसरण विभाग का वर्ण्य विषय है—

चम्पानगरी में महाराज कूणिक (अजातशत्रु) का राज्य था। एकदा श्रमण भगवान् महावीर अपनी विपुल शिष्य-सम्पदा के साथ विहार करते हुए

चम्पानगरी के बाहर पूर्णभद्र चैत्य में पधारे। वार्ता-निवेदक से संवाद प्राप्त कर सम्राट कूणिक ने अत्यधिक प्रसन्नता का अनुभव किया। स्वजन, परिजन, नगरवासियों एवं समस्त राजकीय उपकरणों, छत्र, चामर, ध्वजा, हाथी, घोड़े, रथ, पालकी व विविध वादित्रों के जयघोष के साथ एवं आडम्बरपूर्वक कूणिक राजा ने समवसरण में प्रभु के समक्ष उपस्थित होकर श्रद्धा, विनय, भक्ति और बहुमानपूर्वक प्रभु की वन्दना की एवं पार्षदों के साथ परिषदा में प्रभु की उपासना करने लगे। उस समय श्रमण भगवान् महावीर ने अपनी अमृतस्राविणी वाणी में उपस्थित पार्षदों को अगार (गृहस्थ) और अनगार (साधु) धर्म का उपदेश दिया। उक्त धर्मोपदेश की राजा, रानी आदि सभी ने मुक्तकण्ठ से सराहना की।

इस वर्ण्य विषय में चम्पानगरी, पूर्णभद्र चैत्य, उद्यान, सम्राट कूणिक, भगवान् महावीर के चम्पानगरी के निकट पधारने के संवाद से कूणिक की हर्षाभिव्यक्ति, भगवान के अंगोपांगों का विशद् वर्णन, प्रभु के शिष्य-सम्पदा की साधना से प्राप्त अन्तरंग एवं बाह्य सिद्धियां, तप, दर्शनार्थ शोभायात्रा एवं श्रद्धापूर्वक दर्शन आदि का समासबहुल शैली में आलंकारिक, सरस, सजीव एवं अनूठा चित्रण प्राप्त है, जो अन्यत्र उपलब्ध नहीं है। यही कारण है कि इस प्रकार के वर्णक जिस आगम में भी आए हैं वहां यही उल्लेख प्राप्त होता है—"सेसं वण्णओ जहा उववाइए" अर्थात् इस प्रकार का शेष वर्णक औपपातिक सूत्र के समान समझें।

द्वितीयतः उपपात विभाग का वर्ण्य विषय है—भगवान् महावीर की धर्मदेशना के पश्चात् घोर तपस्वी गणधर गौतम ने जीव और कर्म-बन्धन विषयक प्रश्न किये। प्रभु ने मनुष्यों के भव-सम्बन्धी प्रश्नों का उत्तर देते हुए अनेक विषयों का प्रतिपादन किया; जिनमें दण्ड के प्रकार, मृत्यु के प्रकार, विधवा स्त्रियों, व्रती और साधु, गंगातटवासी वानप्रस्थी तापसों के प्रकार, प्रव्रजित श्रमणों, ब्राह्मण परिव्राजकों, क्षत्रिय परिव्राजकों, आजीवकों एवं अन्य श्रमणों के प्रकारों / भेदों तथा उनकी चर्या का विस्तार से प्रतिपादन के साथ सात निन्हवों का वर्णन है। अन्त में केवली समुद्घात, सिद्धि-क्षेत्र एवं सिद्धों का वर्णन उपलब्ध है। इसी बीच अम्वड़ परिव्राजक और उनके सात सौ शिष्यों का तथा उनकी जीवन-चर्या का विस्तृत विवरण उपलब्ध है। अम्वड़ परिव्राजक होते हुए भी महावीर प्रभु का अनन्य उपासक

था। अम्बड़ के लिये यह विशेष उल्लेख भी है कि भवान्तर में वह सिद्धि स्थान प्राप्त होगा।

इस उपांग में जहां एक ओर राजनैतिक और नागरिक तथ्यों की चर्चा है, वहीं दूसरी ओर धार्मिक, दार्शनिक एवं सांस्कृतिक तथ्यों का भी सजीव एवं सरस प्रतिपादन उपलब्ध है।

प्रस्तुत संस्करण :

इस महत्वपूर्ण आगम के मूल, संस्कृत व्याख्या, हिन्दी एवं गुजराती अनुवाद के साथ कई संस्करण निकल चुके हैं, किन्तु हिन्दी सह अंग्रेजी अनुवाद का कोई संस्करण अभी तक नहीं निकला है। अंग्रेजी और हिन्दी भाषा के अध्येता भी इस ग्रन्थ की मौलिकता का रसास्वादन कर सकें, इसी दृष्टि से यह संस्करण प्रकाशित किया जा रहा है।

हमारे अनुरोध को स्वीकार कर श्री रमेशमुनिजी शास्त्री, काव्यतीर्थ, जैन सिद्धान्ताचार्य ने इसका हिन्दी भाषा में शब्दशः अनुवाद किया है। श्री रमेशमुनिजी उपाध्याय-प्रवर श्री पुष्करमुनिजी म० के शिष्य हैं और व्युत्पन्न तथा प्रतिभासम्पन्न विद्वान् हैं। इस अनुवाद की भाषा में प्रवाह और प्रांजलता दोनों ही विद्यमान हैं। मुनिश्री ने व्यस्त रहने पर भी इस ग्रन्थ का हमारे कहने पर अनुवाद किया उसके लिए उनके प्रति हम हार्दिक आभार प्रकट करते हैं।

अंग्रेजी भाषा के अनुवादक हैं स्व० प्रो० कस्तूरचन्दजी ललवानी। ललवानीजी डिपार्टमेन्ट अव ह्यूमनिटिज, आइ आइ टी, खड़गपुर में अर्थशास्त्र के प्राध्यापक थे। अर्थशास्त्र के प्राध्यापक होते हुए भी दर्शन शास्त्र और प्राकृत एवं अंग्रेजी भाषा के भी विद्वान् थे। वे सुसंस्कार सम्पन्न व्यक्तित्व के धनी भी थे। अनुवाद कला में सिद्धहस्त थे। अंग्रेजी अनुवाद के साथ उनकी दशवैकालिक, कल्पसूत्र, उत्तराध्ययन, भगवती सूत्र, आदि अनेक पुस्तकें पूर्व में प्रकाशित हो चुकी हैं। उन्होंने प्रस्तुत अनुवाद भी प्रकाशनार्थ हमें दे दिया था, किन्तु खेद है कि हम इसे समय पर प्रकाशित नहीं कर पाये और इस बीच वे हमारे मध्य से उठ गये, स्वर्गस्थ हो गये; अतः श्रद्धांजलि के साथ हम उनका आभार प्रकट करते हैं।

प्रस्तुत पुस्तक के सम्पादक हैं श्री गणेश ललवानी। श्री गणेशजी कवि हैं, चित्रकार हैं, लेखक हैं, सम्पादक हैं, कथाशिल्पी हैं, उपन्यासकार हैं, साथ ही साधक भी हैं। प्रकृति से अत्यन्त शान्त, सौम्य, निश्छल हैं। वर्तमान में जैन भवन, कलकत्ता में कार्यरत रहते हुए, जैन जर्नल (अंग्रेजी) श्रमण (बंगला) और तित्थयर (हिन्दी) के सम्पादक हैं और शोधार्थियों को सक्रिय सहयोग देते हैं। इन्होंने हमारे कथन पर अत्यधिक व्यस्त रहते हुए भी इस ग्रन्थ का सम्पादन किया, एतदर्थ हम श्री गणेशजी के प्रति भी हार्दिक आभार प्रकट करते हैं।

जैन और बौद्ध साहित्य के लब्ध-प्रतिष्ठ मनीषी राष्ट्र-संत मुनिश्री नगराजजी म०, डी० लिट्, के भी हम आभारी हैं जिन्होंने हमारे अनुरोध को स्वीकार कर, प्रस्तुत ग्रन्थ की भूमिका लिखकर भिजवाने की कृपा की है।

पारसमल भंसाली	म० विनयसागर	देवेन्द्रराज मेहता
अध्यक्ष	निदेशक	सचिव
श्री जैन श्वे० नाकोडा	प्राकृत भारती अकादमी	प्राकृत भारती अकादमी
पार्श्वनाथ तीर्थ, मेवानगर	जयपुर	जयपुर

Publisher's Note

Prakrit Bharati was established in 1977 for the purpose of spreading the teachings of Lord Mahāvīra. At that time illustrated *Kalpa Sūtra* was published as its first offering. Now we have the pleasure of presenting this 50th offering of Prakrit Bharati to our readers, entitled *Aupapātika Sūtra* within such a short span of time of eleven years. With the encouraging response from Eastern and Western Scholars and Readers on its activities and publications and through the assistance of many large-hearted Donors and Institutions, Prakrit Bharati Academy is on its path of progress.

The Aupapātika Sūtra :

Though there is no specific mention of twelve *Upāṅgas* (sub-canons) like that of twelve *Aṅgas* in ancient literature, these are in acceptance since the 12th century A. D. Of the twelve *Upāṅgas, Aupapātika* is the first *Upāṅga Āgama*. According to *Nandī Sūtra* and *Pākṣika Sūtra* it is included in the *Utkālika Sūtras* of exterior *Aṅga* literature except *Āvaśyaka*.

This *Āgama* is called *Uvavāiya Suttaṁ* in Prakrit, the Sanskrit being *Aupapātika Sūtra*. Explaining the word *Aupapātika*, Ācārya Abhayadeva says, '*upapatanaṁ upapātah : deva-nāraka-janma-siddhigamanaṁ ca atastamadhi kṛtya kṛtamadhyayanaṁ aupapātikaṁ*' which means due to narration of the *upapāta*/birth and attainment of liberation of gods and hellish beings in detail this *Āgama* has been called *Aupapātika*. Although written in mixed prose and verse it is mainly a work of Prakrit prose. It is divided into two parts, the first part is called *Samavasaraṇa* and the second *Upapāta*.

The subject-matter of the first part is as follows : The city of Campa was ruled by king Kūṇika (Ajātaśatru). Once Śramaṇa Bhagavān Mahāvīra with his multitude of

disciples, wandering at leisure, arrived at the Pūrṇabhadra *caitya* outside the city. Getting the news of his arrival from his Information Officer, king Kūṇika was immensely pleased. Accompanied by his family, relations and citizens, with all his royal insignia like *chatra* (umbrella), *cāmara* (fly-whisk), *dhvaja* (flag) and followed by the procession of elephants, horses, chariots, palanquins, and with resounding eulogies, pomp and peasantry, the king presented himself before the Lord. After bowing before him with reverence, respect and devotion he joined the assembly and began to worship him. In that assembly, Śramaṇa Bhagavān Mahāvīra gave a discourse on religion of house-holders (*āgāras*) and of monks (*anāgāras*) in his nectar like voice. This discourse was profusely applauded by the king, queen and others present.

Within the framework of this matter are included the description of Campā, Pūrṇabhadra *caitya*, garden, the king Kūṇika, expression of his pleasure on hearing the arrival of Bhagavān Mahāvīra near Campā, physical description of the Lord in detail, the physical and spiritual attainments of his disciples through meditation and penance, description of the procession on way to the Lord and of their obediance, etc. Such absorbing, ornamental, unique and lively description, in poetic style is not available in any other *Āgama*. That is why whenever such description is needed in other *Āgamas* they refer it to *Uvavāiya* : *sesaṁ vaṇṇao jahā uvavāiye.*

The subject-matter of the second part is as follows : After the sermon of the Lord was over his chief disciple Gaṇadhara ascetic Gautama asked him about the *jīvas* and their karmic bondage. Replying to him on rebirths of men and others the Lord covered a wide range of subjects like types of *daṇḍas* (unethical deeds), types of death, of the widows, of lay men and monks, of categories of Bānaprastha ascetics living on the bank of the Ganges, of initiated Śramaṇas, of Brāhmaṇa Parivrājakas, of Kṣatriya Parivrājakas, of Ajivakas and other categories of Śramaṇas with details of their conduct, of seven

ninhavas (distortions). In the end is given the details of Kevalī-transformation, Siddhi-kṣetra and Siddhas (liberated souls). In between is given the detailed information about Ambaḍa Parivrājaka and his seven hundred disciples and their lives. Though Ambaḍa was a Parivrājaka he was a true follower of the Lord. It is also mentioned that Ambaḍa would attain liberation in the next birth.

In this *Upāṅga* are available a number of information about matters political, social and civil so also the lively and absorbing information about matters religious, philosophical and cultural.

The Present Edition :

Many editions of this important *Āgama* have been published along with original text, Sanskrit Commentary and Hindi or Gujarati translation. But there is none with Hindi and English translation. This edition is published with the view that the English and Hindi knowing scholars may have access to the poetic excellence of this work and enjoy it.

Sri Ramesh Muni Shastri, Kavya-tirtha, Jain Siddhantacarya has done the work of Hindi translation at our request. Sri Ramesh Muni, a disciple of Upadhyaya-pravara Sri Pushkar-muniji, is a brilliant scholar. His translation has clarity and flow. Though extremely busy he translated it for us into Hindi, for which we express our gratitude to him

The English translation was done by late Prof. K. C. Lalwani. Sri Lalwani was a Professor of Economics, Department of Humanities, I.I.T., Kharagpur. Though he was a Professor of Economics, he was erudite in philosophy, Prakrit and English also. He had an amiable personality and was expert in translation. He had already translated and published such *Āgama* texts like *Kalpa Sūtra, Daśavaikālika Sūtra, Uttarādhyayana Sūtra* and *Bhagavatī Sūtra*. He did send the translation of *Aupapātika Sūtra* for publication long ago but unfortunately we could not publish it in time and

he left us in the meantime for his heavenly abode. We offer our gratitude and reverence to him.

The Editor of this book is Sri Ganesh Lalwani who is a poet, a painter, an author, an editor, a story-writer, a novelist and also a devotee. He has a quiet, calm and straight-forward disposition. At present he works with Jain Bhawan, Calcutta and also edits Jain Journal (English), Śramaṇa (Bengali) and Titthayara (Hindi). He also helps actively research scholars. At our request he edited this work inspite of his other pre-occupations. We also express our hearty gratitude to him.

We are also indebted to Raṣṭrasant Muni Sri Nagrajji D. Litt., a recognised scholar of Jaina and Buddhist literature for being kind enough to write the foreword of this book at our request.

Parasmal Bhansali President Sri Jain Swetambar Nakoda Parsvanath Tirth, Mevanagar	M. Vinay Sagar Director Prakrit Bharati Academy, Jaipur	D. R. Mehta Secretary Prakrit Bharati Academy, Jaipur

भूमिका

'उववाइय सुत्तं' की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसमें एक ऐतिहासिक राजा का, उसकी राजधानी का तथा भगवान् महावीर के प्रति रही उसकी अगाध भक्ति का सुविस्तृत वर्णन है। वह राजा 'उववाइय सुत्तं' आदि जैन आगमों में 'कूणिक' के नाम से विख्यात् है तथा भारतीय इतिहास के पृष्ठों पर अजातशत्रु के नाम से सर्वविदित है। इतिहासकार मुख्यतः उसे भगवान् बुद्ध के अनुयायी के रूप में ही जानते व मानते हैं। जबकि स्थिति यह है कि जितना विशद् वर्णन उसका जैन आगमों में है व जितनी भक्ति उसकी भगवान् महावीर के प्रति रही है, उतनी अन्य किसी महापुरुष में रही हो, यह अन्य किसी भी साहित्य से प्रमाणित नहीं होता। यहां तक कि भगवान् महावीर की प्रतिदिन की विहार-चर्या जानने के लिए उसने एक अलग से राजकीय विभाग ही बना रखा था। उस विभाग का प्रमुख 'प्रवृत्ति वादुक' कहलाता था। पर, जैन आगमों में उस राजा का नाम कूणिक तथा इतिहास में उसका नाम अजातशत्रु, ऐसा क्यों? उत्तर स्पष्ट है कि बौद्धों के त्रिपिटक साहित्य में उसे मुख्यतः अजातशत्रु ही कहा गया है। प्रश्न उठता है कि विश्व के इतिहासकारों ने उसी नाम को क्यों अपनाया? स्थिति यह है कि बौद्धों ने अपने आधारभूत साहित्य को अंग्रेजी तथा विश्व की अन्य विभिन्न भाषाओं में सुलभ करने की पहल की। यही कारण था कि इतिहासकारों ने कूणिक को अजातशत्रु के नाम से ही जाना तथा मुख्यतः उसे एक बौद्ध राजा के रूप में ही प्रस्तुत किया, जैसा कि वस्तुस्थिति से बहुत परे सिद्ध होता है। जन समाज के लिए यह एक सबक लेने का विषय है कि हमारी निष्क्रियता व अदूरदर्शिता के कारण जैन संस्कृति व जैन इतिहास को कितना सीमित रह जाना पड़ा है।

यही हाल भगवान् महावीर के परम भक्त राजा श्रेणिक का है। बौद्ध त्रिपिटकों में उसे मुख्यतः बिंबिसार कहा गया है तथा भगवान् बुद्ध का परम अनुयायी बताया गया है। तदनुसार विश्व के व भारत के इतिहासकार

उसे बिंबिसार ही मानते हैं तथा सर्व साधारण पाठक भी उसे उसी नाम से पहचानते हैं, जबकि जैन आगमों में श्रेणिक को भिंभिसार एवं तत्सदृश अन्य कई नामों से अभिहित किया गया है, पर, उन्हें सामान्यतः कोई नहीं जानता। अधिकांश इतिहासकार उसे भगवान् बुद्ध का अनुयायी ही दृढ़ता से मानते हैं जैसा कि वह प्रमाणित नहीं होता। गवेषक विद्वानों व इतिहासकारों को मैं दोषी नहीं ठहरा रहा ; क्योंकि जैनागम अर्थात् प्राकृत साहित्य के प्रमाण उनके सामने थे ही कहां ?

यह तो हम सहज ही समझ सकते हैं कि प्राकृत, संस्कृत व हिन्दी जैसी विजातीय भाषाओं पर अधिकार प्राप्त करना पश्चिमी विद्वानों के लिए व उनके माध्यम से गवेषणात्मक काम करना कितना कठिन होता है। फिर भी जैनागमों पर व प्राकृत भाषाओं पर प्रथम शोध कार्य करने का श्रेय हर्मन जैकोबी, आर. पिसल जैसे अनेकानेक पश्चिमी विद्वानों को ही जाता है। भारतीय विद्वानों ने विदेशी भाषाओं का अधिकृत ज्ञान कर उनसे सम्बन्धित संस्कृति व इतिहास का कुछ भी काम किया है ?

खैर, 'गई सो गई, अब राख रही को' की किंवदन्ती के अनुसार अब भी जैनागमों पर धड़ल्ले से विदेशी भाषाओं में काम हो तो भारत के इतिहास में ही नहीं, विश्व के इतिहास में भी बहुत कुछ बदलाव आ सकता है तथा संसार उन आगमों के व जैन धर्म के आध्यात्मिक, सामाजिक व ऐतिहासिक महत्व को समझ सकता है।

'प्राकृत भारती अकादमी' ने प्रत्येक आगम को अंग्रेजी अनुवाद के साथ प्रकाशित करने का बीड़ा उठाया है। यह बहुत प्रशस्त है तथा इसके लिए स्वनामविश्रुत श्री डी० आर० मेहता तथा विद्वद्वरेण्य महोपाध्याय श्री विनय सागरजी बधाई के पात्र हैं। इससे विदेशी विद्वान् प्राकृत तक भी आसानी से पहुंच पायेंगे तथा इससे गवेषणात्मक अनेक नए-नए आयाम खोलेंगे, ऐसी आशा है।

'उववाइय सुत्तं' का आगम साहित्य में स्थान :

अंग, उपांग, मूल, छेद व प्रकीर्णक, इन पांच भेदों में वर्तमान आगम साहित्य की परिकल्पना है। १२ अंग तथा १२ उपांग माने गये हैं।

उववाइयं सुत्तं १२ उपांगों में प्रथम उपांग है, जिसे ओववाइय और औपपातिक भी कहा जाता है। उववाइय प्रथम उपांग है तो आचारांग प्रथम अंग है। सामान्यतया यह अपेक्षा रहती है कि अंग के पूरक उपांग होंगे; क्योंकि अंग भी बारह तथा उपांग भी बारह। फिर क्रमशः उनका सम्बन्ध भी माना जाता है अर्थात् अमुक अंग का अमुक उपांग। 'उप' प्रत्यय मुख्यतः पूरक रूप में ही आता है, जैसे, आचार्य—उपाचार्य, कुलपति—उपकुलपति। पर, १२ अंगों तथा उनके उपांगों में ऐसा कोई तालमेल उनकी विषय-वस्तु से प्रतीत नहीं होता। खींचतान कर वैसा अभिहित करना भी यथार्थ नहीं लगता। वस्तुस्थिति यह लगती है कि प्राचीन काल से चार वेदों के भी चार उपांग माने जाते आ रहे हैं। उनकी भी पूरकता संदिग्ध जैसी ही है अर्थात् खींचतान की-सी रही है। पर, समसामयिक जो भी क्रम चल पड़ता है, उसे दूसरी परम्पराएं भी अपनाती हैं। लगता है, उसी क्रम में जैन शास्त्रकारों ने भी १२ अंगों के साथ १२ उपांगों की संयोजना की है। समसामयिक स्थितियों का एक-दूसरे से कैसे आदान-प्रदान होता है, उसका भी एक सुन्दर उदाहरण यह है।

जैन शास्त्रों में 'जिन' शब्द है, पर अनुयायिओं के लिए कहीं भी जैन शब्द का व्यवहार नहीं हुआ है। पर, जिस युग में संस्कृत का प्रभाव व्यापक हुआ, तब 'जिनो देवता यस्य सः जैनः' अर्थात् जिन हैं, जिसके देवता, वह जैन कहलाता है। आश्चर्य की बात है कि लगभग उसी युग में तथा संस्कृत व्याकरण की उसी शृंखला में बौद्ध, शैव, वैष्णव आदि नाना धर्मों के नाम प्रचलित हो गये, जो अब भी चालू हैं। अस्तु, इस स्थिति में हमें आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि युगीन प्रवाह में अंगों के साथ उपांग शब्द आया हो।

दूसरी बात विषय-संबद्धता न भी हो तो भी जिन-जिन ग्रन्थों को हमें अंग शास्त्र जैसा दर्जा देना हो, उन-उन शास्त्रों को उपांग कहा जाए। आज भी तो आचार्य नहीं, पर, आचार्य जैसा, वह है उपाचार्य। अतः अंग व उपांग का विषय किसी विवाद या लम्बी समीक्षा का नहीं। न ही वह ऐसी किसी संदिग्धता में उलझा हुआ है।

प्रश्न होता है, श्यामाचार्य कृत 'पन्नवणा' जैसे आगमों को बाद देकर 'उववाइय सुत्तं' को ही बारह उपांगों में प्रथम स्थान दिया, इसका क्या कारण? उत्तर स्पष्ट है, यह आगम नगर, वन-खण्ड आदि नाना वर्णनों से भरा है। अन्य आगमों में उन-उन वर्णनों के लिए 'उववाइय सुत्तं' को

देखने के लिए ही संकेत किया गया है। इस स्थिति में इस वर्णन प्रधान आगम को द्वादश उपांगों में प्रथम स्थान देना अनिवार्य ही था। हालांकि यह आगम बहुत बाद में संकलित हुआ है, क्योंकि इसमें सात निन्हवों तक का समुल्लेख है, जिनका कि समय आगमों की विषय-वस्तु व क्रम आदि को लेकर काफी कुछ सम्पादन किया गया है।

विषय प्रधानता :

प्रस्तुत ग्रन्थ में नाना परिणामों, विचारों, भावनाओं तथा साधनाओं से भवान्तर प्राप्त करने वाले जीवों का पुनर्जन्म किस प्रकार होता है, अनेक उदाहरण प्रस्तुत करते हुए हृदयग्राही विवेचन किया गया है। इस आगम की यह विशेषता है कि इसमें नगर, वृक्ष, उद्यान, पृथ्वीशिला, राजा, रानी, मनुष्य-परिषद्, देव-परिषद, भगवान् महावीर के गुण, उनका नख-शिख शरीर, चौंतीस अतिशय, साधुओं के गुण, साधुओं की उपमाएँ, तप के ३५४ भेद, केवली-समुद्घात, सिद्ध, सिद्ध-सुख, आदि के विशद् वर्णन प्राप्त होते हैं।

संक्षेप में यह भी कहा जा सकता है कि किसी को काव्य-ग्रन्थ लिखना है तो उपमाएँ, शब्द-सौन्दर्य, समास आदि के रूप में इस आगम में अगाध सामग्री मिल सकती है। 'भगवान् महावीर कालीन भारत' ग्रन्थ लिखा जाए तो प्रस्तुत आगम में बहुत कुछ आधारभूत हो सकता है; क्योंकि इसमें जन-जीवन के प्रायः सभी विषयों का पर्याप्त वर्णन मिल जाता है। इस ग्रन्थ म कितने विषयों पर प्रकाश डाला गया है, यह तो ग्रन्थ की प्रलम्ब विषय सूची से ही पता लग सकता है।

प्रस्तुत आगम का हिन्दी अनुवाद श्री रमेश मुनिजी 'शास्त्री' ने किया है तथा अंग्रेजी अनुवाद स्व० प्रो० के० सी० ललवानी का है जो कि अंग्रेजी अनुवाद करने में पूर्ण सक्षम एवं दक्ष थे। हिन्दी अंग्रेजी दोनों ही अपने आप में सुस्पष्ट, सुन्दर एवं प्रांजल है। ये मूलानुवाद ही हैं, जो कि पाठकों को आजकल रुचिकर प्रतीत होते हैं। भाव या विस्तार की तो आज के पाठक अपने उर्वर चिन्तन से ही हृदयंगम करना अधिक श्रेयस्कर समझते हैं।

वि० स० २०४५ —मनि नगराज
श्रावणी पूर्णिमा
नई दिल्ली

Foreword

One special characteristic of *Uvavāiya Suttaṁ* is this that it gives a detailed description of a historical king, his capital and his profound devotion towards Bhagavān Mahāvīra. In *Uvavāiya* and in other Jaina *Āgamas* he is known as Kūṇika and in the pages of Indian history as Ajātaśatru. Historians primarily know him as a follower of the Buddha and they regard him as such. But the fact is this that he and his devotion to Mahāvīra has got such a wide coverage in Jaina *Āgamas* which is not available in any other literature for any other personality. Even so that he had established a separate department to report to him about the daily routine of Mahāvīra. The head of that department was known as 'Pravṛtti-Vāduka'. But then why his name is Kūṇika in Jaina *Āgamas* and in history Ajātaśatru ? The answer is simple. Because he was called Ajātaśatru in Buddhist *Tripiṭakas*. Now the question arises why the historians accepted that name ? The answer is again simple. The Buddhists made their source literature available in English and in other European languages. That is why the historians knew Kūṇika as Ajātaśatru and presented him as a follower of the Buddha though that was far from the fact. From this we, the Jainas, should take a lesson that due to our inactivity and lack of foresight the Jaina culture and history could not reach to the outer world.

This can also be said of Śreṇika, a great devotee of Bhagavān Mahāvīra. In Buddhist *Tripiṭakas* he was called Bimbisāra and was depicted as a great follower of the Buddha. Accordingly the historians of India and the world know him as Bimbisāra and consequently the ordinary readers know him

as such while in Jaina *Āgamas* Sreṇika has been called Bhimbhisāra and by some other names almost similar to that. But no body knows of them. Most of the historians regard him as the ardent follower of the Buddha which he was not. I am not blaming the reseracbers or historians, because the Jaina *Āgamas* or Prakrit literature were not available to them.

This we can easily understand that how difficult it is for a foreigner to master a foreign language like Prakrit, Sanskrit and Hindi and then to do research work on them. Still the honour of doing research work on Jaina *Āgamas* and Prakrit goes to foreign scholars like Hermann Jacobi, R. Pischel and others. How many Indians had done research work after mastering a foreign language on the history and culture of that nation ?

Let past be past and think of the present. If we chalk out a crashing programme for the publication of Jaina *Āgamas* in foreign languages many misconceptions will be removed not only from the history of India but also of the world and they will know of the spiritual, social and historical values of the Jaina *Āgamas* and the Jaina religion.

Prakrit Bharati Academy is doing a good job by publishing Jaina *Āgamas* with English translation. For this thanks are due to Sri D. R. Mehta, its Secretary and Mahopadhyay Sri Vinaysagar, its Director. Thus the foreign scholars will get an easy access to Prakrit and that will open new vistas in the field of research.

Place of Uvavāiya Suttam in Āgama Literature:

The present *Āgama* literature consists of *Aṅga, Upāṅga, Mūla, Chheda* and *Prakirṇakas.* There are 12 *Aṅgas* and 12 *Upāṅgas.* *Uvavāiya* is the first amongst the 12 *Upāṅgas.* It is also known as *Ovavāiya* and *Aupapātika.* While *Uvavāiya*

is the first *Upāṅga*, *Ācārāṅga* is the first *Aṅga*. It is naturally expected that the *Upāṅga* should be in supplement to the *Aṅga*, as there are 12 *Aṅgas* and 12 *Upāṅgas*. More so when their relations are acknowledged chronologically, i. e., this *Upāṅga* belongs to that *Aṅga*. The affix '*upa*' generally means next to it, e.g. *Ācārya – Upācārya*, *Kulapati—Upakulapati*. But there is no such affinity in the subject-matter of a *Aṅga* with its *Upāṅga*. It will not be proper if we do so by manipulation. The fact is in ancient times 4 *Vedas* had 4 *Upāṅgas*. Their affinity is also in doubt. Whatever becomes in vogue in one tradition is generally adopted in other traditions. It seems that the Jaina seers added 12 *Upāṅgas* with *12 Aṅgas accordingly. This is a nice example of how things* are exchanged in two contemporary traditions.

In Jaina literature we get the word 'Jina' but nowhere we get 'Jaina' in the sense of a follower of the Jina. But in that age when Sanskrit became dominant the word 'Jaina' became in vogue: *jino devatā yasya saḥ jainaḥ*—one whose god is 'Jina' is Jaina. Strange though it may seem, in that very age words like Bauddha, Śaiva, Vaiṣṇava etc. were coined as derived from the rules of Sanskrit Grammar. These are used even now. So we should not be surprised if *Upāṅgas* are added to *Aṅgas* due to contemporary fashion.

Secondly, it may be like this : Though there is no relation in the subject matter, still if we have to give some books the prestige of an *Aṅga* why not call them *Upāṅga* ? Even today one who is not *Ācārya* but like a *Ācārya*, is called *Upācārya*. So *Aṅgas* and *Upāṅgas* should not be made a subject-matter of dispute or of a lengthy discussion. Nor the matter is as complex as such.

Now the question is why *Uvavāiya* was given the first place in *Upāṅgas* instead of the *Āgama* like *Pannavaṇā* of Śyāmācārya ? The answer is simple. In this *Āgama* we get description of a city, foreststrip, etc. Whenever the necessity arised for such description in any other *Āgama* it was referred to *Uvavāiya*—as in *Uvavāiya*. Under the circumstances they

had no other option but to give this descriptive *Āgama* the first place in the 12 *Upāṅgas*, though it was compiled much later as it mentions seven distortions (*ninhavas*), their time, matter of the *Āgamas* and their chronology being edited to a great extent.

Too Many Subjects :

In this *Āgama*, we get, how a *jīva* is reborn in next life according to transformation, judgement, reflection and austerities, with many illustrations in a very lucid manner. One special characteristic of this *Āgama* is this that it has given descriptions of a city, trees, garden, stone-slab, king, queen, men and gods, merits of Lord Mahavira, description of his body, his 34 supernatural powers (*atiśayas*), merits of the monks, their austerities, description of 354 kinds of austerities, *kevalī*-transformation, of siddhas, their bliss, etc.

In short we may say if one has to write a book of verse he may use its similies, ornate and compound words. If one is desirous to write a book entitled 'India at the time of Mahavira', he may get enough material from this book as it describes almost everything concerning the life of a common man. How many subjects it has touched may be known by a mere glance at its contents.

Hindi translation of the present *Āgama* has been done by Sri Ramesh Muni Shastri and English translation by late Prof. K. C. Lalwani, who was an able and competant translator. Both the Hindi and English translations are clear, lucid and absorbing. These are verbatim translation as are liked by the modern readers. They do not like elaboration and want to dive deep into the matter by themselves.

Śrāvaṇī Pūrṇimā
V. S. 2045
New Delhi

—Muni Nagraj

सूची

CONTENTS

नमो जिणाणं जियभयाणं

उववाइय-सुत्तं

नगरी वर्णन

The City of Campā

ते णं काले णं ते णं समए णं चंपा नाम नयरी होत्था। रिद्ध-त्थिमिय-समिद्धा पमुइय-जण-जाणवया आइण्ण-जण-मणुस्सा हल-सयसहस्स-संकिट्ठ-विकिट्ठ-लट्ठ-पण्णत्त-सेउसीमा कुक्कुड-संडेअ-गाग-पउरा उच्छु-जव-सालि-कलिया गो-महिस-गवेलग-प्पभूता।

उस काल (वर्तमान अवसर्पिणी काल के चतुर्थ आरे के अन्त में) उस समय (जब आर्य सुधर्मा विद्यमान थे) चम्पा नाम की नगरी थी। वह नगरी वैभवशाली, सुरक्षित एवं समृद्ध थी। वहाँ के नागरिक और जनपद के अन्य भागों से आये व्यक्ति प्रमुदित रहते थे। वहाँ की भूमि अधिक से अधिक मानव-जनसंख्या से संकुल बनी रहती थी। हजारों हलों द्वारा जती उसकी समीपवर्ती भूमि सुन्दर मार्ग-सीमा-सी प्रतीत होती थी। वहाँ मुर्गों और छोटे-छोटे सांडों के बहुत से समूह थे। उसके आस-पास की भूमि ईख, जौ एवं धान के पौधों से लहलहाती थी। वहाँ गायों, भैंसों और भेड़ों की प्रचुरता थी।

In that period, at that time, there was a city named Campā. It was rich in its skyline, free from turmoil, and prosperous. The residents of the said city and the people coming to the city were happy so that the city had a vast population. All around-it/in its neighbourhood, there were vast stretches of cultivated land extending over a long distance, always in use, looking

delightful because of the bumper crop, furrowed by hundreds and thousands of ploughs and punctuated by boundary lines which provided necessary ways and bypasses. In that city, there were many swarms of cocks and herds of young bulls. The soil yielded a rich crop of sugarcane, barley and *śāli* paddy, and there were innumerable cows, buffaloes and rams living in the city.

अरिहंत-चेइय-जणवइ-विसण्णि-विट्ठ-बहुले उक्कोडिय-गाय-गंठि-भेय (ग)-भड-तक्कर-खंडरक्ख-रहिया खेमा णिरुवद्दवा ।

वहाँ बड़े-बड़े सुन्दर अर्हत् चैत्यों और साधुजनों के रहने योग्य विविध पौषध-शालाओं का बाहुल्य था । उस नगरी में न तो लांच (रिश्वत) लेने वाले जन थे, न गुप्तरीति से गांठ कतरने वाले ग्रन्थिच्छेदक लुटेरे थे, न जबरदस्ती लूटने वाले डाकू थे, न चोर थे, और न चुंगी वसूल करने वाले जन ही थे। इसीलिये वह नगरी सुख-शान्तिमय एवं उपद्रवशून्य थी ।

The city had many beautiful Arhat temples (*caityas*), and various *upāśrayas* where monks could stay. It was free from bribe-takers, pick-pockets, commodity-lifters, robbers and octroi-collectors. It was free from troubles, even in its tenor of life and free from excesses committed by the rulers.

सुभिक्खा वीसत्थ-सुहावासा अणेग-कोडि-कुडुंबिया-इण्ण-णिव्वुय-सुहा णड-णट्टग-जल्ल-मल्ल-मुट्ठिय-वेलंबय-कहग-पवग-लासग-आइक्खग-लंख-मंख-तूणइल्ल-तुंब - वीणिय-अणेग - तालायराणुचरिया आरामुज्जाण-अगड-तलाग-दीहिय-वप्पिणि-गुणो-ववेया नंदणवण-सन्निभ-प्पगासा ।

वहाँ भिक्षुओं को भिक्षा सुलभ थी, उस नगरी में निवास करने में सब आश्वस्त थे, सुख मानते थे । अनेक श्रेणी के पारिवारिक जनों की घनी बस्ती होते हुए भी वह नगरी शान्तिमय थी । नाटक करने वालों से, नृत्य-क्रिया में निष्णात व्यक्तियों से, रस्सी पर चढ़कर कला दिखाने वालों से,

मल्ल-क्रीड़ा में निपुण पहलवानों से, मुष्टि-प्रहार करने वालों से, स्वयं हँसने वालों और दूसरों को हँसाने वालों से, अनेक प्रकार की कथा कहने वालों से, कूदने वालों अथवा अनेक तैराकों से, वीर रस की गाथाएँ या रास गाने वालों से, शुभ-अशुभ शकुन बताने वालों से, बांस के अग्रभाग पर चढ़कर खेल दिखाने वालों से, अनेक चित्रों को दिखला कर आजीविका चलाने वालों से, तूण नामक वाद्य-विशेष को बजाने वाले बाजीगरों से, वीणा के बजाने में विशेष दक्ष व्यक्तियों से, ताली बजाकर मनोविनोद करने वालों से वह नगरी सेवित थी। क्रीड़ा-वाटिकाओं से, बगीचों से, कुओं से, तालाबों से, वापियों से, जलक्रीड़ा करने वाले स्थानविशेषों से वह नगरी सुशोभित—युक्त थी। इसलिये वह नगरी नन्दन वन के समान प्रतीत होती थी।

In that city, alms was easy to get. It was inhabited by people who were happy and free from fear. Although the city had a very thick population, their relation was never marred by bickerings. The city enjoyed the services of many stage-players, dancers, pope-dancers*, wrestlers, boxers, jesters, readers, swimmers, ballad-singers, omen-readers, dancers on bamboo poles, artists, *tūṇ*-players, *viṇā*-players and *tablā*-players. There were many private garden houses, public parks, wells, ponds, tanks and lakes. The whole thing looked delightful like the Nandana garden in heaven.

उव्विद्ध-विउल-गंभीर-खाय-फलिहा चक्क-गय-मुसुंढि-ओरोह-सयग्घि-जमल-कवाड-घण-दुप्पवेसा धणु-कुडिल-वंक-पागार-परिक्खित्ता कविसीसय-वट्ट-रइय-संठिय-विरायमाणा अट्टालय-चरिय-दार-गोपुर-तोरण-उण्णय-सुविभत्त-रायमग्गा छेयायरिय-रइय-दढ-फलिह-इंद-कीला।

वह नगरी ऊँची, विस्तृत और गहरी खाई से युक्त थी, उसका जो चारों ओर का कोट था, वह चक्र, गदा, गौफिया, जिसके गिराये जाने पर सैंकड़ों व्यक्ति दब-कुचलकर मर जाएँ ऐसे रथ्याद्वार के पास की दोहरी भीत से, अस्त्र-विशेषों से और द्वार के छिद्र-रहित युगल कपाटों से युक्त थी,

* According to some, they are people who sing in praise of the monarch.

अतः वहाँ शत्रुओं का प्रवेश कर पाना दुष्कर था। वह नगरी जिस प्राकार (किला) से परिवेष्टित थी, वह वक्र हुए धनुष से भी अधिक वक्र था। भीतर से शत्रु-सैन्य को देखने आदि हेतु निर्मित बन्दर के मस्तक के गोल आकार के छेदों (कंगूरों) एवं रंग-विरंगों से वह नगरी सुशोभित थी। उसके राजमार्ग, परकोटे पर बनी हुई गुमटियों, परकोटे के मध्य आठ हाथ प्रमाण चौड़े मार्गों, परकोटे में निर्मित लघुद्वारों—बारियों, नगरी के प्रमुख द्वारों, द्वारों पर बहुत उन्नत तोरणों से सुशोभित और सुविभक्त थे। सुयोग्य शिल्पाचार्यों द्वारा निर्मित अर्गला से एवं दोनों किवाड़ों को परस्पर में दृढ़ करने के लिये लौह-निर्मित नुकीले कीलों से इस नगरी के द्वार युक्त थे।

Located on an elevated ground, the city being wide, deep and broad, it was protected by a deep ditch and a double wall by felling which hundreds of people were killed. It had an impressive collection of arms for its defence, such as wheels, maces and guns (*musuṇḍhi*). The defence was strong enough to stop the enemy at a distance. Installed there was *śataghnī* which killed hundreds at a time, and which had a pair of doors free from crack or hole so that the entry of the enemy was rendered impossible. The city was encircled by a wall which bent like a bow, with many observation holes called *kavisīsaga*, because they looked like a monkey's head. There were many covered stands called *aṭṭālaka* where the soldiers could take shelter and fight, and there were roads called *carika*, eight cubits in breadth. Besides, there were many small doors, city doors called *gopura* and the main entrance called *toraṇa* through which neatly passed all the streets, roads and highways of the city. The latches and master nails of the doors were produced by skilled artisans.

विवणि-वणिच्छेत्त-सिप्पियाइण्ण-णिव्वुय-सुहा सिंघाडग-तिग-चउक्क-चच्चर-पणियावण-विविह-वत्थु-परिमंडिया सुरम्मा नरवइ-पविइण्ण-महिवइ-पहा अणेग-वर-तुरग-मत्त-कुंजर-रह-पहकर-सीय-संदमाणीया-इण्ण-जाण-जुंगा विमउल-णव-णलिणि-सोभय-जला पंडुर-

वर-भवण-सण्णिमहिया उत्ताण-णयण-पेच्छणिज्जा पासादीया दरिस-णिज्जा अभिरूवा पडिरूवा ॥१॥

बाजार, व्यापार क्षेत्र आदि के कारण एवं कुम्भकारों, कारीगरों आदि के आवासित होने के कारण वह नगरी सुख-सुविधापूर्ण थी। तिकोने स्थानों, तिराहों, चौराहों, ऐसे स्थानों पर क्रय और विक्रय करने के निमित्त अनेक दुकानों एवं अनेक प्रकार की वस्तुओं से वह नगरी सुशोभित थी, रमणीय थी। राजा की सवारी निकलते रहने के कारण उस नगरी के राजमार्गों पर भीड़ लगी रहती थी। वहाँ के राजमार्ग पर अनेक उत्तम घोड़ों, मदोन्मत्त हाथियों, रथसमूहों, पर्देदार पालकियों, पुरुषप्रमाण पालकियों, गाड़ियों और दो हाथ लम्बे-चौड़े डोलियों का जमघट लगा रहता था। वहाँ जलाशयों का जल भी प्रफुल्लित नवीन-नवीन कमलिनियों से सुशोभित था। सफेदी किए हुए उत्तम भवनों से वह प्रशंसित थी। नगरी की अत्यधिक सुन्दरता निर्निमेष नेत्रों से प्रेक्षणीय थी। चित्त को प्रसन्न करने वाली, दर्शनीय, दर्शक के मन को अपने में रमा लेने वाली, तथा मन में बस जाने वाली थी ॥ १ ॥

Because of the existance of many shops, trade centres and workshops, prosperity was visible everywhere. Triangular parks and places where three roads met, squares and places where four roads met, were graced by shops which offered for sell metalled vessels, and by sundry mansions which were used for residence,—all exceedingly delightful. The city roads were always crowded because of the frequent coming and going by the king (who naturally attracted many people). The roads were also crowded by beautiful horses, elephants, covered palanquins, palanquins for men, chariots and other vehicles. By the side of the roads, at intervals, there were tanks full of blossomed lotuses and *kumuda* flowers. On both sides of the roads, there were rows of beautiful, milk-white buildings. Anyone who set his eyes on the city found it difficult to remove them,—so charming it was to sight. It was pleasant to the mind, delightful to the eyes, fully absorbing the attention of the seer. 1

चैत्य वर्णन

The Temple (Caitya) named Pūrṇabhadra

तीसे णं चंपाए णयरीए बहिया उत्तर-पुरत्थिमे दिसी-भाए पुण्ण-भद्दे णामं चेइए होत्था। चिराईए पुव्व-पुरिस-पण्णत्ते पोराणे सद्दिए वित्तिए कित्तिए णाए सच्छत्ते सज्झए सघंटे सपडागे पडागाइपडाग-मंडिए सलोम-हत्थे कय-वेयद्दिए लाउल्लोइय-महिए गोसीस-सरस-रत्त-चंदण-दद्दर-दिण्ण-पंचंगुलितले उवचिय-चंदण-कलसे चंदण-घड-सुकय-तोरण-पडिदुवार-देस-भाए आसत्तोसत्त-विउल-वट्ट-वग्घारिय-मल्ल-दाम-कलावे।

उस चम्पा नगरी के बाहर उत्तर-पूर्व दिशा भाग (ईशान कोण) में पूर्णभद्र नाम का चैत्य—यक्षालय था। वह बहुत काल से चला आ रहा था। अतीत काल में हुए मनुष्य भी उसकी चर्चा करते थे, जिससे वह सुप्रसिद्ध था। उसकी ओर से आश्रित लोगों को आर्थिक वृत्ति दी जाती थी। वह अपने प्रभाव के कारण विख्यात् था, और जनता द्वारा प्रशंसित था। वह छत्र सहित था, ध्वजा से युक्त था तथा घण्टाओं से गुञ्जायमान था। वह छोटी-छोटी पताकाओं और बड़ी-बड़ी पताकाओं से सजा था। वहाँ मयूर रोममय पिच्छियाँ थी, वेदिकाएँ बनी हुई थीं। वहाँ का आंगन गोमय (गोबर) से लिपा था। उसकी दीवारें खड़ियाँ, कलई आदि से भव्य बनी हुई थीं। उसकी भित्तियों पर गोरोचन तथा सरस लाल चन्दन की प्रचुर मात्रा में पाँचों अंगुलियों और हथेली सहित हाथ की छापें लगाई गई थीं। वहाँ मंगल के निमित्त चन्दन से लिप्त कलश रक्खे थे। उसका प्रत्येक द्वार-भाग चन्दन-घटों और तोरणों से युक्त था। वहाँ भूमि और छत को छूती हुई बड़ी-बड़ी गोल तथा लम्बी-लम्बी फूल-मालाओं का समूह था।

Outside the city of Campā, in the north-eastern direction, was a temple dedicated to a *yakṣa* (spirit). It was named Pūrṇabhadra. Its construction must have taken place long back, and even elderly men of earlier generations spoke unreservedly of its antiquity. Many songs were composed in

deep appreciation of the temple to extol it. The temple had a vast endowment of property. It provided food to its incumbents and administered even justice. It was decorated with a canopy, banner, bells and many flags, big as well as small. It had feathery cushions and elevated platforms (to serve as seats). The ground was neatly besmeared with cowdung and other objects. The walls were made white and bright with chalk and lime. On the walls were printed five fingers or whole palms dipped in *gorocana* and red sandal paste. There were sacred jars placed at appropriate places. Portions of the doors were decorated with small jars and *toraṇa*. Long garlands of flowers connected the ceiling with the ground.

पंच-वण्ण-सरस-सुरहि-मुक्क-पुप्फ-पुंजोवयार-कलिए कालागुरु-पवर-कुंदुरुक्क-तुरुक्क-धूव-मघ-मघंत-गंधुद्धुयाभिरामे सुगंध-वर-गंध-गंधिए गंधवट्टिभूए णड-णट्टग-जल्ल-मल्ल-मुट्ठिय-वेलंवग-पवग-कहग-लासग-आइक्खग-लंख-मंख-तूणइल्ल-तुंव-वीणिय-भुयग-मागह-परिगए वहु-जण-जाणवयस्स विस्सुय-कित्तिए वहुजणस्स आहुस्स आहुणिज्जे पाहुणिज्जे अच्चणिज्जे वंदणिज्जे नमंसणिज्जे पूयणिज्जे सक्कार-णिज्जे सम्माणणिज्जे कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं विणएणं पज्जुवासणिज्जे दिव्वे सच्चे सच्चोवाए सण्णिहिय-पाडिहेरे जाग-सहस्स-भाग-पडिच्छए वहुजणो अच्चेइ आगम्म पुण्णभद्दं चेइयं पुण्णभद्दं चेइयं ॥ २ ॥

पंचरंगी ताजे फूलों के ढेर के ढेर वहाँ चढ़ाये हुए थे, जिससे वह शोभित था। काले अगरु, श्रेष्ठ कुन्दुरुक, लोबान तथा धूप की मघमघाती महक से युक्त गन्ध के द्वारा वहाँ का वातावरण सौरभमय और मनोज्ञ था, उत्कृष्ट सौरभ से सुवासित रहता था, सुगन्धित धुएँ की प्रचुरता से वहाँ गोल-गोल धूममयी गुटिकाएँ (छल्ले)-सी बन रही थीं। वह चैत्य (व्यन्तरायतन) नाटक दिखाने वाले, नाचने वाले, रस्सी आदि पर चढ़कर

कला दिखाने वाले, कुश्ती करने वाले, मुष्टि प्रहार करने वाले, विदूषक, उछलने वाले या नदी आदि को तिरने वाले, कथावाचक, रासकों के आलापक, भविष्य बताने वाले, बाँस के अग्रभाग पर खेल दिखाने वाले, चित्रपट दिखलाने वाले, तूण नामक वाद्य बजाने वाले, तुम्ब नामक वीणा बजाने वाले, पुजारी अथवा भोगी—विलासी, भाट, यशोगान के गायकों से युक्त था। बहुत से नागरिकों और जनपदवासियों में उसकी कीर्ति फैली हुई थी। बहुत से दानियों और पूजकों के लिये वह आह्वान करने योग्य, विशिष्ट रीतियों (विधान) से आह्वान करने योग्य, चन्दन आदि सुगन्धित द्रव्यों से अर्चना करने योग्य, स्तुति द्वारा वन्दन करने योग्य, नमस्कार करने योग्य, पूजा करने योग्य, सत्कार करने योग्य, मन से सम्मान देने योग्य, कल्याण, मंगल, देव और इष्ट (दैवी शक्ति) के रूप में विनयपूर्वक विशेष रूप से उपासना करने योग्य, दिव्य, सत्य और अपने आराधकों को सफल करने वाला या वांछित उपायों को सत्य बनाने वाला, दिव्य प्रातिहार्य—अतिशय व अतीन्द्रिय प्रभाव से युक्त, हजारों प्रकार की उपासना अर्थात् पूजा को चाहने वाला था। बहुत से जन पूर्णभद्र चैत्य पर आकर के उस पूर्णभद्र चैत्य की अर्चना—पूजा करते थे॥ २॥

The temple was decorated with heaps of flowers of sundry colours which had grace and fragrance. It was delighted by the burning of the best of incences like *agara*, *kundurukka* and *turukka*. It was always scented with delightful essences. The profusion of incensed smoke was so heavy that as it moved up, it created circles. The temple was always visited by stage-players, dancers, till *vīṇā*-players, charmers and bards. Its great fame spread far and wide both among city-dwellers and country-dwellers from mouth to mouth. To many, the temple was worthy to be remembered, worthy to be recalled in an appropriate manner, worthy to be decorated with scented objects like sandal paste, worthy of singing in praise, worthy to be honoured by bending the limbs, worthy to be offered flowers and clothes, worthy to be worshipped with devotion, worthy to be revered as the embodiment of what is good, of welfare, of divinity, of one's

supreme deity, as a giver of success in desired objects/ways, whose worship never went in vain, which was endowed with supernatural powers, worthy to be worshipped in a thousand ways. Many people flocked to offer worship to the deity at the temple named Pūrṇabhadra. 2

वनखंड वर्णन

The Forest Strip

से णं पुण्णभद्दे चेइए एक्केणं महया वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते । से णं वणसंडे किण्हे किण्होभासे नीले नीलोभासे हरिए हरिओभासे सीए सीओभासे णिद्धे णिद्धोभासे तिव्वे तिव्वोभासे किण्हे किण्हच्छाए नीले नीलच्छाए हरिए हरियच्छाए सीए सीयच्छाए णिद्धे णिद्धच्छाए तिव्वे तिव्वच्छाए घणकडिअ-कडिच्छाए रम्मे महामेहणिकुरंबभूए ।

वह पूर्णभद्र चैत्य एक विशाल वनखण्ड से, सब ओर से—दिशा-विदिशा में चारों ओर से घिरा हुआ था। वह वनखण्ड काला, काली आभावाला, नीला, नीली आभावाला, हरा, हरी आभावाला, (लताओं, पौधों और वृक्षों की प्रचुरता के कारण) वह (वनखण्ड) स्पर्श में शीतल, शीतल आभावाला, स्निग्ध, स्निग्ध आभावाला, सुन्दर वर्ण आदि उत्कृष्ट गुणों से युक्त, तीव्र आभावाला था। वह वनखण्ड कालापन, काली छाया, नीलापन, नीली छाया, हरापन, हरी छाया, शीतलता, शीतल छाया, स्निग्धता, स्निग्ध छाया, तीव्रता और घनी छाया से युक्त था। वृक्षों की शाखाओं के परस्पर चढ़ाई के समान गुंथ जाने के कारण वह सघन (गहरी) छाया से युक्त था। उसका दृश्य, मानों बड़े-बड़े बादलों की घिरी हुई घटाओं के समान रमणीय था।

The said Pūrṇabhadra temple was surrounded in all directions and sub-directions by a vast forest strip. The look of

the forest as well as its glitter were black, blue and green, cool and bright, and exciting. The branches of the trees were so thickly interwoven that the forest had shade everywhere. The whole thing looked as delightful as a vast cloud.

ते णं पायवा मूलमंतो कंदमंतो खंधमंतो तयामंतो सालमंतो पवालमंतो पत्तमंतो पुप्फमंतो फलमंतो बीयमंतो अणुपुव्व-सुजाय-रुइल-वट्टभाव-परिणया एक्कखंधा अणेगसाला अणेग-साह-प्पसाह-विडिमा अणेग-नर-वाम-सुप्पसारिअ-अग्गेज्झ-घण-विउल-वद्ध-खंधा अच्छिद्दपत्ता अविरलपत्ता अवाईणपत्ता अणईअपत्ता निद्धूय-जरढ-पंडु-पत्ता-णव-हरिय-भिसंत-पत्त-भारंधकार-गंभीर-दरिसणिज्जा उव-णिग्गय-णव-तरुण-पत्त-पल्लव-कोमल-उज्जल-चलंत-किसलय-सुकुमाल-पवाल-सोहिय-वरंकुरग्ग-सिहरा।

उस वनखण्ड के वृक्ष मूल—जड़ों का ऊपरी भाग, कन्द—भीतरी भाग (जहाँ से जड़ें फूटती हैं), स्कन्ध—तनें, छाल, शाखा, प्रवाल—पत्तों की अंकुरित अवस्था, पत्र, पुष्प, फल और बीज से सम्पन्न थे। वे क्रमशः आनुपातिक रूप में सुन्दर और गोलाकार में परिणत हो गये थे। अर्थात् वे विकसित थे। उनके एक-एक स्कन्ध (तना) और अनेक शाखाएँ थीं। अनेक शाखाओं और प्रशाखाओं के मध्य भाग विस्तार लिये हुए थे। अनेक व्यक्तिओं द्वारा फैलाई हुई भुजाओं से भी न पकड़े जा सकते थे—घेरे नहीं जा सकते थे, ऐसे उनके सघन, विस्तृत और सुघड़ तने थे। उनके पत्ते छिद्र रहित, घने अर्थात् एक दूसरे पर छाये हुए, अधोमुख अर्थात् नीचे की ओर लटकते हुए, और उपद्रव (चूहे, टिड्डी आदि) से रहित थे। उनके पुराने—जर्जर, पीले पत्ते झड़ गये थे। नये, हरे और चमकीले पत्तों के भार (सघनता) से वहाँ अन्धेरा और गम्भीरता दर्शनीय थी, दिखाई देती थी। निकलते हुए नवीन, परिपुष्ट पत्तों, ताम्र वर्ण के कोमल, उज्ज्वल, हिलते हुए किसलयों (पूरी तरह से नहीं पके हुए पत्तों), ताम्र वर्ण के नये पत्तों से, उन वृक्षों के उच्च शिखर (अग्रभाग) शोभित थे।

The trees in the said forest were well developed in their roots, lower trunks, upper trunks, barks, branches, sprouts, leaves, flowers, fruits and seeds. They were luxuriantly grown, looked beautiful and round in shape. A single trunk had many branches. They were rich in their branches and twigs. They were so thick and well-grown that it was difficult to contain them in the extended arms of many men together. Their leaves had no holes, sufficiently thick, capable to stand the gust of wind and bore no mark of damage from factors indigenous and extraneous. The old yellow leaves dropped on the ground. Because of the profusion of green and bright leaves, the ground underneath looked shady and grave. On the top, the trees wore new, fresh and young leaves, soft, bright and waving, fresh, new sprouts of coral hue.

णिच्चं कुसुमिया णिच्चं माइया णिच्चं लवइया णिच्चं थवइया णिच्चं गुलइया णिच्चं गोच्छिया णिच्चं जमलिया णिच्चं जुवलिया णिच्चं विणमिया णिच्चं पणमिया णिच्च कुसुमिय-माइय लवइय-थवइय - गुलइय - गोच्छिय - जमलिय - जुवलिय - विणमिय-पणमिय-सुविभत्त-पिंड-मंजरि-वडिंसयधरा ।

उनमें कई वृक्ष ऐसे थे, जो सदा फूलते थे। कई हमेशा मंजरियों से युक्त थे। कई नित्य पत्र-भार से झूमते थे। कई फूलों के गुच्छों से नित्य लदे रहते थे। कई लता-कुंजों से नित्य शोभित थे। कई पत्तों के गुच्छों से सदा युक्त थे। कई वृक्ष ऐसे भी थे, जो नित्य समश्रेणिक अर्थात् एक कतार में स्थित थे। कई सदा युगल—दो-दो की जोड़ी के रूप में अवस्थित थे। कई वृक्ष पुष्प, फल आदि के भार से सदा बहुत झुके हुए थे। कई ऐसे वृक्ष थे, जो नित्य विशेष रूप से नमे हुए थे। वे वृक्ष विविध-प्रकार की अपनी-अपनी विशेषताएँ लिये हुए सुन्दर रूप से लुम्बियों और मंजरियों के रूप में मानों सेहरे—कलंगियों को धारण किये रहते थे।

Some of these trees yielded flowers throughout the year, some were always laden with buds, some were ever bent low

on account of the weight of leaves, some had ever thick bunches of flowers, some thick bunches of leaves, ever pleasant, some had creepers on, some ever existent in a single array, some always standing as couples, some were always bent low due to the weight of fruits and flowers, while some looked as if they had just started to bend. The last ones were always decorated with tiara-like buds and flowers.

सुय-वरहिण-मयण-साल-कोइल-कोहंगक-भिंगारक-कोंडलक-जीवंजीवग-णंदीमुह-कविल-पिंगलक्खग-कारंड-चक्कवाय-कलहंस-सारस-अणेग-सउणगण-मिहुण-विरइय-सद्दुण्ण-इय-महुर-सर-णाइए सुरम्मे संपिंडिय-दरिय-भमर-महुकरि-पहकर-परिलिन्त-मत्त-छप्पय-कुसुमासव-लोल-महुर-गुमगुमंत-गुंजंत-देसभागे अब्भंतर-पुप्फ-फले-बाहिर-पत्तोच्छण्णे पत्तेहि य पुप्फेहि य उच्छण्ण-पडिवलिच्छण्णे साउफले निरोयए अकंटए णाणाविह-गुच्छ-गुम्म-मंडवग-रम्म-सोहिए विचित्त-सुह-केउभूए वावी-पुक्खरिणी-दीहियासु य सुनिवेसिय-रम्म-जालहरए ।

तोते, मोर, मैना या कावर, कोयल, कोभगक, भिंगारक, कोण्डलक, चकोर, नन्दिमुख, तीतर, बटेर, बत्तख, चक्रवाक, कलहँस, सारस प्रभृति पक्षियों के जोड़ों के द्वारा की जाती शब्दों (आवाज) की उन्नत एवं मधुर स्वरों के आलाप से वे वृक्ष गुंजित—प्रतिध्वनित थे, सुरम्य प्रतीत होते थे, वहाँ स्थित मदमाते भंवरों एवं भ्रमरियों या मधुमक्खियों के समूह एकत्र होकर लीन हो जाते थे और पुष्परस (मकरन्द) के लोभ से अन्यान्य स्थानों से आये हुए सभी जाति के भँवरे मस्ती से गुन-गुन कर रहे थे, जिससे वह स्थान गुंजायमान था। वे वृक्ष भीतर से फूलों एवं फलों से आपूर्ण थे तथा बाहर से पत्तों से आवृत्त—ढंके हुए थे, वे पत्तों और फूलों से सर्वथा (पूरे) लदे हुए थे। उनके फल मीठे, रोगरहित, निष्कण्टक थे। वे तरह-तरह के फूलों के गुच्छों, लता-कुंजों तथा मण्डपों के द्वारा शोभित थे, रमणीय (सुहावने) प्रतीत होते थे। वहाँ विभिन्न प्रकार की सुन्दर ध्वजाएँ फहराती थीं। चौकोर, गोल और लम्बी बावड़ियों में जाली—झरोखेदार सुन्दर ढंग से भवन बने हुए थे।

The forest strip always resounded with the ever-growing, delightful chirping and yell of birds like the parrot, peacock, *mainā*, cuckoo, *kohaṅgaka, bhingāraka, koṇḍalaka, jībamjībaka, nandimukha, kapila, piṅgalākṣa,* crane, skylark, swan heron and many others, all in couples. This imparted an extra charm to the forest strip. Excited black drones and bees of all species got settled there collecting honey from the flowers. Inwardly, the trees were laden with fruits and flowers and outwardly, they were covered with leaves. In other words, their load was full (load of fruits, sweet, free from germs, and without thorns. The forest strip took extra grace from the presence of shrubs, creepers and bushes.) Inside the forest, there were tanks, square, round and rectangular in shape, with delightful mansions inside, which had on them fluttering auspicious banners in all hues, with beautiful carvings and networks.

पिंडिम-णीहारिम-सुगंधि-सुह-सुरभि-मणहरं च महया गंधद्धणि मुयंता णाणाविह-गुच्छ-गुम्म-मंडवक-घरक-सुह-सेउकेउ-बहुला अणेग-रह-जाण-जुग्ग-सिबिय-पविमोयणा सुरम्मा पासादीया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा ॥३॥

वह वृक्ष-समूह दूर-दूर तक जाने वाली सौरभ के संचित परमाणुओं की सुन्दर महक के द्वारा मन को हर लेता था। क्योंकि, वह आत्यन्तिक तृप्तिकारक विपुल सुगन्ध छोड़ता था। वहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार के अनेकानेक फूलों के गुच्छ, लता-कुंज, मण्डप, विश्राम स्थान, सुखप्रद स्थान, या क्यारियों की पालियाँ एवं ध्वजाओं का बाहुल्य था। वे वृक्ष अनेक रथों, वाहनों, डोलियों, पालखियों के ठहराने के स्थान थे। इस प्रकार वे वृक्ष रमणीय, मनोरम, दर्शनीय, मन को अपने में रमा लेने वाले, तथा मन में बस जाने वाले थे ॥३॥

The trees attracted the mind with auspicious smell which spread far and wide, and this they continued to emit all the while. The forest had a rich collection of trees, shrubs, bushes,

creepers, of platforms, buildings, roads and flower-beds. There were plenty of banners unfurled. There was adequate space in it, duly maintained for the parking of chariots, vehicles and palanquins, big as well as small. In this manner, the forest strip gave joy to all ; it was delightful to the eyes, pleasant to the mind, immensely attracting. 3

अशोक वृक्ष वर्णन

The Aśoka Tree

तस्स णं वणसंडस्स वहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एक्के असोगवरपायवे पण्णत्ते। कुस-विकुस-विसुद्ध-रुक्ख-मूले मूलमंते कंदमंते जाव...पविमोयणे सुरम्मे पासादीए दरिसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे ।

उस वन खण्ड के ठीक वीच के भाग में एक विशाल एवं सुन्दर अशोक वृक्ष था। उसकी जड़ें दर्भ (डाभ) तथा अन्य प्रकार के तृणों से रहित विशुद्ध थी। वह वृक्ष मूल—जड़ों के ऊपरी भाग, कन्द—भीतरी भाग, तना, छाल, शाखा, अंकुरित होते पत्तों, पत्रों, पुष्पों, फलों और वीजों से सम्पन्न था। वह क्रमशः आनुपातिक रूप में सुन्दर, गोलाकार और विकसित था और सभी गुणों से युक्त था। वह वृक्ष अत्यधिक विशाल होने से उसके नीचे अनेक रथों, डोलियों और पालखियों के ठहराने के लिये पर्याप्त स्थान था। इस प्रकार वह सुन्दर अशोक रमणीय, चित्त को प्रसन्न करने योग्य, देखन योग्य, मन को अपने में रमा लेने वाला और मन में वस जाने वाला था।

About the centre of the said forest strip, there stood a huge and auspicious *aśoka* tree. The ground where stood the tree was free from *kuśa* (*darbha*) and other grass. All the ten parts of the tree from root, till seed, as aforesaid, were graceful, till delightful to the eyes, pleasant to the mind, immensely attracting.

से णं असोग-वर-पायवे अण्णेहि बहूहिं तिलएहिं लउएहिं छत्तोवेहि सिरीसेहि सत्तवण्णेहि दहिवण्णेहि लोद्धेहि धवेहि चंदणेहि अज्जुणेहि णीवेहि कुडएहि सव्वेहि फणसेहि दाडिमेहि सालेहि तालेहि तमालेहि पियएहि पियंगूहि पुरोवगेहि रायरुक्खेहिं णंदिरुक्खेहि सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते। ते णं तिलया लवइया जाव...णंदिरुक्खा कुस-विकुस-विसुद्ध-रुक्खमूला मूलमंतो कंदमंतो, एएसिं वण्णओ भाणियव्वो जाव...सिबिय-पविमोयणा सुरम्मा पासादीया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा।

वह श्रेष्ठ अशोकवृक्ष तिलक, लकुच, छत्रोप, शिरीष, सप्तपर्ण, दधिपर्ण, लोध्र, धव, चन्दन, अर्जुन, नीप, कुटज, कदम्ब, सव्य, पनस, दाडिम, शाल, ताल, तमाल, प्रियक, प्रियंगु, पुरोपग, राजवृक्ष, नन्दिवृक्ष इन अनेक अन्य वृक्षों से सब ओर—चारों ओर से घिरा हुआ था। वे तिलक, लकुच (से लगाकर) नन्दि (तक के) वृक्षों की जड़ें, डाभ तथा दूसरे प्रकार के तृणों से रहित विशुद्ध, उनके मूल, कन्द (इन वृक्षों का वर्णन—सिविय पविमोयणा तक कहना चाहिये) आदि दशों अंग उत्तम कोटि के थे। इस प्रकार वे वृक्ष रमणीय, मन को प्रसन्न करने वाले, देखने योग्य, मन को अपने में रमा लेने वाले और मन में बस जाने वाले थे।

The *aśoka* tree stood in the company of many others which surrounded it. These were: *tilaka, lakuca, chatropa, śirīṣa, saptaparṇa, dadhiparṇa, lodhra, dhava, candana, arjuna, nīpa, kuṭaja, kadamba, savya, panasa, dāḍimba, śāla, tāla, tamāla, priyaka, priyaṅgu, puropaga, rāja* and *nandī*. The ground on which these trees stood was also free from *kuśa* and other grass, till delightful to the eyes, pleasant to the mind, immensely attracting.

ते णं तिलया जाव...णंदिरुक्खा अण्णेहिं बहूहिं पउमलयाहिं णागलयाहिं असोअलयाहिं चंपगलयाहिं चूयलयाहिं वणलयाहिं

वासंतियलयाहिं अइमुत्तयलयाहिं कुंदलयाहिं सामलयाहिं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ता। ताओ णं पउमलयाओ णिच्चं कुसुमियाओ जाव...वडिंसयधरीओ पासादीयाओ दरिसणिज्जाओ अभिरूवाओ पडिरूवाओ ॥४॥

वे तिलक, नन्दिवृक्ष आदि पादप अन्य बहुत सी पद्म-लताओं, नाग लताओं, अशोक लताओं, चम्पक लताओं, सहकार लताओं, वन (पीलुक) लताओं, वासन्ती लताओं, अतिमुक्तक लताओं, कुन्द लताओं और श्याम लताओं से सब ओर—चारों ओर से घिरे हुए थे। वे पद्म आदि लताएँ हमेशा (सब ऋतुओं में) फूलती थीं (मंजरियों, पत्तों, फूलों के गुच्छों, गुल्मों तथा पत्तों के गुच्छों से युक्त थीं, वे समश्रेणिक—एक कतार में तथा युगल—दो-दो की जोड़ी के रूप में सदा अवस्थित थीं, यों विविध प्रकार से अपनी-अपनी विशेषताएँ लिये हुए वे लताएँ अपनी लुम्बियों तथा मंजरियों के रूप में मानों शिरोभूषण सेहरें धारण किये रहती थीं)। वे चित्त को प्रसन्न करने वाली, देखने योग्य, मन को अपने में रमा लेने वाली, तथा मन में बस जाने वाली थीं ॥४॥

Using the aforesaid trees as their support, and covering them from all sides, there had grown sundry creepers. They were : *padma*, *nāga*, *aśoka*, *campaka*, *sahakāra*, *vana* (*pīluka*), *vāsantī*, *atimuktaka*, *kunda* and *śhyāma* (*priyaṅgu*). These creepers were always and all the while decorated with tiara-like buds and flowers, till they were delightful to the eyes, pleasant to the mind, immensely attracting. 4

शिलापट्टक वर्णन

The Stone Slab

तस्स णं असोगवरपायवस्स हेट्ठा ईसिं खंधसमल्लीणे एत्थ णं महं एक्के पुढवि-सिलापट्टए पण्णत्ते। विक्खंभायाम-उस्सेह-सुप्पमाणे किण्हे अंजण-घण-किवाण-कुवलय-हलधर-कोसेज्जागास-केस-कज्ज-लंगी-खंजण-सिंगभेद-रिट्ठय-जंबूफल-असणक-सणबंधण-णीलुप्पल-पत्त-

निकर-अयसि-कुसुम-प्पगासे मरकत-मसार-कलित्त-णयण-कीयरासि-वण्णे णिद्धघणे अट्ठसिरे आयंसय-तलोवमे सुरम्मे ईहामिय-उसभ-तुरग-नर-मगर-विहग-वालग-किण्णर-रुरु-सरभ-चमर-कुंजर-वणलय-पउमलय-भत्तिचित्ते आईणग-रूय-बुरणवणीत-तूल-फरिसे सीहासण-संठिए पासादीए दरिसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे ॥ ५ ॥

उस सुन्दर अशोक वृक्ष के नीचे, उसके तने के कुछ समीप पृथ्वी का एक बड़ा शिलापट्टक (चबूतरे की ज्यों जमी हुई मिट्टी पर स्थापित) था। उसकी लम्बाई, चौड़ाई और ऊँचाई समुचित प्रमाण से युक्त थी। वह काला था। अंजन—वृक्ष विशेष, बादल, कृपाण, नीलकमल, बलदेव के वस्त्र, आकाश, केश, काजल के घर, खंजन पक्षी, भैंस के सींग के भीतरी भाग, रिष्टक रत्न, जामुन के फल, बीयक नामक वनस्पति, सन के फूल के डंठल, नीले कमल के पत्तों की राशि—समूह, और अलसी के फूल के समान उसकी (शिलापट्टक की) प्रभा थी। इन्द्रनील मणि, कसौटी, कमर पर बाँधने के चमड़े के पट्टे, आँखों की कनीनिका (तारे) इनके पुंज के समान उसका वर्ण था। वह अत्यन्त स्निग्ध—चिकना था। उसके अष्टकोण—आठ कोने थे। वह दर्पण के तल के समान चमकीला था। भेड़िये, बैल, घोड़े, मनुष्य, मगर, पक्षी, सर्प, किन्नर, रुरु, अष्टापद, चमर, हाथी, वनलता तथा पद्मलता के चित्र उस पर बने हुए थे। उसका स्पर्श मृगछाला, कपास, बूर, मक्खन और आक की रुई के समान मृदु—कोमल था। वह आकार में सिंहासन के समान था। इस प्रकार वह शिलापट्टक प्रसन्नकारक, देखने योग्य, मन को अपने में रमा लेने वाला और मन में बस जाने वाला था ॥५॥

Beneath the very fine *aśoka* tree, not far from where it touched the ground, there was a very big slab of stone. It had a standard length, breadth and height. It was black in colour, and had the glaze of *añjana*, a cloud, a short sword (*kṛpāṇa*), blue lotus, Baladeva's robe, the sky, hairs, a house of collyrium, *khañjana*, the inner portion of a horn, a stone called *riṣṭaka*, the black berry, a plant named *viyaka*, the stalk of

śana flower, leaves of blue lotus and the *alasī* flower. Its colour compared with stones like *marakata* and *indranīla*, a belt called *kaṭitra* and the eye-balls. It was very polished, eight-cornered, shining like the surface of the mirror, beautiful. The slab had carved on it on all sides the figures of *īhā* deer, oxen, horses, men, crocodiles, birds, snakes, *kinnaras*, *rurus*, *sarabhas*, *camaras*, elephants, forest creepers and lotus creepers. Its touch was as soft as that of deer skin, cotton fibre, sawdust, butter, or *ākanda* fibre. It had the shape of a throne/seat. It was pleasant, worthy to be seen, beautiful and never to be forgotten. 5

राजा का वर्णन

King Kūṇika

तत्थ णं चंपाए णयरीए कूणिए णामं राया परिवसइ । महया-हिमवंत-महंत-मलय-मंदर-महिंद-सारे अच्चंत-विसुद्ध-दीह-राय-कुल-वंस-सुप्पसूए णिरंतरं रायलक्खण-विराइअंगमंगे बहुजण-बहुमाणे पूजिए सव्वगुण-समिद्धे खत्तिए मुइए मुद्धाहिसित्ते माउ-पिउ-सुजाए ।

उस चम्पा नगरी में कूणिक नामक राजा रहता था । वह महा हिमवान् पर्वत के समान महान् और मलय, मेरु एवं महेन्द्र पर्वत के समान प्रधान—विशिष्ट था । वह अत्यन्त विशुद्ध अर्थात् दोष रहित, प्राचीन राजकुल के रूप में प्रसिद्ध वंश में खुशहाल में उत्पन्न हुआ था । उसके अंग पूर्णतः राजलक्षणों अर्थात् राजोचित-लक्षणों से सुशोभित थे । वह बहुत से मनुष्यों द्वारा अति सम्मानित एवं पूजित था, जनता को संकट—आक्रमण से बचाता था, और वह प्रसन्न रहता था । उसका वैधानिक रूप से राज्याभिषेक अर्थात् राजतिलक हुआ था । वह माता-पिता से उत्पन्न उत्तम पुत्र था ।

The city of Campā was ruled over by a king named Kūṇika. He was as noble as the Himalayas, and great as Mounts

Malaya, Meru and Mahendra. He was born in a royal household which was noble and well-known over a long period of time. His limbs bore the auspicious marks of a monarch. He was respected and adored by many. He was rich in merits, a true kṣatriya or defender. Always delightful, he was constitutionally accepted as a monarch, a worthy son of his parents.

दयपत्ते सोमंकरे सीमंधरे खेमंकरे खेमंधरे मणुस्सिदे जणवयपिया जणवयपाले जणवय-पुरोहिए सेउकरे केउकरे णरपवरे पुरिसवरे पुरिस-सीहे पुरिसवग्घे पुरिसासीविसे-पुरिसपुंडरोए पुरिसवर-गंधहत्थी अड्ढे दित्ते वित्ते विच्छिण्ण-विउल भवण-सयणासण-जाण-वाहणाइण्णे बहुधण-बहुजाय-रूव-रयते आओग-पओग-संपउत्ते विच्छड्डिअ-पउर-भत्तपाणे बहु-दासी-दास-गो-महिस-गवेलग-प्पभूते पडिपुण्ण जंत-कोस कोट्ठागाराउधागारे।

वह करुणाशील, मर्यादाओं की स्थापना करने वाला, मर्यादाओं का पालन करने वाला, उपद्रव रहित स्थितियाँ उत्पन्न करने वाला, तथा निरुपद्रव अवस्था को स्थिर बनाये रखने वाला था। वह (परम ऐश्वर्य के कारण) मनुष्यों में इन्द्र के समान था। वह जनता का हितैषी होने के कारण पितृतुल्य, जनता का रक्षक होने के कारण प्रतिपालक, शान्ति करने के कारण हितकारक—कल्याणकारक, मार्गदर्शक, अद्भुत कार्य करके आदर्श उपस्थापक था। वह वैभव, सेना, शक्ति आदि की अपेक्षा मनुष्यों में श्रेष्ठ, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष रूप चार पुरुषार्थों में उद्यमशील पुरुषों में श्रेष्ठ—प्रधान, पराक्रम की अपेक्षा पुरुषों में सिंहतुल्य, रौद्रता में बाघ के समान, अपने क्रोध को सफल बनाने के सामर्थ्य में सर्प के समान था। वह पुरुषों में श्रेष्ठ कमल—सुखार्थी, सेवाशील व्यक्तियों के लिये श्वेत कमल के समान सुकुमार था। वह पुरुषों में गन्धहस्ती के समान था, अर्थात् विरोधी राजा रूपी हाथियों का मान भंजक था। वह समृद्ध, दर्पवान्—प्रभावयुक्त और प्रसिद्ध था। उसके यहाँ बड़े-बड़े अनेकों भवन, सोने-बैठने के आसन, रथ, घोड़े आदि वाहनों की अधिकता थी, उस

के पास वहुत सारा धन—विपुल सम्पत्ति, सोना और चाँदी थी। वह अर्थ लाभ के उपायों का प्रयोक्ता था, अर्थात् धन-वृद्धि के लिये अनेक प्रकार से प्रयत्नशील था। वहुत से व्यक्तियों के भोजन-दान के पश्चात् विपुल भोजन-पान अपेक्षी-जनों में बाँट दी जाती थी। उसके यहाँ अनेक दासियों, दास, गायें, भैंसों की अधिकता थी। उसके यहाँ यन्त्र, खजाना, अन्न आदि वस्तुओं का भण्डार, शस्त्रागार अति समृद्ध था।

He had all the finer virtues like compassion for others. He upheld the tradition and defended it. He gave peace to his realm and he ruled in peace. He was like an Indra among men, the parent of the country, the protector of the country, the priest of the country, the leader of the country, the creator of ideals, the succour of best men. He was the best among men, a lion among men, a tiger among men, a cobra among men, a white lotus among men, a *gandha*-elephant among men. Thus he was prosperous, valorous and famous, the master of many a mansion, many a cushion, many vehicles and animals. He commanded a huge treasure of gold and silver, and always enlarged his treasure through diverse measures. His kitchen always cooked a huge quantity of food which left a surplus after dining. He was served by many valets and attendants, and possessed a vast collection of cows, buffaloes and sheep. Besides, he had a huge collection of instruments, treasures, grains and arms.

वलवं दुब्बल-पच्चामित्ते ओहयकंटयं निहयकंटयं मलिअकंटयं उद्धियकंटयं अकंटयं ओहयसत्तुं निहयसत्तुं मलियसत्तुं उद्धियसत्तुं निज्जियसत्तुं पराइअसत्तुं ववगय-दुब्भिक्खं मारिभय-विप्पमुक्कं खेमं सिवं सुभिक्खं पसंत-डिंब-डमरं रज्जं पसासेमाणे विहरइ ॥६॥

उसके पास प्रभूत सेना थी। उसने अपने राज्य के सीमान्त प्रदेश के राजाओं अथवा पड़ोसी राजाओं को दुर्बल अर्थात् शक्तिहीन बना दिया था।

उसने अपने गोत्र में उत्पन्न प्रतिस्पर्द्धियों—विरोधियों का विनाश कर दिया था। उनकी समृद्धि को छिन लिया था। उनका मान भंग कर दिया था। और उन्हें देश से निकाल दिया था। अतएव उसका कोई भी सगोत्र-विरोधी शेष नहीं रहा था। उसी प्रकार उसने अपने गोत्र-भिन्न विरोधियों—शत्रुओं को भी विनष्ट कर दिया था। उनका धन छिन लिया था। उनके मान को भंग कर दिया था और उन्हें अपने देश से निर्वासित कर दिया था और उसने अपने प्रभाव से उन्हें जीत लिया था, पराजित कर दिया था। इसलिये वह राजा दुर्भिक्ष, महामारी के भय से विशेषरुपेण मुक्त—उपद्रव-रहित, क्षेम-मय, कल्याणमय, सुभिक्षु-युक्त, राजकुमार आदि कृत विघ्न-रहित राज्य का प्रशासन करता हुआ रहता था ॥६॥

He had a vast army. He had reduced to subjugation all the rulers beyond his frontiers. He had liquidated all the rival claimants to the throne inside the family, or reduced them to abject penury, or deprived them of their royal status, or dismissed them into exile, so that there was none in the line who could ever challenge his authority. He did the same to his adversaries outside the royal household liquidated them, reduced them to penury, deprived them of their status or sent them into exile so that no one would ever be able to raise his head. Thus he lived on ruling over a kingdom free from famine, disease and fear, a kingdom which enjoyed peace and tranquility, where food was available for the asking, and which was free from chaos. 6

रानी का वर्णन

Queen Dhāriṇī

तस्स णं कोणियस्स रण्णो धारिणी नामं देवी होत्था। सुकु-माल-पाणि-पाया अहीण-पडिपुण्ण-पंचिंदिय-सरीरा लक्खण-वंजण-गुणोववेआ माणुम्माण-प्पमाण-पडिपुण्ण-सुजाय-सव्वंग-सुंदरंगी ससि-

सोमाकार-कंत-पिय-दंसणा सुरूवा करयल-परिमिअ-पसत्थ-तिवलिय-वलिय-मज्झा कुंडलुल्लिहिअ गंडलेहा कोमुइ-रयणियर-विमल-पडिपुण्ण-सोम-वयणा सिंगारागार-चारुवेसा-संगय-गय-हसिअ-भणिअ-विहिअ-विलास-सललिअ-संलाव-णिउण-जुत्तोवयार-कुसला पासादीआ दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा। कोणिएणं रण्णा भंभसार-पुत्तेणं सद्धिं अणुरत्ता अविरत्ता इट्ठे सद्द-फरिस-रस-रूव-गंधे पंचविहे माणुस्सए कामभोए पच्चणुभवमाणी विहरति ।।७।।

उस राजा कूणिक की धारिणी नाम की रानी थी। उसके हाथ-पर सुकोमल थे। उसकी पाँचों इन्द्रियाँ और शरीर अहीन—रचना की दृष्टि से अखण्डित एवं प्रतिपूर्ण—सम्पूर्ण अर्थात् अपने-अपने विषय में सक्षम थीं। वह लक्षण—सौभाग्यसूचक हस्त रेखाएँ, व्यञ्जन—तिल, मस आदि विशिष्ट चिह्न, गुण—पातिव्रत्य, सदाचार आदि से युक्त थी। शरीर का फैलाव (माप) वजन और आकार—विस्तार की दृष्टि से वह परिपूर्ण, श्रेष्ठ बने हुए समस्त अंगवाली सुन्दरी थी। उसका आकार—स्वरूप चन्द्रमा के समान सौम्य और दर्शन कमनीय व प्रिय था। वह अत्यन्त रूपवती थी। उसके शरीर का मध्य भाग—कमर हथेली के विस्तार जितनी अर्थात् बहुत पतली और पेट पर पड़ने वाली मुड़ी हुई उत्तम तीन रेखाओं से युक्त थी। उसके कपोलों (गालों) की रेखाएँ कुण्डलों के द्वारा सुशोभित थीं। उसका मुख शरत्पूर्णिमा के चन्द्रमा के समान निर्मल, परिपूर्ण और सौम्य था। शृङ्गार रस के आगार (आवास स्थान) के समान उसकी सुन्दर वेश-भूषा थी। उसकी चाल, हँसी, बोली, कृति, शारीरिक चेष्टाएँ एवं नेत्र चेष्टा समुचित थीं। वह लालित्यपूर्ण संलाप—वार्तालाप करने में निपुण थी। और समुचित लोक-व्यवहार में कुशल थी। अतएव वह चित्त को प्रसन्न करने वाली, देखने-योग्य, मन को अपने में रमा लेने वाली, और मन में बस जाने वाली थी। वह भंभसार के पुत्र कूणिकराजा के साथ प्रीति रखती थी, राजा के द्वारा अप्रिय-प्रसंग आने पर भी विरक्त नहीं होती थी, और इष्ट शब्द—संगीत आदि, स्पर्श—वस्त्र, आभूषण, शय्या, मर्दन आदि, रस—खाद्य-पदार्थ, रूप—नाटक आदि, गन्ध—फूल, इत्र, धूप आदि ये पाँच प्रकार के मनुष्य-सम्बन्धी काम भोगों को पुनः-पुनः भोगती हुई रहती थी ।।७।।

The name of Kūṇika's consort was Dhāriṇī. Her hands and feet were very tender. She had her sense organs and body free from defect of any sort and well-developed. The body bore many auspicious marks, signs and qualities. Its measure, weight and dimensions were well balanced and its limbs were fine. The figure was as tranquil as that of the moon, her sight was pleasant and delightful. She was indeed a real beauty. Her waist was so slender that it could be held in a palm and it printed on the abdomen three wide and curved lines. Her ear-rings enlivened the lines forming her cheeks. Her face was as tranquil as the autumnal moon, full and graceful. Her robes were the very embodiment of *śṛṅgāra-rasa*. She had a measured pace, smile, expression, movement and eye-sight. She was delightful in her conversation and dignified in her behaviour. So she was attractive to the heart, pleasant to the eye, the very embodiment of beauty, always leaving a lasting impression on the mind. Her relation with king Kūṇika, son of Bhambhasāra, was always fine and she never took offence if perchance the king was rude to her. She lived on happily enjoying and giving enjoyment in return by her sweet sound, decent shape, fragrant smell, fine taste and pleasant touch. 7

कूणिक की भगवद्भक्ति

Kūṇika's Devotion

तस्स णं कोणिअस्स रण्णो एक्के पुरिसे विउल-कय-वित्तिए भगवओ पवित्तिवाउए भगवओ तद्देवसिअं पवित्तिं णिवेएइ। तस्स णं पुरिसस्स बहवे अण्णे पुरिसा दिण्ण-भति-भत्त-वेअणा भगवओ पवित्तिवाउआ भगवओ तद्देवसियं पवित्तिं णिवेदेंति ॥८॥

उस राजा कूणिक के यहाँ पर्याप्त वेतन पर भगवान् महावीर के विहार आदि कार्य-कलाप को सूचित करने वाला एक वार्ता निवेदक पुरुष नियुक्त

था जो भगवान के प्रत्येक दिन सम्बन्धी प्रवृत्ति के बारे में राजा को निवेदन करता था। उस पुरुष के अन्य अनेक व्यक्ति भगवान की प्रवृत्ति (विहार-क्रम) के निवेदक थे। जिन्हें दैनिक आजीविका एवं भोजन रूप वेतन पर नियुक्त कर रक्खा था। वे भगवान की प्रत्येक दिन की प्रवृत्ति के सम्बन्ध में उसे निवेदन करते थे ॥८॥

King Kūṇika had appointed an officer on a very high salary and emoluments whose duty was to report to the king about the day-to-day activities (movements) of Bhagavān Mahāvīra. This officer had under him a vast network of intelligence men who were paid both in cash and in kind, to meet the cost of their living. They were entrusted with the duty of collecting full information (about Bhagavān Mahāvīra) and reporting it (to their boss). (These reports kept the chief intelligence officer informed about the spiritual activities of Bhagavān Mahāvīra.) 8

कूणिक की राजसभा

King's Court

तेणं कालेणं तेणं समएणं कोणिए राया भंभसार-पुत्ते बाहिरियाए उवट्ठाणसालाए अणेग-गणनायग-दंडनायग-राईसर-तलवर-मांडबिअ-कोडंबिअ-मंति-महामंति-गणग-दोवारिअ-अमच्च-चेड-पीढ-मद्द-नगर-निगम-सेट्ठि-सेणावइ-सत्थवाह-दूत-संधिवाल-सद्धि संपरिवुडे विहरइ ॥९॥

उस काल, उस समय में भंभसार का पुत्र राजा कूणिक वहिर्वर्ती राजसभा भवन में अनेक गण-नायकों (विशिष्ट मानवों के अधिनेताओं), दण्ड-नायकों (तन्त्र के रक्षकों), मांडलिक नरपतियों, युवराजों, राज्य सम्मानित नागरिकों, जागीरदारों, बड़े परिवारों के प्रमुख व्यक्तियों, मन्त्रियों, महामन्त्रियों, ज्योति-

षियों, द्वारपालों, अमात्यों—राज्य-कार्यों में परामर्शकों, सेवकों—राजसभा में आसन्न सेवारत पुरुषों, नागरिकों, व्यापारियों, धनिकों, सेनापतियों (रथ, घोड़ा, हाथी, पैदल सेना के अधिनायकों), सार्थवाहों (व्यापारियों के समूह को साथ में लेकर देश-विदेश में भ्रमण करने वालों), दूतों—दूसरों या राजा के आदेश-संदेश पंहुचाने वालों, सन्धिपालों—राज्यसीमाओं के रक्षकों—इन विशिष्ट-व्यक्तियों से चारों ओर से घिरा हुआ बैठा था—अवस्थित था। तात्पर्य यह है कि राजा कूणिक विशिष्ट जनों से चारों ओर से घिरा हुआ बहिर्वर्ती राजसभा भवन में अवस्थित था ॥९॥

In that period, at that time, king Kūṇika, son of Bhambhasāra was seated in the open court surrounded by many leaders of *gaṇa*, *daṇḍa*, kings, crown-princes, rich merchants who were the recipients of jewelled shawls from the monarch, leaders of *māṇḍava*, kinsmen, ministers, ministers of cabinet rank, astronomers, police-chiefs, *amātyas*, valets, attendants, officers, merchants, *śreṣṭhis*, army-commanders, foreign traders, ambassadors and border guards. 9

भगवान महावीर का वर्णन

Description of Bhagavān Mahāvīra

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे आइगरे तित्थगरे सहसंबुद्धे पुरिसुत्तमे पुरिससीहे पुरिसवर-पुंडरीए पुरिसवर-गंधहत्थी अभयदए चक्खुदए मग्गदए सरणदए जीवदए दीवो ताणं सरणं गई पइट्ठा धम्म-वर-चाउरंत-चक्कवट्टी अप्पडिहय-वर-नाण-दंसण-धरे विअट्टच्छउमे जिणे जाणए तिण्णे तारए मुत्ते मोयए बुद्धे बोहए सव्वण्णू सव्व-दरिसी सिव-मयल-मरुअ-मणंत-मक्खय-मव्वाबाह-मपुणरावत्तिअं सिद्धि-गइ-णामधेयं ठाणं संपाविउकामे अरहा जिणे केवली।

उस काल (वर्तमान अवसर्पिणी) उस समय (चतुर्थ आरे) में श्रमण भगवान महावीर आदिकर—अपने युग में श्रुत धर्म के आद्य प्रवर्तक,

तीर्थंकर—श्रमण, श्रमणी, श्रावक, श्राविका रूप चतुर्विध धर्म-तीर्थ के संस्थापक, स्वयं संबुद्ध—स्वयमेव किसी की सहायता निमित्त के बिना सम्यग् बोध प्राप्त, पुरुषों में उत्तम—प्रधान, पुरुषसिंह—आत्म-शौर्य में पुरुषों में सिंह तुल्य, पुरुषवर-पुंडरीक—मनुष्यों में रहते हुए भी उत्तम, श्वेत कमल के सदृश निर्लेप, पुरुषवर-गन्धहस्ती—पुरुषों में श्रेष्ठ गन्धहस्ती के समान अर्थात् जैसे गन्धहस्ती के पहुँचते ही सामान्य हाथी भाग जाते हैं, वैसे ही किसी क्षेत्र में उनके प्रविष्ट होते ही परचक्र, दुर्भिक्ष, महामारी आदि अनिष्ट दूर हो जाते थे, सभी प्राणियों के लिये अभयप्रद अर्थात् किसी भी प्राणी के लिये भय उत्पन्न नहीं करने वाले, चक्षु के समान श्रुतज्ञान देने वाले अर्थात् आन्तरिक नेत्र प्रदायक, सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन और सम्यक् चारित्र रूप मोक्षमार्ग के उद्बोधक, जिज्ञासु एवं मुमुक्षु आत्माओं के लिये आश्रयभूत, आध्यात्मिक जीवन के (अमरता रूप भाव प्राण के) दाता, दीपक के समान समस्त वस्तुओं के प्रकाशक, या संसार-समुद्र में दुःख-अशान्ति के दावानल से संतप्त-व्यक्तियों के लिये द्वीप के सदृश आश्रय स्थान, आश्वासन—धैर्य के कारण अनर्थों के नाशक होने से त्राण रूप, उद्देश्य की प्राप्ति में कारण भूत होने से शरण रूप, दुःख पूर्ण अवस्था से सुखपूर्ण अवस्था में लाने वाली गति रूप, संसार रूपी गर्त्त में गिरते हुए प्राणियों के लिये आधार भूत, चार अन्त—सीमा युक्त पृथ्वी के स्वामी अर्थात् अधिपति, चक्रवर्ती के समान धार्मिक-जगत् में उत्तम—प्रधान अधिनायक, अप्रतिहत-बाधा या आवरणरहित वर-श्रेष्ठ (अनुत्तर—प्रधान), ज्ञान दर्शन के धारक, अज्ञान आदि आवरण रूप छद्म से अतीत अर्थात् ज्ञान दर्शन आदि आत्म-गुणों को प्रगट नहीं होने देने वाले-कर्म विनष्ट हो गये, जिन—राग-द्वेष के विजेता, ज्ञायक—राग आदि भावात्मक सम्बन्धों के ज्ञाता, ज्ञापक—राग-द्वेष आदि को जीतने का मार्ग बताने वाले, तीर्ण—संसार-समुद्र को पार कर जाने वाले, तारक—भव्य जीवों को संसार-सागर से पार उतारने वाले, मुक्त—कर्म ग्रन्थि से छूटे हुए, मोचक—दूसरों को कर्म-ग्रन्थि से छुड़ाने वाले, बुद्ध—बोध प्राप्त किये हुए, बोधक—अन्य जीवों को बोध देने वाले, सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, शिव—कल्याणमय, अचल—स्थिर, अरुज—नीरोग, अनन्त—अन्तरहित, अक्षय—क्षयरहित, अव्याबाध—बाधारहित, अपुनरावर्तक—जहाँ से पुनः संसार में आगमन नहीं होता, ऐसी सिद्धगतिनामधेयस्थान—सिद्धावस्था नामक स्थिति को पाने के लिये सहज भाव से, पूजनीय, राग-द्वेष के विजेता, केवल ज्ञान, केवल दर्शन युक्त।

In that period, at that time, Bhagavān Mahāvira, the *ādikara* (the first propounder of *śruta dharma* of his time), the *tīrthaṅkara* (the organiser of the *tīrtha* or four-fold order), self-enlightened, the best among men, a lion among men, a white lotus among men, an elephant among men, the destroyer of fear, the giver of right vision, the indicator of the path, the giver of shelter, the giver of life, the giver of succour and relief, movement (transmigration) and support like an island, spiritual emperor of the world upto its four borders, the holder of unmistakable knowledge and conviction, the conqueror of attachment and greed, the victor and the giver of victory, the successful and the giver of success, the liberated and the giver of liberation, the enlightened and the giver of enlightenment, all-knowing and all-seeing, free from disturbances, free from either spontaneous or conscious efforts. free from diseases, infinite and eternal, free from obstructions, destined to attain the abode of the perfected beings, *arhat, jina, kevalin* (was wandering from village to village.)

सत्तहत्थूस्सेहे सम-चउरंस-संठाण-संठिए वज्ज-रिसह-नाराय-संघयणे अणुलोम-वाउवेगे कंकग्गहणी कवोय-परिणामे सउणि-पोस-पिट्ठंतरोरु-परिणए पउमुप्पल गंध-सरिस-निस्सास-सुरभि-वयणे छवी निरायंक-उत्तम-पसत्थ-अइसेय निरुवमपले जल्ल-मल्ल-कलंक-सेय-रय-दोस-वज्जिय-सरीर-निरुवलेवे छाया-उज्जोइअंग-मंगे।

उनके शरीर की ऊँचाई सात हाथ की थी। उनका आकार उचित और उत्तम माप से युक्त—सुन्दर था। अस्थियों की संयोजना अत्यन्त दृढ़ थी। उनके शरीर के अन्तर्वर्ती पवन का उचित वेग था। कंक नामक पक्षी के समान नीरोग गुदाशय था। कबूतर के समान उनकी पाचन शक्ति थी। उनका अपान-स्थान उसी प्रकार निर्लेप रहता था जिस प्रकार पक्षी का पीठ और पेट के बीच के दोनों ओर के पार्श्व तथा जंघाएँ विशिष्ट रूप से परिणत अर्थात् सुन्दर सुगठित थीं। उनका मुख

पद्म—कमल या पद्म नामक सुगन्धित-द्रव्य तथा उत्पल—नीले कमल अथवा उत्पल कुष्ट नामक सुगन्धित द्रव्य के समान निःश्वास से सुरभित—सुरभिमय (प्रभु का) मुख था। उनकी त्वचा कोमल एवं सुन्दर थी, नीरोग, उत्तम, शुभ्र, अत्यन्त श्वेत, अनुपम माँस से युक्त, जल्ल—कठिनाई से छूटने वाला मैल, मल्ल—स्वल्प प्रयत्न से छूटने वाला मैल, कलंक—दाग / धब्बे, स्वेद—पसीना, रज-दोष—मिट्टी लगने से (विकृति) रहित, भगवान् का शरीर था। अतएव उस पर मैल जम ही नहीं सकता था। उनका प्रत्येक अंग अत्यन्त स्वच्छ, कान्ति से प्रकाशमान था।

He was seven cubits in height, with the whole frame well-proportioned. The bone-joints were specially strong. The air inside the body was wholesome. His kidney was as good as that of *kaṇka* (a bird known for its good kidney). His digestive organs were as perfect as that of a pigeon. The lower part of the body was as smooth as that of the birds. His back and thigh bones were graceful. The air he breathed out was as fragrant as the fragrance of the ordinary and blue lotus. His skin was tender and smooth. His flesh was free from any germ, healthy, good, white and incomparable. His body took no dirt, deep or light, spot, sweat or dust. Hence it was shining all the while.

घण-निचिय-सुबद्ध-लक्खणुण्णय-कूडागार-निभ-पिंडि-अग्ग सिरए सामलि-बोंड - घण - निचियच्छोडिय - मिउ - विसय - पसत्थ - सुहुम - लक्खण-सुगंध-सुंदर-भुअमोअग-भिंग-नेल-कज्जल-पहिट्ठ - भमर - गण - णिद्ध निकुरुंब-निचिय-कुंचिय-पयाहिणा-वत्त-मुद्ध-सिरए दालिम-पुप्फ-प्पगास-तवणिज्ज-सरिस-निम्मल-सुणिद्ध-केसंत-केसभूमी ।

अत्यधिक ठोस या सघन सुबद्ध स्नायुबन्ध सहित, श्रेष्ठ लक्षणों से युक्त पर्वत के शिखर के समान आकार वाला एवं पत्थर की गोल पिण्डी के समान उन्नत उनका मस्तक था, बारीक रूई से ठोस भरे सेमल वृक्ष के फल फटने

से निकलते हुए रेशों के समान कोमल, सुलझे हुए, स्वच्छ, पतले, मुलायम, सुरभित, सुन्दर, भुजमोचकरत्न, भृंग कीट, नील-विकार, काजल, अत्यन्त हर्षित भ्रमरवृन्द के समान चमकीले, काले, घने, घुंघराले, छल्लेदार बाल उनके मस्तक पर थे। केश के समीप में, केश के उत्पत्ति के स्थान की त्वचा अनार के फूल तथा लाल सोने के समान प्रभायुक्त, लाल, निर्मल और उत्तम तेल से सिञ्चित-सी थी।

His head was solid, well-set with sinews and nerves, marked with good signs, bearing the shape of the crest of a mountain or a round stone. Soft like cotton freshly rushing out of a ripe *Śimula* fruit, thick hairs, well arranged, thick, clean, shining, with good signs, scented and graceful, looked like a gem called *bhuja-mocaka*, or an insect called *bhṛṅga*, or *nīla-vikāra*, or collyrium, or a happy drone, pitchy, wavy and curly. The skin on the sculp where stood the hairs was red like a pomegranate flowers, pure like red (burnt) gold and looked glazy as if just rubbed with oil.

घण-निचिय-छत्तागारुत्तमंगदेसे णिव्वण-सम-लट्ठ-मट्ठ-चंदद्धसम-णिडाले उडुवइ-पडिपुण्ण सोम-वयणे अल्लीण-पमाण-जुत्त-सवणे सुस्सवणे पीण-मंसल-कवोल-देसभाए आणामिय-चाव-रुइल-किण्हब्भ-राइ-तणु-कसिण-णिद्ध-भमुहे अवदालिअ-पुंडरिय-णयणे कोआसिअ-धवल-पत्तलच्छे गरुलायत-उज्जु-तुंग-णासे उवचिअ-सिल-प्पवाल-विंवफल-सण्णिभाहरोट्ठे पंडुर-ससि-सअल-विमल-णिम्मल-संख-गो-क्खीर-फेण-कुंदगरय-मुणालिआ-धवल-दंतसेढी अखंड-दंते अप्फुडिअ-दंते अविरल-दंते सुणिद्ध-दंते सुजाय-दंते एगदंत-सेढीविव अणेग-दंते हुयवहणिद्धंत-धोय-तत्त-तवणिज्जरत्त-तल-तालु-जीहे अवट्ठिय-सुवि-भत्त-चित्त-मंसू मंसल-संठिय-पसत्थ-सद्दूल-विउल-हणूए।

उनका उत्तमांग (सिर)—मस्तक का ऊपरी भाग सघन, भरा हुआ तथा छत्राकार था। उनका ललाट फोड़े-फुन्सी आदि के घाव से रहित समतल,

सुन्दर एवं शुद्ध, अर्द्ध चन्द्रमा के समान भव्य था, उनका मुख नक्षत्रों के स्वामी पूर्ण चन्द्र के समान सौम्य था। उनके कान मुख के साथ सुन्दर रूप में संलग्न और प्रमाणोपेत—उचित आकृति से सुशोभित थे। अर्थात् वे बड़े ही सुहावने लगते थे। उनके कपोल (गाल) का ऊपरी भाग मांसल और परिपुष्ट था। उनकी भौंहें कुछ झुके हुए धनुष के समान सुन्दर या टेढ़ी तथा काले बादल की रेखा के समान पतली, काली और कान्ति से युक्त थी। उनके नेत्र खिले हुए सफेद कमल के समान थे। उनकी आँखें पत्रल—बरौनी (भांपन) से युक्त धवल थी, वे इस प्रकार सुशोभित थी, मानों कुछ भाग में पत्तों से युक्त खिले हुए कमल हों। उनकी नासिका गरूड़ की चोंच के समान लम्बी, सीधी और ऊँची थी। उनके ओष्ठ सुघटित या संस्कारित मूंगे की पट्टी और बिम्बफल के समान थे। उनके दाँतों की श्रेणी निष्कलंक चन्द्रमा के टुकड़े, निर्मल से भी निर्मल शंख, गाय के दूध, फेन, कुन्द के फूल, जलकण, और कमल-नाल के समान सफेद थी, दाँत अखण्ड—परिपूर्ण, सुदृढ़, परस्पर सटे हुए, चिकने, चमकीले, सुन्दराकार थे, अनेक दाँत एक दन्त श्रेणी के समान प्रतीत होते थे, उनकी जिह्वा और तालु, अग्नि के ताप से मल रहित, जल से धोये हुए और तपाये हुए स्वर्ण के समान लाल थे। उनकी दाढ़ी-मूँछें कभी न बढ़ने वाली, सुन्दर ढंग से छँटी हुई, तथा अद्भुत रमणीयता को लिये हुए थी। उनकी चिबुक—ठुड्डी मांसल—सुपुष्ट, सुगठित, प्रशस्त और व्याघ्र-चीते की चिबुक के समान विस्तीर्ण थी।

The upper part of his body was solid, developed and umbrella-like. His forehead was like the crescent, free from any deep mark, flat, pleasant and pure. He had a pair of well set ears looking beautiful, his cheeks fleshy and swollen, his brows looking graceful like a bow which was bent, thin like a line of black clouds, dark and shining. His eyes were spotlessly white, like (the petal of) a blossomed lotus fixed to its stalk. His nose was pointed like the beak of *garuḍa*, straight and pointed. His lips were red as the coral, or a *bimba* fruit. The rows of his teeth were spotless like the moon-beam, or the purest of conches, or cow's milk, or foam, *kundá* flower, or drops of water, or the lotus stalk. They

were free from any cavity whatsoever, strong, closely set, shining and beautiful in shape. Although the rows contained many teeth, the setting was however so perfect that the whole thing looked like a single piece. The palate and the lower portion of the tongue were always free from dirt as if just washed, red like a flame or pure gold. His beard and moustache never grew longer (but always remained the same). His chin was fleshy, with beautiful shape, broad and wide like the chin of a tiger.

चउरंगुल-सुप्पमाण-कंबु-वर-सरिस-ग्गीवे वर-महिस-वराह-सीह-सद्दूल-उसभ-नाग-वर-पडिपुण्ण-विउल-क्खंधे जुग-सन्निभ-पीण-रइय-पीवर-पउट्ठ-सुसंठिय-सुसिलिट्ठ-विसिट्ठ-घण-थिर-सुबद्ध-संधि पुर-वर-फलिह-वट्टिय-भुए भुअ-ईसर-विउल-भोग-आदाण पलिह-उच्छूढ-दीह-बाहू-रत्त-तलोवइय-मउअ-मंसल सुजाय लक्खण-पसत्थ-अच्छिद्द-जाल-पाणी-पिवर-कोमल-वरंगुली आयंव-तंब-तलिण-सुइ-रूइल-णिद्ध-णक्खे-चंद-पाणि-लेहे सूरपाणिलेहे संखपाणिलेहे चक्कपाणिलेहे दिसा-सोत्थिअ-पाणिलेहे चंद-सूर-संख-चक्क-दिसा-सोत्थिय-पाणिलेहे ।

उनकी गर्दन चार अंगुल की उत्तम प्रमाण से युक्त थी, अर्थात् चौड़ी थी और श्रेष्ठ शंख के समान त्रिवलियुक्त एवं उन्नत थी, उनके कन्धे उत्तम भैंसे, सूअर, सिंह, चीते, साँढ़, तथा श्रेष्ठ हाथी के कन्धों जैसे परिपूर्ण—प्रमाण युक्त और विशाल थे। उनकी भुजाएँ गाड़ी के जुए या यज्ञ के खूंटे के समान गोल तथा लम्बी, सुदृढ़, देखने में सुखप्रद, सुपुष्ट कलाइयों से युक्त, सुसंगत, विशिष्ट, सघन—ठोस, स्थिर, और स्नायुओं से यथावत् रूप से आवद्ध तथा नगर की आगल के समान लिये हुए थे, वे पूरे बाहू ऐसे दिखाई देते थे, मानों इच्छित वस्तु को प्राप्त करने के लिये नागराज के फैले हुए विशाल-शरीर के समान उनके प्रलम्ब बाहू थे। उनके हाथ कलाई से नीचे के हाथ के भाग—तल उन्नत, कोमल, मांसल, और सुगठित थे,

शुभ लक्षणों से युक्त थे, अंगुलियों को मिलाने पर उनमें छिद्र दिखाई नहीं देते थे। उनकी अंगुलियों के नख ताम्वे के समान ललाई लिये हुए, और हथेलियाँ पतली, उजली, देखने में रुचिकर, स्निग्ध एवं सुकोमल थी। उनकी हथेली में चन्द्राकार, सूर्याकार, शंखाकार, चक्राकार और दक्षिणावर्त्त स्वस्तिकाकार रेखाएँ थीं, उनके हाथ में चन्द्र, सूर्य, शंख, चक्र, दक्षिणावर्त्त—स्वस्तिक की शुभ रेखाएँ थीं, इन रेखाओं के सुसंगम से हाथ शोभायमान थे।

His neck was like the best of conches, with a standard width of four fingers, like the neck of a fine buffalo, pig, lion, tiger, elephant or bull, marked by the specialities of each, and in itself vast. His hands were like the poles of a cart, straight, thick, pleasant, free from weakness, with powerful wrists, with a nice shape, developed, vigorous, fixed, with the bone-joints tightly tied. The full arm looked as if a snake had extended its body in order to establish its hold on the target. His palms were red, thick, soft, developed. beautiful, bearing auspicious marks, with no gap between two fingers. His fingers were developed, soft and good. His nails were copper-red, pure, shining and polished. His palms bore the emblem of the sun, the moon, the conch, the wheel and the *svastika*.

कणग-सिलातलुज्जल-पसत्थ-समतल-उवचिय-विच्छिण्ण - पिहुल - वच्छे सिरिवच्छंकियवच्छे अकरंडुअ-कणग-रुयय-निम्मल-सुजाय-निरुवहय-देहधारी-अट्ठ-सहस्स-पडिपुण्णवर-पुरिस - लक्खण - धरे सण्णय - पासे संगयपासे सुंदरपासे सुजायपासे मिय-माइअ-पीण-रइय-पासे।

उनका वक्षस्थल—सीना स्वर्ण-शिला के तल के सदृश उज्ज्वल, प्रशस्त, समतल, मांसल, विस्तीर्ण और विशाल था। उस पर श्रीवत्स—स्वस्तिक का चिह्न था। शरीर की मांसलता के कारण रीढ़ की हड्डी दिखाई नहीं देती थी। उनका शरीर स्वर्ण के समान कान्तिमान्, निर्मल, मनोहर, रोग-दोष से वर्जित था, उसमें उत्तम पुरुष के एक हजार आठ

लक्षण पूर्ण रूप से विद्यमान थे। उनके शरीर के पार्श्व-भाग—पसवाड़े नीचे की ओर क्रमशः संकरे, देह के प्रमाण के अनुरूप, सुन्दर, सुनिष्पन्न, अत्यधिक—समुचित परिमाण में मांसलता लिये हुए परिपुष्ट—मनोहर थे।

His chest was as shining as the surface of a gold slab, wide, flat, fleshy and vast. It had a *svastika* mark. Because of a plump frame, the bones of his ribs were not visible. The body had a golden tinge, and was graceful and free from disease. It bore 1008 auspicious marks indicating his greatness. His sides had become slender from the chest down, and were proportionate, graceful well-built, neither more nor less, well-covered with flesh.

उज्जुअ-सम-सहिय-जच्च-तणु-कसिण-णीद्ध-आइज्ज-लडह-रम-णिज्ज-रोम-राई झस-विहग-सुजाय-पीण-कुच्छी झसोदरे सुइकरणे पउमवियडणाभे गंगावत्तक-पयाहिणावत्त-तरंग-भंगुर-रविकिरण-तरुण-बोहिय-अकोसायंत-पउम-गंभीर-वियड-णाभे साहय-सोणंद-मुसल-दप्पण-णिकरिय-वर-कणगच्छरु-सरिस-वर-वइर-वलिअ-मज्झे-पमुइय-वर-तुरग-सीहवर-वट्टिय-कडी।

उनके वक्ष और उदर पर सीधे, समरूप से एक-दूसरे से मिले हुए, उत्कृष्ट कोटि के पतले—हल्के, काले, चिकने, उपादेय, लावण्यमय, रमणीय रोमों की पंक्ति थी, उनकी कुक्षि-प्रदेश—उदर के नीचे के दोनों पार्श्व मत्स्य और पक्षी की-सी सुन्दर रूप में अवस्थित और परिपुष्ट थे। उनका उदर मत्स्य के समान था, उनके उदर का करण अर्थात् आन्त्रसमूह शुचि—निर्मल थे। उनकी नाभि कमल के समान गहन—गूढ़ थी और गंगा के भंवर के सदृश गोल, दाहिनी ओर चक्कर काटती हुई लहरों के समान घुमावदार (चंचल) सूर्य की प्रखर किरणों से विकसित होते कमल के मध्य भाग के समान गम्भीर एवं गहन थी। उनके शरीर का मध्य भाग त्रिकाष्ठिका, मूसल, और दर्पण के हत्थे के मध्य भाग के सदृश, तलवार की

मूठ के समान, और उत्तम वज्र के समान गोल व पतला था, रोग-शोक आदि से रहित—स्वस्थ श्रेष्ठ घोड़े, एवं उत्तम सिंह की कमर के समान उनकी कमर गोल घेराव लिये हुई थी।

On the chest and the abdomen, there were rows of hairs, straight, well arranged, fine, dark, soft, delightful and glazy. His abdomen (the cavity of the belly) had good and strong muscles, like those of fish and birds. He enjoyed the gift of perfect organs of senses and intestine. Like a whirlpool in the Gaṅgā, like a wave taking turn to the right, like a lotus blossomed in the rays of the sun, he had a deep and grave navel. The middle part of the body was slender, like a trident, or a mace, a handle of a golden mirror, or of an axe, best and thunder-like. The waist was round, free from ailment, perfect like the waist of the finest elephant or lion.

वर-तुरग-सुजाय-सुगुज्झ-देसे आइण्ण-हउव्व णिरुवलेवे वर-वारण-तुल्ल-विक्कम-विलसिय-गई गय - ससण - सुजाय - सन्निभोरु समुग्ग-णिमग्ग-गूढ-जाणू एणी-कुरुविंदावत्त-वट्टाणुपुव्व-जंघ संठिय-सुसिलिट्ठ-गूढ-गुप्फे सुप्पइट्ठिय-कुम्म-चारु-चलणे अणुपुव्व-सुसंहयं-गुलीए उण्णय - तणु - तंब - णिद्ध-णक्खे रत्तुप्पल-पत्त-मउअ-सुकुमाल-कोमल-तले अट्ठ-सहस्स-वर-पुरिस-लक्खण-धरे ।

उत्तम घोड़े के सुनिष्पन्न गुप्त-अंग के समान उनका गुह्य भाग था, उत्तम जाति के घोड़े के सदृश उनका देह 'मलमूत्र' विसर्जन की अपेक्षा से निर्लेप था, उत्तम हाथी के समान पराक्रम एवं गम्भीरता—विलासिता लिए उनकी चाल थी। हाथी की सूंड के समान उनकी जंघाएँ सुगठित थीं, उनके घुटने डिब्वे के ढक्कन के समान निमग्न और निगूढ़ थे, अर्थात् माँसलता के कारण बाहर नहीं निकले हुए थे। उनकी पिण्डलियाँ हरिणी की पिण्डलियों, 'कुरुविन्द' नामक घास तथा कते हुए सूत की गेंढ़ी की

तरह क्रमशः उतार सहित गोल थी। उनके पैर के मणिवन्ध (टखनें) सुन्दराकार, सुगठित और निगूढ़ थे, उनके चरण सुन्दर रचना युक्त— सुप्रतिष्ठित, तथा कछुए के समान उठे हुए होने से मनोज्ञ प्रतीत होते थे, उनके पैरों की अंगुलियाँ क्रमशः आनुपातिक रूप में छोटी और बड़ी थी, एवं सुन्दर रूप में एक अंगुली दूसरी अंगुली से सटी हुई थीं, उनके पैरों के नख ऊँचे उठे हुए, पतले, तांबे के समान लाल और स्निग्ध—चिकने थे, उनकी पगथलियाँ लाल कमल के पत्ते की तरह मृदुल, सुकुमार और कोमल थीं, उनके शरीर में उत्तम-पुरुष के एक हजार आठ लक्षण विद्यमान— प्रगट थे।

The secret parts of the body were well built, like those of a horse. Like the body of a pedigree horse, his body remained untouched by urine and stool. His movement was like that of a best elephant, vigorous and confident. His thighs were like the trunk of an elephant. His knees were like the lead of a round box, deep and invisible. The legs beneath the thighs were like the legs of a deer, or like grass called *kurubinda*, or like a spindle, round and slender in the downward direction. His ankles were beautiful, well set and covered. His feet were nicely fitted like those of a tortoise. The fingers were in order, from big to small and small, and so on. The nails on his feet were tender and red like a lotus. (As aforesaid), the body bore 1008 marks of the great.

नग - नगर - मगर-सागर-चक्कंक-वरंक-मंगलकिय-चलणे-विसिट्ठ-रूवे हुयवह-निद्धूम-जलिय-तडितडिय-तरुण-रवि-किरण-सरिस-तेए अणासवे अममे अकिंचणे छिन्नसोए निरुवलेवे ववगय-पेम-राग-दोस-मोहे निग्गंथस्स पवयणस्स देसए सत्थनायगे पइट्ठावए समणग-पई समणगं-विंद-परिअट्टए चउत्तीस-बुद्ध-वयणातिसेस-पत्ते पणतीस-सच्च-वयणातिसेस-पत्ते।

उनके चरण पर्वत, नगर, मगर, समुद्र, चक्र रूप उत्तम चिह्नों और स्वस्तिक आदि मंगल चिह्नों से अंकित थे, उनका रूप असाधारण था, उनका तेज निर्धूम अग्नि की ज्वाला, विस्तीर्ण—फैली हुई विजली तथा मध्याह्न के सूर्य की किरणों के समान था। वे प्राणातिपात, मृषावाद आदि आस्रवों से रहित, ममता-रहित, और अकिंचन थे, भव-प्रवाह को उच्छिन्न कर दिया था–जन्म-मृत्यु से अतीत हो चुके थे, द्रव्यदृष्टि से निर्मल शरीरधारी, तथा भाव दृष्टि से कर्म वन्ध के कारण रूप उपलेप से रहित थे, प्रेम—मिलन के भाव, राग—विषयों के भाव, द्वेष—अरुचि के भाव और मोह—मूढ़ता / अज्ञान के भाव का नाश कर चुके थे, निर्ग्रन्थ प्रवचन के उपदेशक, धर्म शासन के नायक, उन-उन उपायों के द्वारा व्यवस्था करने वाले और श्रमण-संघ के स्वामी और श्रमण-संघ के उन्नतिकर्त्ता थे। जिनेश्वरों के चौतीस बुद्ध वचन अतिशयों तथा पैंतीस सत्यवचनातिशयों के धारक थे।

His legs bore the emblems of a mountain, a city, a crocodile, an ocean and a wheel, the very best among the emblems. His beauty had some speciality of its own. His glow was like that of smokeless fire, or an extended lightning or the rays of the early morning sun. He had absolutely stopped the inflow of *karma*, was wholly free from 'mine'-ness, had no earthly belonging or attachment, no grief, with a pure body free from the bondage of *karma*, beyond affection, beyond attachment, beyond malice, beyond ignorance. He was the propounder of the *nirgrantha* tenets, the commander, the leader, the prescription-maker. He was the head of the order of the (*śramaṇa*) monks and nuns, all the while helping them to attain greater heights. He had at his disposal 34 super-human qualities, like the words of the Jinas, and another 35, like correct words.

आगासगएणं चक्केणं आगासगएणं छत्तेणं आगासियाहिं चामराहिं आगास-फलिआमएणं सपायवीढेणं सीहासणेणं धम्मज्झएणं पुरओ पकड्ढिज्जमाणेणं (चउद्दसहिं समण-साहस्सीहिं छत्तीसाए

अज्जिआ-साहस्सीहिं) सद्धिं संपरिवुडे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुग्गामं दूइज्जमाणे सुहंसुहेणं विहरमाणे चंपाए णयरीए बहिया उवणगरग्गामं उवागए चंपं नगरिं पुण्णभद्दं चेइअं समोसरिउं कामे ।। १० ।।

आकाशवर्ती धर्मचक्र, आकाशवर्ती तीन छत्र, आकाशवर्ती अथवा ऊपर उठते हुए चामर, आकाश के समान स्वच्छ, स्फटिक से बने हुए पादपीठ—पैर रखने की चौकी सहित सिंहासन, धर्मध्वज उनके आगे-आगे चल रहे थे। चौदह हजार साधु और छतीस हजार साध्वियों के साथ घिरे हुए थे। क्रमशः आगे से आगे चलते हुए, एक गांव से दूसरे गांव होते हुए, सुखपूर्वक विहार करते हुए चम्पा नगरी के बाहर उपनगर (समीपवर्ती गांव) में पधारे और जहां से उन्हें चम्पा नगरी के पूर्णभद्र चैत्य में पदार्पण करना था—पधारने वाले थे ।।१०।।

Attended by a pious wheel, three umbrellas, a *camara*, a foot-stool and a throne made from pure crystal, all in the sky, headed by a spiritual banner, he, followed by 14,000 monks and 3‘,000 nuns moved from village to village, making them pure by his touch, himself wholly free from physical exhaustion, and arrived in the suburbs of the city of Campā, and was about to reach the Purṇabhadra temple. 10

धर्म संदेश वाहक

The Information Officer

तए णं से पवित्तिवाउए इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे हट्ठतुट्ठ-चित्त-माणंदिए पीइमणे परम-सोमणस्सिए हरिस-वस-विसप्पमाण-हियए ण्हाए कयबलिकम्मे कय-कोउअ-मंगल-पायच्छित्ते सुद्धप्पवेसाइं मंगलाइं वत्थाइं पवर-परिहिए अप्पमहग्घाभरणालंकिय-सरीरे सआओ गिहाओ पडिणिक्खमइ ।

प्रवृत्ति निवेदक को जब यह (प्रभु महावीर के पदार्पण की) बात ज्ञात हुई वह हर्षित और संतुष्ट चित्त हुआ। उसने अपने मन में आनन्द एवं प्रसन्नता का अनुभव किया। अत्यन्त सौम्यभाव से सम्पन्न और हर्षातिरेक से उसका हृदय खिल उठा। उसने स्नान किया और बलिकर्म (नित्य नैमित्तिक कृत्य) किये, कौतुक—शारीरिक सज्जा की दृष्टि से आँखों में अंजन आंजा, ललाट पर तिलक लगाया, मंगल—दही, अक्षत आदि से मंगल विधान किया, प्रायश्चित्त—दुःस्वप्न आदि दोषों के निवारण-हेतु चंदन-कुंकुम लगाया, राजसभा में प्रवेशोचित उत्तम वस्त्रों को सुन्दर ढंग से पहनकर. संख्या में कम पर बहुमूल्य आभूषणों से शरीर को विभूषित किया, फिर वह अपने घर से बाहर निकला।

Having heard about the arrival of Bhagavān Mahāvira, the officer (of king Kūṇika) who was entrusted with the duty of reporting the daily activities (movements) of Bhagavān Mahāvira became highly delighted and pleased, was immensely happy, with his mind full of joy, with a noble mind, with his heart expanded in glee. He took his bath, performed necessary rights, propitiations and atonements, put on clean clothes in a decent manner, decorated his body with ornaments light but costly, and then moved out of his house.

सआओ गिहाओ पडिणिक्खमित्ता चंपाए णयरीए मज्झंमज्झेणं जेणेव कोणियस्स रण्णो गिहे जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव कूणिए राया भंभसारपुत्ते तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता करयल-परिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु जएणं विजएणं वद्धावेइ। वद्धावित्ता एवं वयासी—जस्स णं देवाणुप्पिया दंसणं कंखंति जस्स णं देवाणुप्पिया दंसणं पीहंति जस्स णं देवाणुप्पिया दंसणं पत्थंति जस्स णं देवाणुप्पिया दंसणं अभिलसंति जस्स णं देवाणुप्पिया णाम-गोत्तस्स वि सवणयाए हट्ठतुट्ठ जाव...हिअया भवंति, से णं समणे भगवं महावीरे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुग्गामं दूइज्जमाणे चंपाए णयरीए उवणगरगामं उवागए चंपं णगरिं

पुण्णभद्दं चेइअं समोसरिउं कामे। तं एअ णं देवाणुप्पियाणं पिअट्ठयाए पिअं णिवेदेमि। पिअं ते भवउ ॥ ११ ॥

वह अपने घर से निकल कर, चम्पानगरी के मध्य में होता हुआ, जहाँ राजा कूणिक का महल था, जहाँ बहिर्वर्ती सभा-भवन था, जहाँ भंभसार का पुत्र कूणिक था, वहाँ आया, (वहाँ) आकर उसने हाथ जोड़ते हुए, अंजलि बाँधते हुए आप की जय हो, विजय हो, इन शब्दों में वर्धापित—आशीर्वाद दिया। आशीर्वाद देकर इस प्रकार बोला—"हे देवानुप्रिय सौम्यचेता राजन्! आप जिनके दर्शन चाहते हैं, हे देवानुप्रिय! आप जिनके दर्शन प्राप्त होने पर छोड़ना नहीं चाहते हैं, हे देवानुप्रिय! आप जिनके दर्शन करने की इच्छा लिये रहते हैं—प्रार्थना करते हैं अर्थात् दर्शन हों वैसे उपायों की सुहृज्जनों से अपेक्षा रखते हैं, हे देवानुप्रिय! आप जिनके दर्शन हेतु अभिमुख होने की अभिलाषा—कामना करते हैं, हे देवानुप्रिय! जिनके नाम (महावीर, सन्मति, ज्ञातपुत्र) आदि, गोत्र (काश्यप) श्रवण मात्र से भी हर्षित और संतुष्ट होते हैं, प्रसन्नता और हर्षातिरेक से मन खिल उठता है, हृदय में आनन्दानुभूति होती है, वे श्रमण भगवान् महावीर अनुक्रम से विचरण (विहार) करते हुए, एक गांव से दूसरे गाँव होते हुए, चम्पा नगरी के उपनगर (समीपवर्ती) गाँव में पधारे हैं, अब चम्पानगरी के पूर्णभद्र चैत्य मे पदार्पण करने वाले हैं। हे देवानुप्रिय! आपकी प्रसन्नता हेतु यह प्रिय समाचार आपको निवेदित कर रहा हूँ, यह आपके लिये प्रियकर हो" ॥११॥

Having come out of his house, he moved through the city of Campā and came to the palace, to the hall of audience where sat king Kūṇika, the son of Bhambhasāra. He shouted victory and glory unto the monarch and thereafter submitted as follows :

"Oh beloved of the gods! The person whom you always desire to see and from whom, when met, you never desire to part, whom you intend to see, whom you are delighted, pleased, with your heart expanded in glee, that great person, who is none other than Śramaṇa Bhagavān Mahāvīra, while wander-

ing from village to village, has already arrived in the suburb of Campā and intends to camp near the Purṇabhadra temple. This being a very pleasant piece of intelligence for you, the beloved of the gods, I submit this to you. May this make you happy !" 11

कूणिक का परोक्ष वदन

King Kūṇika transmits homage

तए णं से कूणिए राया भंभसारपुत्ते तस्स पवित्तिवाउअस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव…हिअए विअसिअ-वर-कमल-णयण-वयणे पअलिअ-वर-कडग-तुडिय-केयूर-मउड-कुंडल-हार-विरायंत-रइय-वच्छे पालंव-पलंबमाण घोलंत-भूसण-घरे ससंभमं तुरियं चवलं नरिंदे सीहासणाउ अब्भुट्ठेइ। अब्भुट्ठित्ता पायपिढाउ पच्चोरुहइ। पच्चोरुहित्ता पाउआओ ओमुअइ। ओमुइत्ता अवहट्टु पंचराय ककुहाइं तं जहा—खग्गं छत्तं उप्फेसं वाहणाओ वालवीअणं। एगसाडियं उत्तरासंगं करेइ। करेत्ता आयंते चोक्खे परम सूइभूए अंजलि-मउलिग्ग हत्थे तित्थगराभिमुहे सत्तट्ठ-पयाइं अणुगच्छति सत्तट्ठ-पयाइं अणुगच्छित्ता वामं जाणुं अंचेइ। वामं जाणुं अंचेत्ता दाहिणं जाणुं धरणितलंसि साहट्टु तिक्खुत्तो मुद्धाणं धरणितलंसि निवेसेइ। निवेसेत्ता ईसिं पच्चुण्णमइ। पच्चुण्णमित्ता कडग-तुडिय-थंभिआओ भुआओ पडिसाहरति। पडिसाहरित्ता करयल जाव…कट्टु एवं वयासी :

तब भंभसार का पुत्र राजा कूणिक उस वार्ता-निवेदक से यह बात कान से सुनकर, हृदय से धारण कर (हृदयंगम) कर हर्षित एवं परितुष्ट हुआ। सौम्य मनोभाव एवं हर्षातिरेक से हृदय खिल उठता है। उत्तम कमल के समान उसके नेत्र तथा मुख खिल उठे। हर्षातिरेक के कारण संस्फूर्तिवश राजा के हाथों के उत्तम कड़े, भुजाओं को सुस्थिर बनाये रखने वाली आभरण

स्वरूप पट्टी, केयूर—भुजवन्ध, मुकुट, कुण्डल, और हार से सुशोभित बना हुआ वक्षस्थल सहसा कम्पित हो उठे। लम्बी लटकती हुई माला और हिलते हुए भूषणों के धारक राजा आदरपूर्वक जल्दी-जल्दी सिंहासन से उठा, सिंहासन से उठकर पादपीठ—पैर रखने के पीढे पर पैर रखकर नीचे उतरा। नीचे उतर कर पादुकाएँ उतारीं। पादुकाओं को उतार कर पांच राज चिन्हों को दूर किये। वे इस प्रकार हैं—(१) खड्ग, (२) छत्र, (३) मुकुट, (४) वाहन, (५) चामर। एक साटिक उत्तरासंग किया। उत्तरासंग करके, जल स्पर्श से मैल-रहित, अति स्वच्छ परम शुचिभूत - अति शुद्ध हुआ। कमल की कली के समान हाथों को संपुटित किया—हाथ जोड़े। जिस ओर तीर्थंकर (भगवान महावीर) विराजमान थे उस ओर मुख करके सात-आठ कदम सामने गया। सात-आठ कदम जाकर अपने वायें घुटने को आकुंचित किया—सिकोड़ा। वायें घुटने को संकुचित—सिकोड़ कर के दाहिने घुटने को भूमितल पर टिकाया और तीन वार अपने सिर को पृथ्वीतल से लगाया। (तीन वार अपने सिर को जमीन से) लगाकर वह कुछ ऊपर उठा। ऊपर उठ कर कंकण—कड़े और वाहुरक्षिका—तोडे से सुस्थिर बनी हुई भुजाओं को उठाया, (भुजाओं को) उठा कर हाथ जोड़ते हुए, उन्हें सिर के चारों ओर घुमाते हुए—घुमाकर इस प्रकार बोला :

On getting this information from his chief information-officer and welcoming it in his heart, king Kūṇika, son of Bhambhasāra, became immensely pleased. Like the best of lotus, his eyes beamed. His bangles, bracelets, armlets, crown, ear-rings and the garlands on his chest began to shake. With a long garland hanging from his neck and with his shaking ornaments, the king at once stood up from the throne, and then with the support of the footstool, he descended to the ground. Then he discarded his slippers and removed his royal insignia (viz., sword, umbrella, crown, vehicles, and *camara*). He wore a shoulder-piece (wrapper), used water to make his hands spotlessly clean, and then folding his palms, which looked like a bud of lotus, he turned his face in the direction in which the Tīrthaṅkara was camped. Then he moved seven or eight steps forward, contracted his left leg, folded the

right one and placed it on the ground, and then touched the ground thrice with his forehead. Then he rose up a little and raised his hands which were fixed under the weight of bangles and bracelets, folded them, touched his forehead with his fingers and prayed :

णमोऽत्थुणं अरिहंताणं भगवंताणं आइगराणं तित्थगराणं सयंसंबुद्धाणं परिसुत्तमाणं पुरिस-सीहाणं पुरिसवर-पुंडरिआणं पुरिसवर-गंधहत्थीणं लोगुत्तमाणं लोगनाहाणं लोगहियाणं लोगपईवाणं लोगपज्जोअगराणं अभयदयाणं चक्खुदयाणं मग्गदयाणं सरणदयाणं जीवदयाणं बोहिदयाणं धम्मदयाणं धम्मदेसयाणं धम्मनायगाणं धम्मसारहीणं धम्मवर-चाउरंत-चक्कवट्टीणं दीवो ताणं सरणं गई पइट्ठा अप्पडिहय-वर-ताण-दंसण-धराणं विअट्ठ-छउमाणं जिणाणं जावयाणं तिण्णाणं तारयाणं बुद्धाणं बोहयाणं मुत्ताणं मोअगाणं सव्वन्नूणं सव्वदरिसीण सिव-मयल-मरुअ-मणंत-मक्खय-मव्वावाह-मपुणराविति-सिद्धिगइ-नामधेयं ठाणं संपत्ताणं। नमोऽत्थुणं समणस्स भगवओ महावीरस्स आदिगरस्स तित्थगरस्स जाव...संपाविउ . ामस्स मम धम्मायरियस्स धम्मोवदेसगस्स। वंदामि णं भगवंतं तत्थ गयं इह गते पासइ मे (मे से) भगवं तत्थगए इह-गयंति कट्टु वंदामि णमंसति।

"अर्हत—कर्म शत्रुओं के नाशक, या इन्द्रादि द्वारा पूजित, भगवान्—आध्यात्मिक ऐश्वर्य से सम्पन्न, आदिकर—अपने युग में श्रुत धर्म के आद्यप्रवर्तक, तीर्थंकर—श्रमण-श्रमणी-श्रावक-श्राविका रूप चतुर्विध संघ रूपी तीर्थ के कर्त्ता, स्वयं संबुद्ध—बिना किसी के उपदेश से स्वयं बोध प्राप्त, पुरुषोत्तम—सभी पुरुषों में अतिशय आदि से उत्तमोत्तम, पुरुषसिंह—पुरुषों में आत्म-शौर्य गुण से सिंह के समान, पुरुषवरपुण्डरीक—सर्व प्रकार की मलिनता से रहित होने के कारण पुरुषों में उत्तम श्वेत कमल के समान निर्लेप, पुरुषवरगन्धहस्ती—उत्तम गन्ध हस्ती के समान, जिस प्रकार गन्धहस्ती के पहुँचते ही सामान्य हाथी भाग

जाते हैं, उसी प्रकार किसी भी क्षेत्र में जिन के प्रवेश करते ही महामारी, दुर्भिक्ष आदि अनिष्ट दूर हो जाते थे, लोकोत्तम—लोक के समस्त-प्राणियों में उत्तम, लोकनाथ—लोक के समस्त भव्य आत्माओं के स्वामी, अर्थात् उन्हें सन्मार्ग प्राप्त कराकर उनका योग-क्षेम साधने वाले, लोक का कल्याण करने वाले, ज्ञान रूपी दीप के द्वारा लोक का अज्ञान-अन्धकार दूर करने वाले या लोकप्रवाह के प्रतिकूलगामी—अध्यात्म मार्ग पर गतिशील, लोक-अलोक, जीव अजीव, पुण्य-पाप आदि का स्वरूप प्रकाशित करने वाले, या लोक में धर्म का उद्योत फैलाने वाले, समस्त प्राणियों के लिये अभयप्रद, आन्तरिक-नेत्र—सद्-ज्ञान देने वाले, सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक् चारित्र रूप साधना मार्ग के उद्‌बोधक, मुमुक्षु और जिज्ञासु प्राणियों के लिये आश्रयभूत, आध्यात्मिक जीवन के संबल, सम्यक् बोध देने वाले, सम्यक चारित्र रूप धर्म के दाता धार्मिक-देशना देनेवाले, धर्म नायक, धर्म रूपी रथ के संचालक, चार अन्त अर्थात् चार सीमा युक्त पृथ्वी के अधिपति के सदृश धार्मिक जगत् के चक्रवर्ती, दीपक के समान समस्त वस्तुओं के प्रकाशक या संसार-समुद्र में भटकते जनों के लिये द्वीप के समान आश्रय स्थान, कर्म कदर्थित भव्य आत्माओं के रक्षक,—आश्रय गति और प्रतिष्ठा स्वरूप, आवरणरहित उत्तम ज्ञान दर्शन के धारक, अज्ञान आदि आवरण रूप छद्म से अतीत, राग द्वेष आदि के विजेता, राग-द्वेष आदि भावात्मक सम्बन्धों के ज्ञाता अथवा राग-द्वेष आदि को जीतने का मार्ग बताने वाले, संसार-समुद्र को पार कर जाने वाले, दूसरों को संसार-सागर से पार उतारने वाले, जानने योग्य का बोध प्राप्त किये हुए, अन्य जनों के लिये बोधप्रद, सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, कल्याणमय, स्थिर, निरुपद्रव, अन्तरहित, क्षयरहित, बाधा रहित, जहाँ से फिर जन्म-मृत्यु रूप संसार में आगमन नहीं होता, ऐसी सिद्धावस्था को प्राप्त किये हुए सिद्धों को नमस्कार हो।

"आदिकर—अपने युग में श्रुत धर्म के प्रथम प्रवर्तक, तीर्थंकर—श्रमण-श्रमणी, श्रावक-श्राविका रूप चतुर्विध धर्म-संघ—धर्म तीर्थ के संस्थापक—कर्ता, सिद्धावस्था को पाने के इच्छुक—समुद्यत, मेरे धर्माचार्य, धर्मोपदेशक, श्रमण भगवान महावीर को मेरा नमस्कार हो।"

"I bow to the conqueror of inner foes, the revered Lord of all the munificence, the founder of religion, the founder of the fourfold order, self-enlightened, the best among men, a lion among men, a white lotus among men, an elephant among

the best of all beings, the Lord of all beings, the giver of welfare to all beings, a light of intellect for all beings, a light for the universe, a donor of freedom from fear, a donor of vision, a donor of liberation, a donor of refuge, a donor of life, a donor of right enlightenment, a donor of Law, an adviser of Law, a leader of Law, a pilot of Law, a giver of relief, shelter, change (of life) and support like an island, the holder of unmistakable knowledge and faith (conviction), one whose shroud of knowledge has been torn, one who helps others to become victors, one who has crossed through the worldly ocean and one who helps others to cross through it, enlightened and a giver of enlightenment, liberated and a liberator, omniscient and all-seeing, one who is earmarked to reach the abode of the liberated souls which is free from all disturbances, free from diseases, eternal, indestructible, unobstructed and wherefrom there is no come-back. To such one I bow.

"Bow I to Śramaṇa Bhagavān Mahāvīra, the founder of religion, the founder of the order, till who is the would-be-perfected, my spiritual master, my spiritual guide (counsellor).

"Hereform I bow unto thee. May the Lord who is thither cast his gracious glance at me."

So saying, he paid his homage and obeisance.

वंदित्ता णमंसित्ता सीहासण-वर-गए पुरत्थाभिमुहे निसीअइ। निसीइत्ता तस्स पवित्तिवाउअस्स अट्ठुत्तर सयसहस्सं पीतिदाणं दलयति। दलइत्ता सक्कारेति सम्माणेति। सक्कारित्ता सम्माणित्ता एवं वयासी—जया णं देवाणुप्पिया! समणे भगवं महावीरे इहमागच्छेज्जा इह समोसरिज्जा इहेव चंपाए णयरीए बहिया पुण्णभद्दे चेइए अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरज्जा तया णं मम एगमट्ठं णिवेदिज्जासि—त्ति कट्टु विसज्जिते ॥१२॥

वह वन्दन-नमस्कार करके पूर्व (दिशा) की ओर मुख किये अपने उत्तम सिंहासन पर बैठा। बैठकर उस वार्ता-निवेदक को एक लाख आठ हजार रजत मुद्राएँ तुष्टिदान—पारितोषिक के रूप में दी। उसे देकर उसका सत्कार किया, (आदर सूचक-वचनों से) सम्मान किया। उसने सत्कार-सम्मान कर इस प्रकार कहा :

"हे देवानुप्रिय सौम्यचेता वार्ता-निवेदक! जब श्रमण भगवान् महावीर यहाँ पधारें, यहाँ समवसृत हों, इसी चम्पा नगरी के बाहर पूर्णभद्र चैत्य में यथाप्रतिरूप—श्रमणचर्या के अनुरूप आवासस्थान ग्रहण कर संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए विराजमान हों, मुझे यह समाचार निवेदित करना।" इस प्रकार कहकर राजा ने वार्ता-निवेदक को वहाँ से विदा—विसर्जित किया ॥१२॥

Having paid his homage and obeisance, he sat on the throne with his face turned eastward. The intelligence officer was rewarded with an offer of 1,08,000 silver coins, best of clothes and best of honour. Then the king said unto him :

"Oh beloved of the gods ! When Bhagavan Mahāvīra arrives, when he sets his steps in this city and takes his lodge in the Purṇabhadra temple outside our city, enriching himself with restraint and penance, please let me know of it."

So saying, he dismissed the officer from his presence. 12

भगवान का आगमन

Bhagavān Mahāvīra arrives

तए णं समणे भगवं महावीरे कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए फुलुप्पल-कमल-कोमलुम्मिलितंमि आहा (अह) पंडुरे पहाए-रत्तासोगप्पगास किंसुअसुअ-मुह-गुंजद्ध-रागसरिसे कमलागर-संड-वोहए उट्ठियम्मि सूरे सहस्सरस्सिमि दिणयरे तेयसा जलंते जेणेव चंपा णयरी जेणेव पुण्णभद्दे चेइए तेणेव उवागच्छति। उवागच्छित्ता

अहा-पडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति । १३।।

उसके वाद अगले दिन, रात वीत जाने पर, प्रभात हो जाने पर, नीले और अन्य कमलों की कोमल पंखुड़ियाँ सुहावने रूप में खिल जाने पर, हरिणों की सुकुमार आँखें खुल जाने पर, ऐसे उजले प्रभात में लाल अशोक, किंशुक—पलाश, तोते की चोंच, घुंघची के आधे भाग के समान लालिमा लिये हुए जलाशय के कमल वन को विकसित करने वाले, सहस्र किरणयुक्त, दिन के प्रादुर्भाविक, तेज से जाज्वल्यमान सूर्य के उदित होने पर, श्रमण भगवान् महावीर जहाँ चम्पा नगरी थी, जहाँ पूर्णभद्र चैत्य था, वहाँ पधारे, पधार कर श्रमणचर्या के समुचित—अनुरूप आवास स्थान ग्रहण कर संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए विराजे ।।१३।।

When the darkness of the night was to bid good-bye to the approaching light, when the lotus-buds started blossoming and the deer opening their tender eyes, in the morning, when the sun, which had the brilliance of red *aśoka*, or *palāśa* flower, or the redness of the beak of a parrot, or the red half of the *guñjā* fruit, which woke up the forest of lotuses in the tanks, with thousands of rays, the Lord of the day, emitting burning sticks, appeared in the sky, Bhagavān Mahāvīra stepped in into the Purṇabhadra temple outside the city of Campā. There he lodged in a shed which was congenial to the practices of the restrained monks, enriching his soul with restraint and penance. 13

भगवान के अंतेवासी

Disciples of Bhagavān Mahāvīra

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतेवासी वहवे समणा भगवंतो अप्पेगइआ उग्गपव्वइया भोग-

पव्वइआ राइण्णपव्वइआ णायपव्वइआ कोरव्वपव्वइआ खत्तिअ-पव्वइआ भडा जोहा सेणावई पसत्थारो सेट्ठी इब्भा अण्णे य बहवे एवमाइणो उत्तम-जाति-कुल-रूव-विणय-विण्णाण-वण्ण-लावण्ण-विक्कम-पहाण-सोहग्ग-कंति-जुत्ता बहु-धण-धण्ण-णिचय-परियाल-फिडिआ णरवइ-गुणाइरेगा इच्छिअ भोगा सुह-संपललिआ किंपाग-फलोवमं च मुणिअ विसयसोक्खं जलबुब्बुअ-समाणं कुसग्ग-जलबिंदु-चंचलं जीवियं च णाऊण अद्धुवमिणं रयमिव पडग्गलग्गं संविधुणित्ता णं चइत्ता हिरण्णं जाव...पव्वइआ अप्पेगइआ अद्धमास-परिआया अप्पेगइआ मासपरिआया एवं दुमास तिमास जाव...एक्कारस-मास-परिआया अप्पेगइआ वासपरिआया दुवास-तिवास-परिआया अप्पेगइआ अणेगवास-परिआया संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणा विहरंति ॥१४॥

उस काल (वर्तमान अवसर्पिणी) उस समय (चतुर्थ आरे) में श्रमण भगवान् महावीर के अन्तेवासी-शिष्य बहुत से श्रमण भगवन्त संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए विचरते थे, उनमें कुछ श्रमण ऐसे थे, जो उग्र वंश वाले दीक्षित हुए थे कई भोग—राजा के मन्त्री-मण्डल के सदस्य प्रव्रजित हुए थे, कई राजन्य—राजा के परामर्श मण्डल के सदस्य दीक्षित हुए थे, कई ज्ञात या नाग वंश वाले प्रव्रजित हुए थे, कई कुरुवंशवाले दीक्षित हुए थे, कई क्षत्रिय वंशीय राजकर्मचारी प्रव्रजित हुए थे, कई भट—सुभट, कई योद्धा—युद्धोपजीवी अर्थात् सैनिक, कई सेनापति, कई प्रशास्ता—प्रशासन अधिकारी, कई श्रेष्ठी—सेठ, कई इभ्य—हाथी ढंक जाय एतत् प्रमाण धनराशि वाले—अत्यन्त धनिक, इन-इन वर्गों में से दीक्षित हुए थे, ऐसे ही और भी बहुत से जन उत्तम मातृपक्ष, उत्तम पितृपक्ष, सुन्दर रूप, विनय, विशिष्ट ज्ञान, शारीरिक आभा—लावण्य, आकार की स्पृहणीयता, पराक्रम, सौभाग्य और कान्ति से युक्त—सुशोभित, विपुल धन-धान्य के संग्रह, पारिवारिक समृद्धि से युक्त, राजा से प्राप्त अतिशय वैभव, इन्द्रियजन्य सुख आदि से युक्त इच्छित भोग प्राप्त और सुख से लालित-पालित थे, जिन्होंने सांसारिक भोगों के सुख को किंपाक फल के समान असार, जीवन को पानी के बुलबुले तथा कुश के सिर पर स्थित जल की बूँद के सदृश चंचल—क्षणिक जान कर सांसारिक

अस्थिर पदार्थों को वस्त्र पर लगी हुई रज के सदृश झाड़ कर, हिरण्य—रूपा, सुवर्ण—सोने के गढ़े हुए आभूषण, धन—गायें आदि, धान्य, वल—चतुरंगिणी सेना, वाहन, कोश—खजाना, धान्य भण्डार, राज्य, राष्ट्र, नगर, अन्तःपुर, प्रचुर सम्पत्ति का परित्याग कर, सोना, रत्न, मणि, मुक्ता, शंख, शिला—प्रवाल, विद्रुम, मुंगें, लाल रत्न, आदि वितरण द्वारा सुप्रकाशित कर—दान योग्य व्यक्तियों को प्रदान कर, मुण्डित होकर अगार—गृहस्थ जीवन से अनगार—श्रमण जीवन में दीक्षित हुए, कइयों को दीक्षित हुए अर्धमास, कइयों को एक मास, दो मास, तीन मास, चार मास, पाँच मास, छः मास, सात मास, आठ मास, नौ मास, दश मास और ग्यारह मास हुए, कइयों को दीक्षित हुए एक वर्ष, कइयों को प्रव्रजित हुए दो वर्ष, कइयों को तीन वर्ष तथा कइयों को दीक्षित हुए अनेक वर्ष हुए थे ॥१४॥

In that period, at that time, Śramaṇa Bhagavān Mahāvīra had many disciples who practised restraint and penance. They belonged to diverse Kṣatriya lines like the Ugras, Bhojas, Rājanyas, Jñātṛs, Kurus, and many others. Besides, there were many others, bards, army commanders, teachers of religion, business men and men of wealth who came of high maternal and paternal lines, who had a beautiful frame, humility, knowledge, wholesome tinge, grace, valour, good luck and lustre, who had affluence in wealth and grains, in growing families, who had an excess of comfort for their sense-organs bestowed by the monarch, who could enjoy pleasures at their discretion, and who were actually enjoying life. Many such persons, having realised that material pleasures were like the poisonous *kimpāka* fruit, having understood that the span ot life was no bigger than that of a bubble on the surface of water or a dew-drop on the *kuśa* tip, threw out their transcient affluence like dust deposited on cloth discarded their treasures of silver, gold, animals, grains, army, vehicles, cash, granneries, state, kingdom, districts, harems, fourfold wealth like *ganima*, etc., bullion, gems, jewels, pearls, conches, corals, etc., and joined the holy order as monks. Some

of these were initiated into monkhood hardly a fortnight back, some a month back, some two, three, till eleven months back, some one, two, three years back, till some who were initiated many years back. 14

निर्ग्रन्थों की ऋद्धि और तप

Nirgranthas—their Powers and Penances

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतेवासी वहवे निग्गंथा भगवंतो अप्पेगइआ आभिणिवोहियणाणी जाव...केवलणाणी अप्पेगइआ मणवलिआ वयवलिआ कायबलिआ अप्पेगइआ मणेणं सावाणुग्गह-समत्था वएणं सावाणुग्गह-समत्था काएणं सावाणुग्गह-समत्था अप्पेगइआ खेलोसहिपत्ता एवं जल्लोसहिपत्ता विप्पोसहिपत्ता आमोसहिपत्ता सव्वोसहिपत्ता अप्पेगइआ कोट्ठवुद्धी एवं वीयबुद्धी पडवुद्धी अप्पेगइआ पयाणुसारी अप्पेगइआ संभिन्नसोआ अप्पेगइआ खीरासवा अप्पेगइआ महुआसवा अप्पेगइआ सप्पिआसवा अप्पेगइआ अक्खीण-महाणसिआ एवं उज्जुमती अप्पेगइआ विउलमई विउव्वणिड्डिपत्ता चारणा विज्जाहरा आगासातिवाइणो।

उस काल (वर्तमान अवसर्पिणी) उस समय (चतुर्थ आरे) में श्रमण भगवान् महावीर के अन्तेवासी शिष्य वहुत से निर्ग्रन्थ वाह्य और आभ्यन्तर परिग्रह से रहित, संयम एवं तप से आत्मा को भावित करते हुए विहार करते थे। उनमें कई श्रमण आभिनिवोधिक ज्ञानी—मतिज्ञानी, जाव शब्द से श्रुतज्ञानी, अवधि ज्ञानी और मनःपर्याय ज्ञानी पदों का संग्रह किया गया है, तथा केवल ज्ञानी थे। अर्थात् कई दो ज्ञान—मतिज्ञान तथा श्रुतज्ञान के धारक थे, कई तीन ज्ञान—मतिज्ञान, श्रुतज्ञान और मनःपर्याय ज्ञान अथवा मतिज्ञान, श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान के धारक थे, कई चार ज्ञान—मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान और मनःपर्याय ज्ञान के धारक थे तथा

कई एक ज्ञान—केवलज्ञान के धारक थे। कई श्रमण मनोवली—मनः स्थिरता के धारक थे, कई वचनवली—प्रतिज्ञात आशय के निर्वाहक या परपक्ष को क्षुभित करने में सक्षम वचन शक्ति के धारी, कई कायवली—क्षुधा, पिपासा, उष्णता, शैत्य आदि प्रतिकूल शारीरिक स्थितियों को अग्लान भाव से सहन करते रहने की कायिक-शक्ति के धारक थे। कई मन से अपकार और उपकार करने का सामर्थ्य रखते थे, कई वचन द्वारा अपकार एवं उपकार करने में समर्थ थे, कई शरीर द्वारा अपकार और उपकार करने में सक्षम थे। कई श्रमण—निर्ग्रन्थ अपने खंखार से रोग मिटाने की शक्ति से युक्त थे, कई श्रमण शरीर के मैल, मूत्र विन्दु, विष्ठा तथा हस्त आदि के स्पर्श से रोग मिटा देने की विशेष क्षमता लिये हुए थे, कई श्रमण ऐसे थे, जिनके वाल, नाखून, रोम, मल आदि सभी औषधि रूप थे—वे इनसे रोग मिटा देने की शक्ति प्राप्त किये हुए थे। ये लब्धि जन्य विशेषताएँ थीं। कई श्रमण ऐसे थे कोष्ठ बुद्धि—कुशूल या कोठार में भरे हुए सुरक्षित धान्य की तरह प्राप्त हुए सूत्रार्थ को अपने में ज्यों का त्यों धारण करने में समर्थ बुद्धि वाले थे, कई बीजबुद्धि—विशालकाय वृक्ष को उत्पन्न करने वाले बीज के समान विस्तृत, विविध अर्थ प्रस्तुत करने वाली बुद्धि से युक्त थे, कई श्रमण पटबुद्धि—विशिष्ट वक्ताओं रूपी वनस्पति से प्रस्फुटित विभिन्न—प्रभूत सूत्रार्थ रूपी फूलों एवं फलों को संग्रहित करने में समर्थ बुद्धिवाले थे। कई श्रमण पदानुसारी—सूत्र के एक पद के ज्ञात होने पर उस सूत्र के अनुरूप सैंकड़ों पदों का अनुसरण करने की बुद्धि लिये हुए थे। कई श्रमण संभिन्न-श्रोता—वहुत प्रकार के भिन्न-भिन्न शब्दों को, जो अलग-अलग रूप से बोले जा रहे हों, उन्हें, एक साथ सुनकर स्वायत्त करने की विशेष क्षमता लिये हुए थे, अथवा सभी इन्द्रियाँ शब्द ग्रहण करने में समर्थ थीं। श्रोत्र इन्द्रिय के अतिरिक्त जिनकी अन्य इन्द्रियों में शब्दग्राहिता की विशेषता थी। कई दूध के समान सुमधुर, श्रोताओं के श्रोत्र-इन्द्रिय को सुहावने लगने वाले वचन वोलते थे, कई श्रमणों के वचन शहद के समान समस्त दोषों को मिटाने निमित्त रूप थे तथा आह्लादजनक थे। कई श्रमण अपने वचनों द्वारा घृत के सदृश स्निग्धता—स्नेह सम्पादित करने वाले थे। कई श्रमण ऐसे थे, जो जिस घर से भिक्षा लेकर आ जाए, उस घर की अवशेष भोज्य-सामग्री जब तक भिक्षादाता स्वयं भोजन न कर ले, तब तक हजारों-लाखों व्यक्तियों को भोजन करा देने के पश्चात् भी समाप्त न

हों, ऐसी लब्धि के धारक थे। कई श्रमण ऋजुमति तथा कई श्रमण विपुलमति मनःपर्याय ज्ञान के धारक थे। कई श्रमण विकुर्वणा—भिन्न-भिन्न रूप बना लेने की शक्ति से सम्पन्न थे, कई चारण-गति सम्बन्धी विशेष क्षमता लिये हुए थे, कई प्रज्ञप्ति आदि विद्याओं के धारक थे, कई आकाशगामिनी-शक्ति से युक्त थे, या आकाश से हिरण्य आदि इष्ट एवं अनिष्ट पदार्थों की वर्षा कराने की जिनमे विशिष्ट क्षमता थी, या आकाश आदि अमूर्त्त पदार्थों को सिद्ध करने में जो सक्षम थे।

In that period, at that time, Śramaṇa Bhagavān Mahāvīra had many monks in his order. Some of them were in possession of extra-sensory knowledge, till supreme knowledge. Some were powerful in mind, some in words and some in body. Some were capable to curse and bless by mind, some by words and some by body. The phlegm of some cured all ailments. Likewise the dirt, urine, stool, touch or any other like hair, nail, etc., of some others were capable to cure all ailments. Some possessed scriptural knowledge as if it was in a store, and others could do the same as if it was in a seed. Some had the capacity to recollect hundreds of parallel *sūtras* on hearing a single one, while some others were capable of holding many words from different sources. For people at large, some were as sweet as milk, as and when they spoke, some were like honey removing all dirt, some like clarified butter (*ghee*) attracted people to the subject of their discourse. With some, the supply of food was never exhausted whatever the number of guests (invitees). Some had a limited, while others an exhaustive, knowledge of the psychology of others. Some commanded the power to transform their body as they pleased, some had a tremendous capacity to walk, while some, like a Vidyādhara, were capable to fly.

अप्पेगइआ कणगावलिं तवोकम्मं पडिवण्णा एवं एकावलिं खुड्डाग-सीह-निक्कीलियं तवोकम्मं पडिवण्णा अप्पेगइआ महालयं

सीह-निक्कीलियं तवोकम्मं पडिवण्णा भद्दपडिमं महाभद्दपडिमं सव्वतोभद्दपडिमं आयंबिलवद्धमाणं तवोकम्मं पडिवण्णा मासिअं भिक्खुपडिमं एवं दोमासिअं पडिमं तिमासिअं पडिमं जाव.... सत्तमासिअं भिक्खुपडिमं पडिवण्णा। अप्पेगइआ पढमं सत्तराइंदिअं अप्पेगइआ भिक्खुपडिमं पडिवण्णा जाव....तच्चं सत्त-राइंदिअं भिक्खु-पडिमं पडिवण्णा अहोराइंदिअं भिक्खुपडिमं पडिवण्णा इक्कराइंदिअं भिक्खुपडिमं पडिवण्णा सत्त-सत्तमिअं भिक्खुपडिमं अट्ठट्ठमिअं भिक्खुपडिमं णव-णवमिअं भिक्खुपडिमं दस-दसमिअं भिक्खुपडिमं। खुड्डियं मोअ-पडिमं पडिवण्णा महल्लियं मोअपडिमं पडिवण्णा। जवमज्झं चंदपडिमं पडिवण्णा वइर-(वज्ज) मज्झं चंदपडिमं पडिवण्णा संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणा वीहरंति ।।१५।।

कई ऐसे थे, जो कनकावली तपः कर्म, और इसी प्रकार एकावली तप करने वाले थे, कई लघु-सिंह-निष्क्रीड़ित तपः कर्म करने में संलग्न थे, कई महासिंह-निष्क्रीड़ित तपः कर्म करने वाले थे, कई भद्र-प्रतिमा, महाभद्र-प्रतिमा, सर्वतोभद्र-प्रतिमा और आयंबिल वर्द्धमान तपः कर्म करने वाले थे, कई एक मासिक भिक्षु-प्रतिमा, इसी प्रकार द्वैमासिक भिक्षु-प्रतिमा, त्रैमासिक भिक्षु-प्रतिमा, चातुर्मासिक भिक्षु-प्रतिमा, पाञ्च मासिक भिक्षु-प्रतिमा, षाण्मासिक तथा साप्त मासिक भिक्षु-प्रतिमा ग्रहण किये हुए थे। कई प्रथम सप्त रात्रिन्दिवा—सात रात-दिन की भिक्षु-प्रतिमा के धारक थे, कई द्वितीय सप्त रात्रिन्दिवा भिक्षु-प्रतिमा तथा कई तृतीय सप्तरात्रिन्दिवा भिक्षु-प्रतिमा ग्रहण किये हुए थे। कई एक रात दिन की भिक्षु-प्रतिमा के धारक थे, कई एक रात की भिक्षु-प्रतिमा के धारक थे। कई श्रमण—निर्ग्रन्थ सात-सात दिनों की सात इकाइयों या सप्ताहों की भिक्षु-प्रतिमा ग्रहण किये हुए थे, कई आठ-आठ दिनों की इकाइयों की भिक्षु-प्रतिमा के धारक थे, कई नौ-नौ दिनों की नौ इकाइयों की भिक्षु-प्रतिमा के धारक थे, कई श्रमण दस-दस दिनों के दस दिन समूहों की भिक्षु-प्रतिमा को ग्रहण किये हुए थे, कई लघु मोक-प्रतिमा, कई महा-मोक-प्रतिमा, कई यवमध्यचन्द्र-प्रतिमा तथा कई वज्रमध्यचन्द्र-प्रतिमा के धारक थे ।।१५।।

Some had performed *kanakāvalī* penance and some *ekāvalī*; some had performed *laghusingha-niṣkrīḍita* and some *mahālayasinghaniṣkrīḍita*; some had performed *bhadra-pratimā*, and some *mahābhadra-pratimā*, some *sarvatobhadra-pratimā* and some *āyambila-vardhamāna*. Some had performed *bhikṣu-pratimā* for a month, some for two months, three months, till seven months, some for one seven days-and-nights, till three seven days-and-nights, some for a whole day and night and some for a single night. Some of the monks had to their credit seven times seven days-and-nights of *bhikṣu-pratimā*, some eight times eight days-and-nights, some nine times nine days-and-nights and some ten times ten days-and-nights. Some had to their credit *laghumoka-pratimā*, some *mahāmoka-pratimā*, some *java-madhyacandra-pratimā* and some *vajra-madhyacandra-pratimā*. In this manner, the *nirgrantha* monks lived on enriching their souls with restraint and penance. 15

स्थविरों के वाह्य-आभ्यन्तर गुण

Senior Monks—their Merits

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतेवासी वहवे थेरा भगवंतो जातिसंपण्णा कुलसंपण्णा वलसंपण्णा रूवसंपण्णा विणयसंपण्णा णाणसंपण्णा दंसणसंपण्णा चरित्तसंपण्णा लज्जासंपण्णा लाघवसंपण्णा ओअंसी तेअंसी वच्चंसी जसंसी जिअकोहा जिअमाणा जिअमाया जिअलोभा जिअइंदिया जिअणिद्दा जिअपरीसहा जीविआस-मरणभय-विप्पमुक्का वयप्पहाणा गुणप्पहाणा करणप्पहाणा चरणप्पहाणा णिग्गहप्पहाणा णिच्छयप्पहाणा अज्जवप्पहाणा मद्दवप्पहाणा लाघवप्पहाणा खंतिप्पहाणा मुत्तिप्पहाणा विज्जाप्पहाणा मंतप्पहाणा वेअप्पहाणा वंभप्पहाणा नयप्पहाणा नियमप्पहाणा सच्चप्पहाणा सोअप्पहाणा चारुवण्णा लज्जा-

तवस्सी-जिइंदिआ सोही अणियाणा अप्पुस्सुआ अबहिल्लेसा अप्पडिलेस्सा सुसामण्णरया दंता इणमेव णिग्गंथं पावयणं पुरओकाउं विहरंति ।

उस काल (वर्तमान अवसर्पिणी) उस समय (चतुर्थ आरे) में श्रमण भगवान् महावीर के अन्तेवासी शिष्य बहुत से स्थविर ज्ञान और चारित्र में वृद्धि प्राप्त, भगवन्त, जाति सम्पन्न—उत्तम मातृ पक्ष युक्त, कुल सम्पन्न—उत्तम पितृपक्ष युक्त, बल सम्पन्न, रूप सम्पन्न—सर्वांग सुन्दर, विनय सम्पन्न, ज्ञान सम्पन्न, दर्शन सम्पन्न, चारित्र सम्पन्न, लज्जा सम्पन्न, लाघव सम्पन्न—भौतिक पदार्थों और कषाय आदि के भार से रहित, ओजस्वी, तेजस्वी, वर्चस्वी—प्रभावशाली, यशस्वी थे, वे क्रोध, मान, माया और लोभ के उदय होने पर, उन्हें विफल कर देते थे, पाँचों इन्द्रियों पर नियन्त्रण रखते थे, निद्रा के वशीभूत नहीं होते थे, अनुकूल और प्रतिकूल परीषहों को जीत लेते थे, जीवन की इच्छा और मृत्यु के भय से रहित, व्रत प्रधान—श्रेष्ठतम साधुता के धारक, गुण प्रधान—संयम आदि सद्गुणों से युक्त, करण प्रधान—आहार-विशुद्धि आदि की विशेषताओं से सहित, चारित्र सम्पन्न—महाव्रत, दशविध यति धर्म आदि श्रेष्ठ आचार के धनी, निग्रह प्रधान—राग-द्वेष आदि शत्रुओं के निरोधक, निश्चय प्रधान—सत्य तत्व की निश्चितता में आश्वस्त अथवा कर्मफल के निश्चित विश्वासी, आर्जवप्रधान—सरलतायुक्त, मार्दव प्रधान—मृदुता सम्पन्न, लाघव प्रधान—आत्मलीनता के कारण किसी भी प्रकार के भार से विमुक्त क्षान्ति प्रधान—क्षमाशील, गुप्ति प्रधान—मानसिक, वाचिक और कायिक प्रवृत्तियों के नियन्त्रक, मुक्ति प्रधान—मोक्ष-मार्ग की ओर अग्रसर या कामनाओं से मुक्त, विद्या प्रधान—ज्ञान की भिन्न-भिन्न शाखाओं के पारगामी, मन्त्र प्रधान—सत् मन्त्रों के ज्ञाता, वेद प्रधान—वेद आदि लौकिक शास्त्रों के ज्ञाता या लोकत्तर शास्त्रों के ज्ञाता, ब्रह्मचर्य प्रधान—ब्रह्मचर्य अथवा श्रेष्ठतम अनुष्ठान में स्थित, नय प्रधान—नैगम, संग्रह आदि सात नयों के ज्ञाता, नियम प्रधान—नियमों के पालक, सत्य प्रधान, शौच प्रधान—आत्मिक शुचिता या पवित्रतायुक्त, (निर्दोष समाचारी के धारक) चारुवर्ण—सुन्दर वर्णयुक्त, लज्जा—संयम की विराधना में हृदय संकोच वाले, तप के तेज द्वारा जितेन्द्रिय, शुद्धहृदय, निदान रहित—स्वर्ग तथा अन्यान्य वैभव, समृद्धि आदि की कामना के विना अध्यात्म साधना में संलग्न, भौगिक उत्सुकता

से रहित थे, अपनी मनोवृत्तियों को संयम से बाहर नहीं जाने देते थे, उच्च मनोवृत्ति के धारक थे, श्रमण जीवन के सम्यक् निर्वाह में पूर्णतः संलग्न थे, इन्द्रिय मन आदि का दमन करने वाले इस वीतराग प्रभु द्वारा प्रतिपादित प्रवचन—तत्त्वानुशासन, धर्मानुशासन को ही आगे रखकर—प्रमाणभूत मानकर विचरण करते थे।

In that period, at that time, Śramaṇa Bhagavān Mahāvīra had many senior monks as his disciples. They were born in families wherein both the parents belonged to a noble line. They were rich in capacity, grace, humility, knowledge, faith and conduct, always careful and cautious about infamy and light in their belongings. They had oration, glory, expression and fame. They had overpowered anger, pride, attachment and greed ; also their organs of senses, their sleep and hardships. They had no hankering for life, no fear from death. They had performed great penances. They had sundry qualities of a high order. They were performers of great deeds. They had attained great merit by practising great vows. They were capable to safeguard themselves against misconduct, men of great determination, capable to crush the sprouts of attachment and pride, experts in their activities and capable to terminate anger and greed. They were great in *vidyās* (powers), great in *mantras* (enchanted words), wise, celibate, great in principles, master of resolve, unflinchingly truthful, great upholders of prescribed code (*samācārī*). Immensely graceful, great penancers who had conquered their senses, friend of all living beings, they never hankered after the result of their restraint and penance. They were free from curiosity. Nothing external attracted them except restraint. They bore no feeling of enmity towards anyone. They were always busy with the prescribed activities of the Śramaṇa monks. Habitually they obeyed the wishes and orders of their spiritual master and lived by holding the code of the *nirgranthas* to the fore.

तेसि णं भगवंताणं आयावाया वि विदिता भवंति परवाया विदिता भवंति आयावायं जमइत्ता नलवण-मिव मत्तमातंगा अच्छिद्द-पसिण-वागरणा रयण-करंडग-समाणा कुत्तिआवणभूआ पर-वादिय-पमद्दणा दुवाल-संगिणो समत्त-गणि-पिडग-धरा सव्वक्खर-सण्णि-वाइणो सव्वभासाणुगामिणो अजिणा जिणसंकासा जिणा इव अवितहं वागरमाणा संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणा विहरंति ॥ १६ ॥

वे स्थविर भगवान् अपने आत्मवाद सिद्धान्तों के विभिन्न पक्षों के भी ज्ञाता—जानकार थे। वे दूसरों के मत-मतान्तरों के भी वेत्ता थे। वे स्व-सिद्धान्तों को पुनः-पुनः आवृत्ति या अभ्यास से सम्यक्तया जान कर कमल-वन में मदोन्मत्त हाथी के समान थे, वे अछिद्र—निरन्तर प्रश्नोत्तर करने में सक्षम थे, वे रत्नों की पिटारी के समान सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन, सम्यक् चारित्र आदि दिव्य रत्नों से परिपूर्ण थे। वे कुत्तिकापण—ऊर्ध्वलोक, मध्यलोक और अधोलोक में प्राप्त होने वाली वस्तुओं के समान अपने लब्धि-वैशिष्ट्य के कारण सभी इच्छित अर्थ—प्रयोजन संपादित करने में सक्षम थे। दूसरों के मत-मतान्तरों या सिद्धान्तों का युक्ति-पुरस्सर सर्वथा खण्डन करने में समर्थ थे। आचारांग सूत्रकृतांग आदि बारह अंगों के वेत्ता—जानकार थे। समस्त गणि-पिटक—आचार्य का पिटक, प्रकीर्णक, श्रुतादेश, श्रुत निर्युक्ति आदि सर्व जिन—निर्ग्रन्थ-प्रवचन के धारक थे, वे अक्षरों के समस्त प्रकारों के संयोगों के ज्ञाता थे, समस्त भाषाओं के अनुगामी—विशिष्ट-ज्ञाता थे, वे जिन—सर्वज्ञ न होते हुए भी सर्वज्ञ के समान थे। वे सर्वज्ञों के सदृश अवितथ—सत्य या यथार्थ प्ररूपणा करते हुए संयम तथा तप से आत्मा को भावित करते हुए विहार करते थे ॥ १६ ॥

These monks knew their own tenets as well as the tenets of others. Having thoroughly known their own doctrines through repetition, they roamed in their spiritual world like an infatuated elephant in a lotus forest, always questioning and answering among themselves. They were like a cluster

of gems or even a heavenly shop (*kutrikāpaṇa*) where one could get anything. They were capable to defeat their adversaries. They were the masters of eleven *Aṅgas*. They possessed encyclopaedic knowledge (covering texts like *Prakīrṇaka, Śrutādeśa, Śrutaniryukti*, etc). They knew all combinations of words as well as all languages. Though not yet Jinas themselves, they were very near to them. Like an omniscient personality, they propounded the fundamentals (of the Śramaṇa path) and lived on by enriching their souls through restraint and penance. 16

अनगारों के गुण

Monks and their qualities

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतेवासी बहवे अणगारा भगवंतो ईरिआसमिआ भासासमिआ एसणासमिआ आदाण-भंड-मत्त-निक्खेवणासमिआ उच्चार-पासवण-खेल-सिंघाण-जल्ल-पारिट्ठावणिया समिआ मणगुत्ता वयगुत्ता कायगुत्ता गुत्ता गुत्तिंदिया गुत्तबंभयारी अममा अकिंचणा छिण्णग्गंथा छिण्णसोआ निरुवलेवा ।

उस काल (वर्तमान अवसर्पिणी) उस समय (चतुर्थ आरे) म श्रमण भगवान् महावीर के अन्तेवासी शिष्य बहुत से अनगार—साधु थे। वे ईर्या—गमन, आगमन, हलन-चलन आदि क्रिया, भाषा का विवेकपूर्वक प्रयोग, चार प्रकार के आहारों की गवेषणा, निर्दोष रूप से ग्रहण, वस्त्र, पात्र आदि उपकरणों को उठाना-रखना तथा मल, मूत्र, खंखार, नाक का मैल को त्यागने में यतनशील थे। वे मन, वचन और काय की क्रियाओं का संयम करने वाले थे, शब्द, वर्ण, गन्ध आदि विषयों में राग रहित अर्थात् अन्तर्मुख, इन्द्रियों को उनके विषय व्यापार में लगाने की उत्सुकता से रहित, नियमोपनियम सहित—नववाड़ पूर्वक ब्रह्मचर्य का पालन करने वाले, महत्व

से रहित, परिग्रह से रहित, (संसार से जोड़ने वाले पदार्थों से मुक्त, संसार के प्रवाह में नहीं बहने वाले) कर्म बन्ध के लेप—हेतुओं से रहित थे।

In that period, at that time, Sramaṇa Bhagavān Mahāvīra had many monks as his disciples who were disciplined in the practice of controls (*samitis*, etc.), in their movements, their words (expression), their begging, maintenance of their begging bowls and depositing their excreta. They also practised controls of the mind, words and body called *guptis*. They were inwardly inclined, never allowed their sense-organs to come in touch with ephemeral objects and were firmly rooted in celibacy. They were free from 'mine'-ness, free from the possession of objects (free from objects which established contact with mundane life, and also free from grief and misery) and free from factors which generated *karma* bondage.

कंसपातिव मुक्कतोआ संख इव निरंगणा जीवो विव अप्पडिहयगती जच्च-कणगंपिव जातरूवा आदरिस-फलगा विव पागडभावा कुम्मो इव गुत्तिदिआ पुक्खर- पत्तं व निरुवलेवा गगणमिव निरालंवणा अणिलो इव निरालया चंद इव सोमलेसा सूर इव दित्ततेआ सागरो इव गंभीरा विहग इव सव्वओ विप्पमुक्का मंदर इव अप्पकंपा सारयसलिलं व सुद्ध-हिअया खग्गि-विसाणं व एगजाया भारंड-पक्खीं व अप्पमत्ता कुंजरो इव सोंडीरा वसभो इव जायत्थामा सीहो इव दुद्धरिसा वसुंधरा इव सव्व-फास-विसहा सुहुअ-हुआसणे इव तेअसा जलंता।

कांसे के पात्र में जैसे जल का लेप नहीं लगता है, उसी प्रकार वे अनगार स्नेह, आसक्ति आदि से रहित थे, जिस प्रकार शंख सम्मुखीन रंग से अप्रभावित रहता हैं, उसी प्रकार वे राग, द्वेष, निन्दा, प्रशंसा आदि से अप्रभावित थे, वे जीव के समान अप्रतिहत—निरोध रहित (संयम लक्ष्य की

ओर) गतिशील थे। उत्तम जाति के अन्य कुधातुओं से अमिश्रित विशुद्ध स्वर्ण के समान वे उत्कृष्ट भाव से निर्दोष चारित्र्य के पालक थे। दर्पण-पट्ट के समान वे अन्तर-बाहर में कपट-रहित शुद्ध-भाव युक्त थे। कछुए के समान वे अपनी इन्द्रियों को विषयों से खींच कर निवृत्ति भाव में स्थित थे। वे कमल-पत्र के समान निर्लेप थे, आकाश के समान निरपेक्ष थे अर्थात् वे आत्म-भाव में लीन थे। वायु के समान गृह-रहित थे, चन्द्र के समान सौम्य थे। सूर्य के समान तेजस्वी अर्थात् आत्मिक और दैहिक तेज से युक्त थे। वे समुद्र के समान गम्भीर थे, पक्षी के समान सर्वथा मुक्त थे अर्थात वे अनगार—परिवार, नियत वास आदि से पूर्णतः मुक्त थे। मेरु पर्वत के समान अप्रकम्प—अनुकूल और प्रतिकूल परीषहों में अविचल थे। शरद ऋतु के समान शुद्ध हृदय वाले थे, गँडे के सींग के समान एकजात राग-द्वेष आदि विभावों से रहित, अर्थात् एकमात्र आत्मनिष्ठ थे, भारण्ड पक्षी के समान अप्रमत्त—सर्वथा जागृत थे। हाथी के समान शक्तिशाली अर्थात् कषाय रूपी शत्रुओं को जीतने में समर्थ थे। वृषभ के सदृश धैर्यशील थे, सिंह के समान दुर्धर्ष कष्टों-परीषहों से अपराजेय थे, पृथ्वी के समान अनुकूल-प्रतिकूल शीत, उष्ण आदि सभी स्पर्शों को समभाव से सहन करने में समर्थ थे, घृत द्वारा भली भांति रूप से हवन की हुई अग्नि के समान ज्ञान तथा तप के तेज से जाज्वल्यमान—दीप्तिमान थे।

They were rid of affection like a small bell-metal vessel. They were spotless like a conch. Like a soul, they had unobstructed movement. They were pure in conduct like pure gold. They were clean in their inclinations like the surface of a mirror. They had their limbs hidden like those of a tortoise. They were free from contamination like a lotus leaf. They were without a support like the sky. They were without a home like free air. They caused no pain like the beams of the moon. They were rich in (physical as well as spiritual) capacity like the sun. They were ocean in depth. They were whdly free like the birds. They were firmly rooted like Mount Meru. They were pure at heart like water in autumn. They were uniform (straight) like a rhino's horn. They were uninfatuated (ever alert) like a *bhāruṇḍa* bird.

They were powerful like an elephant. They were patient like a bull. They were invincible like a lion. They were tolerant to sundry touches like the earth. They were always beaming like a well-fed fire.

नत्थि णं तेसि णं भगवंताणं कत्थइ पडिबंधे भवइ। से अ पडिबंधे चउव्विहे पण्णत्ते। तं जहा—दव्वओ खित्तओ कालओ भावओ। दव्वओ णं सचित्ताचित्त-मीसिएसु दव्वेसु खेत्तओ गामे वा णयरे वा रण्णे वा खेत्ते वा खले वा घरे वा अंगणे वा कालओ समए वा आवलियाए वा जाव... अयणे वा अण्णतरे वा दीह-काल-संजोगे भावओ कोहे वा माणे वा मायाए वा लोहे वा भए वा हासे वा—एवं तेसिं ण भवइ। ते णं भगवंतो वासावासवज्जं अट्ठगिम्ह-हेमंतिआणि मासाणि गामे एगराइआ णयरे पंचराइआ वासी-चंदण-समाण-कप्पा सम-लेट्ठु-कंचणा सम-सुह-दुक्खा इहलोग-परलोग-अप्पडिबद्धा संसार-पारगामी कम्म-णिग्घायणट्ठाए अब्भुट्ठिआ विहरंति ॥ १७ ॥

उन पूजनीय साधुओं के कहीं पर भी किसी प्रकार का प्रतिवन्ध—आसक्ति का कारण या रुकावट नहीं थी और वह प्रतिवन्ध चार प्रकार का कहा गया है। वे चार प्रकार ये हैं—द्रव्य की अपेक्षा से, क्षेत्र की अपेक्षा से, काल की अपेक्षा से तथा भाव की अपेक्षा से। द्रव्य की अपेक्षा से सचित्त, अचित्त और मिश्रित द्रव्यों में, क्षेत्र की अपेक्षा से गांव, नगर, जंगल, खेत, खलिहान, घर और आंगन में, काल की अपेक्षा से समय, आवलिका, (आनप्राण, स्तोक, लव, मुहूर्त, दिन-रात, पक्ष, मास) अयन—छः मास, अन्य दीर्घकालिक संयोग में, तथा भाव की अपेक्षा से क्रोध, मान, माया, लोभ, भय अथवा हास्य में, उनका इस प्रकार का कोई प्रतिवन्ध—आसक्ति का हेतु नहीं था। वे श्रमण (अनगार) भगवन्त वर्षावास—चातुर्मास्य के चार महीने को छोड़कर ग्रीष्म—गर्मी तथा हेमन्त—सर्दी के काल इन दोनों के आठ

महीनों तक गांव में एक दिन-रात तथा नगर में पांच रात निवास करते थे। अर्थात् पाँचवें सप्ताह में विहार (उनतीस दिन) करते थे। चन्दन जैसे अपने को काटने वाले वसूले को भी सुगन्धित बना देता है क्योंकि चन्दन का स्वभाव ही सुगन्धित बना देना है, उसी प्रकार वे अनगार—साधु अपने अपकारी के प्रति भी उपकार करने की वृत्ति रखते थे। अथवा वे अपकारी और उपकारी इन दोनों के प्रति राग-द्वेष-रहित समान भाव लिए रहते थे। वे मिट्टी के ढेले और स्वर्ण को एक समान समझने वाले तथा सुख और दुःख में समान भाव रखने वाले थे। वे ऐहिक तथा पारलौकिक आसक्ति से रहित (अनासक्त) थे। वे नारक, तिर्यंच, मनुष्य और देव—चतुर्विध गति रूप संसार के पार पहुँचने वाले, अर्थात् मोक्षाभिगामी तथा कर्मों का नाश करने हेतु समुद्यत होते हुए विचरण करते थे ॥ १७ ॥

These monks had no obstruction whatsoever at any place. Obstruction has been stated to be of four types, viz., of object, of space, of time and of cognition. As to object, obstruction from living organism, lifeless objects and mixed objects ; as to space, obstruction from village, town, forest, farm, room, courtyard, etc. ; as to time, obstruction from eternal time (*kāla*), unit of time (*samaya*), *āvalikā*, till *ayana* or any other longer period ; as to cognition, obstruction from anger, pride, attachment, greed, fear and laughter. Leaving aside the four months of the rainy season, they never stayed in a village beyond one night and in a town beyond five nights. They were always alike to excreta and sandal paste, to a lump of clay and a bar of gold, to pleasure and pain. They were free from attachment to this life as well as life hereafter. They lived with a single purpose which was to annihilate totally the bondage of *karma* which would entitle them to liberation. 17

अनगारों की तपश्चर्या

Penances by Monks

तेसिं णं भगवंताणं एतेणं विहारेणं विहरमाणाणं इमे एआरूवे अब्भिंतर-बाहिरए तवोवहाणे होत्था । तं जहा—अब्भिंतरए छव्विहे बाहिरए वि छव्विहे ॥१८॥

इस प्रकार के विहार से विचरणशील उन अनगार भगवन्तों का यों—इस रूप से आभ्यन्तर तथा बाह्य तपमूलक आचार था। जैसा कि—आभ्यन्तर तप छः प्रकार का है तथा बाह्य तप भी छः प्रकार का है। ॥१८॥

While wandering, the monks were required to perform penances, external as well as internal. Internal penance has six types and external penance too has six types. 18

बाह्य तप

External Proces

से किं तं बाहिरए ?

बाहिरए छव्विहे पण्णत्ते । तं जहा—अणसणे ऊणो (अवमो) अरिया भिक्खा अरिया रसपरिच्चाए कायकिलेसे पडिसंलीणया ।

वह बाह्य तप क्या है ? (वे कौन-कौन से हैं ?)

बाह्य तप छः प्रकार का कहा गया है। (१) अनशन—आहार नहीं करना, (२) अवमोदरिका—भूख से कम खाना अथवा द्रव्यात्मक और भावात्मक साधनों को कम उपयोग में लाना, (३) भिक्षाचर्या—भिक्षा से प्राप्त संयमी जीवनोपयोगी निर्दोष साधनों—आहार, वस्त्र, पात्र, औषध आदि वस्तुओं को ग्रहण करना, (४) रस परित्याग—रसास्वाद से विमुख हो जाना या रसप्रद पदार्थों का त्याग करना, (५) कायक्लेश—सुकुमारता या

सुविधाप्रियता को छोड़ने हेतु कायिक दमन के अनुरूप कष्टमय उपायों को स्वीकार करना, (६) प्रतिसंलीनता—आभ्यन्तर और बाह्य चेष्टाओं का संवरण करने हेतु तदनुरूप बाह्य उपायों को अपनाना।

What are these external penances ?

External penances are six in number, which are : totally stopping the intake of food, reducing the intake of food, living on alms, giving up hankering for taste, undergoing physical hardship, holding back effort, internal as well as external.

से किं तं अणसणे ?

अणसणे दुविहे पण्णत्ते। तं जहा—इत्तरिए अ आवकहिए अ।

वह अनशन क्या है ?—कितने प्रकार का है ?

अनशन दो प्रकार का कहा गया है। जैसे कि—(१) इत्वरिक—मर्यादित समय के लिये आहार का त्याग करना (२) यावत्कथित—जीवन पर्यन्त आहार का त्याग करना।

What it is to abstain from the intake of food ?

Abstension from food intake is of two types, viz., abstension for a certain period of time (*itvarika*) and abstension for the whole life (*yāvatkathika*).

से किं तं इत्तरिए ?

इत्तरिए अणेगविहे पण्णत्ते। तं जहा — चउत्थभत्ते छट्ठभत्ते अट्ठमभत्ते दसमभत्ते बारसभत्ते चउद्दसभत्तं सोलसभत्ते अद्धमासिए भत्ते मासिए भत्ते दोमासिए भत्ते तेमासिए भत्ते चउमासिए भत्ते पंचमासिए भत्ते छम्मासिए भत्ते। से तं इत्तरिए।

वह इत्वरिक क्या है ?—कितने प्रकार का है ?

इत्वरिक तप अनेक प्रकार का बतलाया गया है। जैसे चतुर्थ भक्त—एक दिन-रात के लिये आहार का त्याग करना (उपवास), षष्ठ भक्त—दो दिन-रात के लिये आहार का त्याग, निरन्तर दो उपवास (बेला), अष्टम भक्त—तीन उपवास (तेला), दशम भक्त—चार दिन के उपवास (चौला), द्वादश भक्त—निरन्तर पाँच दिन के उपवास, चतुर्दश भक्त—छः दिन के उपवास, षोडश भक्त—सात दिन के उपवास, अर्द्धमासिक भक्त—पन्द्रह दिन के उपवास (आधे महीने), मासिक भक्त—एक महीने तक निरन्तर-उपवास (मास खमण), द्वैमासिक भक्त—निरन्तर दो महीने के उपवास, त्रैमासिक भक्त—तीन महीने के उपवास, चातुर्मासिक भक्त—चार महीने के उपवास, पाञ्चमासिक भक्त—पाँच महीनों के उपवास, षाण्मासिक भक्त—छः महीनों के उपवास, यह ऐसा इत्वरिक तप है।

What is abstension from food intake for a certain period of time ?

It has many forms, such as, giving up four meals, six meals, eight meals, ten meals, twelve meals, fourteen meals, sixteen meals, fasting for a month, for two months, three, four, five, six months. Such is abstension from food intake for a certain period or *itvarika* type of external penance.

से किं तं आवकहिए ?

आवकहिए दुविहे पण्णत्ते। तं जहा—पाओवगमणे य भत्त-पच्चक्खाणे य।

वह यावत्कथिक क्या है ? उसके कौन-कौन से प्रकार हैं ?

यावत्कथिक के दो भेद कहे गये हैं। जैसे कि पादपोपगमन—कटे हुए वृक्ष के समान स्थिर शरीर रखकर आजीवन आहार का त्याग और भक्त प्रत्याख्यान—जीवन पर्यन्त आहार का त्याग करना।

What is suspension of intake of food for life ?

It has two types, viz., after such suspension, remaining motionless like a tree till death (*pādapopagamana*) and after such suspension he is not debarred from physical movement or movement of limbs (*bhakta-pratyā khyāna*).

से किं तं पाओवगमणे ?

पाओवगमणे दुविहे पण्णत्ते । तं जहा—वाघाइमे अ निव्वाघाइमे अ । नियमा अप्पडिकम्मे । से तं पाओवगमणे ।

वह पादपोपगमन क्या है ? वह कितने प्रकार का है ?

पादपोपगमन दो प्रकार का बतलाया गया है। जैसा कि (१) व्याघातिम—सिंह आदि प्राणघातक प्राणी अथवा दावानल आदि उपद्रवों के उपस्थित हो जाने पर जीवन भर के लिये आहार का त्याग और (२) निर्व्याघातिम—विघ्नरहित—सिंह, दावानल आदि से सम्बद्ध उपद्रव न होने पर भी मृत्यु-काल को सन्निकट जानकर स्वेच्छा से जीवन भर के लिये आहार-त्याग । इस अनशन में अप्रतिकर्म—शरीर-संस्कार, हलन-चलन आदि क्रियाओं का त्याग। इस प्रकार पादपोपगमन यावत्कथिक अनशन का विवेचन है ।

What is *pādapopagamana ?*

It has two types, viz., *vyāghātima* which is remaining motionless in the presence of a lion or forest-fire and *nirvyāghātima* which is remaining motionless voluntarily, particularly when one realises that death is not far (but under no threat from a lion or fire). As a rule, it permits no physical movement whatsoever. Such is *pādapopagamana.*

से किं तं भत्तपच्चक्खाणे ?

भत्तपच्चक्खाणे दुविहे पण्णत्ते । तं जहा—वाघाइमे अ निव्वाघाइमे अ । णियमा सप्पडिकम्मे । से तं भत्तपच्चक्खाणे । से तं अणसणे ।

वह भक्त प्रत्याख्यान क्या है ? उसके कितने भेद हैं ?

भक्त प्रत्याख्यान दो प्रकार का वतलाया गया है—(१) व्याघातिम—सिंह आदि प्राणघातक प्राणी या दावानल आदि उपद्रव उपस्थित हो जाने पर जीवन भर के लिये आहार का त्याग और (२) निर्व्याघातिम—विघ्न रहित—सिंह, दावानल आदि से सम्बद्ध उपद्रव न होने पर भी मृत्युकाल समीप जानकर अपनी इच्छा से आजीवन आहार का त्याग करना। इस भक्तप्रत्याख्यान में सप्रतिकर्म शरीर संस्कार, हलन-चलन आदि क्रियाएँ-प्रक्रियाएँ नियमतः होती हैं। यह ऐसा भक्त प्रत्याख्यान है। इस प्रकार यह अनशन का स्वरूप कहा गया है।

What is *bhakta-pratyākhyāna ?*

It has two types, viz., *vyāghātima* and *nirvyāghātima,* (which are the same as before). As a rule, it permits physical movement as well as movement of limbs. Such is *bhakta-pratyākhyāna.* Such is the suspension of the intake of food.

से किं तं ओमोअरिआ ?

ओमोअरिआ दुविहा पण्णत्ता । तं जहा—दव्वोमोअरिआ य भावोमोअरिआ य ।

वह अवमोदरिका क्या है ? उसके कितने भेद हैं ?

अवमोदरिका दो प्रकार की कही गई है। जैसे कि (१) द्रव्य-अवमोदरिका — खान, पान आदि से सम्बद्ध पदार्थों का पेट भर कर उपयोग

नहीं करना अर्थात् कम खाना और (२) भाव-अवमोदरिका—आत्म-प्रतिकूल या आवेशमय भावों का विचार—चिन्तन में कम उपयोग करना।

What is under-feeding (*avamodarikā*) ?

It has two types, viz., one related to object and the other to cognition (*dravya* and *bhāva*).

से किं तं दव्वोमोअरिआ ?

दव्वोमोअरिआ दुविहा पण्णत्ता। तं जहा — उवगरण-दव्वोमोअरिआ य भत्त-पाण-दव्वोमोअरिआ य।

वह द्रव्य-अवमोदरिका क्या है ? उसके कितने भेद हैं ?

द्रव्य-अवमोदरिका दो प्रकार की कही गई है। जैसे कि (१) उपकरण-द्रव्य-अवमोदरिका—वस्त्र, पात्र आदि देहोपयोगी सामग्री का अल्प उपयोग करना, (२) भक्तपान-अवमोदरिका—खाद्य, स्वाद्य, पेय आदि पदार्थों का अल्पमात्रा में उपयोग करना अर्थात् भूख से कम खाना।

What is the one related to object (*dravya-avamodarikā*) ?

It has two types, viz., one related to things used by the monks and the other related to their intake of food. (Both are to be had in the smallest quantity.)

से किं तं उवगरण-दव्वोमोअरिआ ?

उवगरण-दव्वोमोअरिआ तिविहा पण्णत्ता। तं जहा — एगे वत्थे एगे पाए चियत्तोवकरण-सातिज्जणया। से तं उवगरण-दव्वोमोअरिआ।

वह उपकरण-द्रव्य-अवमोदरिका क्या है ? उसके कितने प्रकार हैं ?

उपकरण-द्रव्य-अवमोदरिका के तीन भेद बतलाये गये हैं—(१) एक वस्त्र रखना, (२) एक पात्र रखना, (३) मनोनुकूल निर्दोष उपकरण रखना। यह ऐसी उपकरण-द्रव्य-अवमोदरिका है।

What is implied by restricted use of things ?

It has three types, viz., first, related to cloth, second, to the begging bowl, and third, any other thing which must be pleasant, reliable and flawless. Such is *dravya-avamodarikā* of things in use.

से किं तं भत्तपाण-दव्वोमोअरिआ ?

भत्तपाण-दव्वोमोअरिआ अणेगविहा पण्णत्ता। तं जहा—अट्ठ-कुक्कुडि-अंडग-प्पमाण-मेत्ते कवले आहारमाणे अप्पाहारे। दुवालस-कुक्कुडि-अंडग-प्पमाण-मेत्ते कवले आहारमाणे अवड्ढो-मोअरिआ। सोलस-कुक्कुडि-अंडग-प्पमाण-मेत्ते कवले आहारमाणे दुभागपत्तो-मोअरिआ। चउव्वीस-कुक्कुडि-अंडग-प्पमाण-मेत्ते कवले आहारमाणे पत्तो-मोअरिआ। एक्कतीस-कुक्कुडि-अंडग-प्पमाण-मेत्ते कवले आहारमाणे किंचूणो-मोअरिआ। बत्तीस-कुक्कुडि-अंडग-प्पमाण-मेत्ते कवले आहारमाणे पमाणपत्ता। एत्तो एगेण वि घासेण ऊणयं आहारमाहारेमाणे समणे णिग्गंथे णो पकाम-रस-भोईत्ति वत्तव्वं सिआ। से तं भत्तपाण-दव्वोमोअरिआ। से तं दव्वोमोअरिआ।

वह भक्तपान-द्रव्य-अवमोदरिका क्या है ? उसके कौन-कौन से भेद हैं ?

भक्तपान द्रव्य अवमोदरिका अनेक प्रकार की बतलाई गई हैं, जो इस प्रकार हैं : मुर्गी के अंडे के परिमाण के केवल आठ कवल—ग्रास

आहार करना अल्पाहार—अवमोदरिका है। मुर्गी के अंडे के परिमाण के अनुसार केवल बारह ग्रास आहार करना अपार्ध—आधे से अधिक अवमोदरिका है। मुर्गी के अंडे के परिमाण के केवल सोलह कवल आहार करना द्विभाग प्राप्त अथवा अर्ध अवमोदरिका है। मुर्गी के अंडे के परिमाण के केवल चौबीस ग्रास आहार करना चौथाई अवमोदरिका है। मुर्गी के अंडे के परिमाण के केवल इकत्तीस ग्रास आहार करना कुछ कम अवमोदरिका है। मुर्गी के अण्डे के परिमाण के केवल बत्तीस ग्रास आहार करने वाला प्रमाण प्राप्त पूर्ण आहार करने वाला है। अर्थात् बत्तीस ग्रास भोजन परिपूर्ण आहार कहलाता है। इससे एक ग्रास भी कम आहार करने वाला श्रमण—निर्ग्रन्थ बहुत अधिक आहार करने वाला कहे जाने योग्य नहीं है। इस प्रकार यह भक्तपान-द्रव्य-अवमोदरिका है। यह द्रव्य-अवमोदरिका का स्वरूप कहा गया है।

What is implied by restricted use of food ?

It may have many types, such as, taking eight morsels each of the size of a fowl's egg which is little intake ; twelve morsels of the same size called *apārdha* which leave more than half *avamodarikā* ; sixteen such morsels which leave half *avamodarikā* ; twenty-four such morsels which leave a quarter-*avamodarikā* ; thirty one such morsels leave only a slight *avamodarikā* ; thirty-two such morsels make one full standard meal. A monk taking even a morsel less cannot be called a glutton. Such is restricted use of food.

से किं तं भावोमोअरिआ ?

भावोमोअरिआ अणेगविहा पण्णत्ता। तं जहा — अप्पकोहे अप्पमाणे अप्पमाए अप्पलोहे अप्पसद्दे अप्पझंझे। से तं भावोमोअरिआ। से तं ओमोअरिआ।

वह भाव अवमोदरिका क्या है ? इसके कौन-कौन से भेद हैं ?

भाव अवमोदरिका अनेक प्रकार की बतलाई गई हैं। जो इस प्रकार है—अल्प क्रोध, अल्प मान (अहंकार), अल्प माया (प्रवञ्चना), अल्प लोभ, अल्प शब्द-कषाय के आवेश में होने वाली शब्द प्रवृत्ति का त्याग, अल्प-झंझ—कलह-उत्पादक वचनों का त्याग। यहाँ 'अल्प' शब्द का प्रयोग अभाव या निषेध के अर्थ में हुआ है। जिसका तात्पर्य यह है कि क्रोध, मान आदि का उदय तो होता है, पर साधक आत्मबल के द्वारा उन्हें टाल देता है या स्वयं तदुत्पादक-निमित्तों से हट जाता है।

What is the one related to congnition (*bhāva-avamodarikā*) ?

It has many types such as, little anger, little pride, little attachment, little greed, little fury (word), little animosity. Such is *avamodarikā.*

से किं तं भिक्खायरिया ?

भिक्खायरिया अणेगविहा पण्णत्ता। तं जहा — दव्वाभिग्गह-चरए खेत्ताभिग्गह-चरए कालाभिग्गह-चरए भावाभिग्गह-चरए उक्खित्त-चरए णिक्खित्त-चरए उक्खित्त-णिक्खित्त-चरए णिक्खित्त-उक्खित्त-चरए वट्टिज्जमाण-चरए साहरिज्जमाण-चरए उवणीअ-चरए अवणीअ-चरए उवणीअ-अवणीअ-चरए अवणीअ-उवणीअ-चरए संसट्ठ-चरए असंसट्ठ-चरए तज्जात-संसट्ठ-चरए अण्णाय-चरए मोण-चरए दिट्ठ-लाभिए अदिट्ठ-लाभिए पुट्ठ-लाभिए अपुट्ठ-लाभिए भिक्खा-लाभिए अभिक्ख-लाभिए अण्ण-गिलायए ओवणिहिए परिमित-पिंड-वाइए सुद्धेसणिए संखायत्तिए। से तं भिक्खायरिया।

वह भिक्षाचर्या क्या है ? उसके कौन-कौन से भेद हैं ?

भिक्षाचर्या अनेक प्रकार की बतलाई गई हैं जो इस प्रकार हैं : द्रव्याभिग्रहचर्या—खाने-पीने से सम्बन्धित वस्तुओं के विषय में विशेष प्रतिज्ञा करना। अमुक वस्तु अमुक स्थिति में प्राप्त हो तो उसे ग्रहण करना इस प्रकार भिक्षा

के सन्दर्भ में कठोर अभिग्रह स्वीकार करना। क्षेत्राभिग्रहचर्या—ग्राम, नगर, स्थान विशेष आदि से सम्बद्ध प्रतिज्ञा स्वीकार करना। कालाभिग्रहचर्या—प्रथम प्रहर, द्वितीय प्रहर आदि समय से सम्बद्ध प्रतिज्ञा स्वीकार करना। भावाभिग्रहचर्या—हास्य, गान, विनोद और वार्ता आदि में संलग्न स्त्री-पुरुष से सम्बद्ध प्रतिज्ञा स्वीकार करना। उत्क्षिप्तचर्या—भोजन पकाने के वर्तन से गृहस्थ के अपने प्रयोजन हेतु निकाला हुआ आहार लेने का अभिग्रह—प्रतिज्ञा स्वीकार करना। निक्षिप्तचर्या—भोजन पकाने के वर्तन से नहीं निकाला हुआ आहार लेने की प्रतिज्ञा करना। उत्क्षिप्त-निक्षिप्तचर्या—भोजन पकाने के वर्तन से निकाल कर वहीं या अन्यत्र रखा हुआ आहार, अथवा अपने प्रयोजन से निकाला हुआ या नहीं निकाला हुआ इन दोनों प्रकार का आहार ग्रहण करने की प्रतिज्ञा करना। निक्षिप्त-उत्क्षिप्त चर्या—भोजन पकाने के वर्तन में से निकाल कर अन्य स्थान पर रखा हुआ, फिर उसी में से उठाया हुआ आहार लेने का अभिग्रह—प्रतिज्ञा लिये रहना। वर्तिव्यमान चर्या—खाने के लिये परोसे हुए आहार में से भिक्षा ग्रहण करने की प्रतिज्ञा स्वीकार करना। संह्रियमाणचर्या—जो भोजन ठंडा करने के लिये वस्त्र, पात्र आदि में फैलाया गया हो, फिर समेट कर पात्र आदि में डाला जा रहा हो, ऐसे भोजन में से आहार ग्रहण करने की प्रतिज्ञा स्वीकार करना। उपनीत चर्या—किसी के द्वारा किसी के लिये उपहार रूप में प्रेषित की गई भोजन सामग्री में से भिक्षा ग्रहण करने की प्रतिज्ञा करना। अपनीतचर्या—किसी को दी जाने वाली भोजन-सामग्री में से निकाल कर अन्यत्र रखी हुई में से आहार ग्रहण करने की प्रतिज्ञा लिये रहना। उपनीतापनीतचर्या—स्थानान्तरित की हुई भोजनोपहार-सामग्री में से भिक्षा ग्रहण करने की प्रतिज्ञा लिये रहना या भिक्षादाता द्वारा पहले किसी अपेक्षा से गुण तथा बाद में किसी अपेक्षा से दुर्गुण कथन के साथ दी जाने वाली भिक्षा स्वीकार करने का अभिग्रह—प्रतिज्ञा लेना। अपनीतोपनीतचर्या—किसी के लिये उपहार—भेंट रूप में प्रेषित करने हेतु अलग रखी हुई भोज्य-सामग्री में से भिक्षा लेने की प्रतिज्ञा लिये रहना या भिक्षा प्रदाता द्वारा पहले किसी अपेक्षा से दुर्गुण तथा बाद में किसी अपेक्षा से सद्गुण कथन के साथ दी जाने वाली भिक्षा स्वीकार करने का अभिग्रह—प्रतिज्ञा करना। संसृष्ट चर्या—लिप्त हाथ आदि से दी जाने वाली भिक्षा स्वीकार करने की प्रतिज्ञा रखना। असंसृष्ट चर्या—अलिप्त—स्वच्छ हाथ आदि से दी जाने वाली भिक्षा लेने की प्रतिज्ञा स्वीकार

करना। तज्जात-संसृष्टचर्या—दिये जाने वाले पदार्थ से संभृत—लिप्त हाथ आदि से दिये जाने वाले आहार को ग्रहण करने की प्रतिज्ञा करना। अज्ञातचर्या—अपने को अपरिचित रख कर निरवद्य भिक्षा स्वीकार करने की प्रतिज्ञा करना। मौनचर्या—स्वयं मौन रह कर भिक्षा ग्रहण करने का अभिग्रह—प्रतिज्ञा लेना। दृष्टलाभ—दिखाई देता आहार लेने की प्रतिज्ञा स्वीकार करना या पूर्व काल में देखे हुए दाता के हाथ से भिक्षा स्वीकार करने की प्रतिज्ञा लेना। अदृष्टलाभ—पूर्व काल में नहीं देखा हुआ आहार या पहले नहीं देखे हुए दाता द्वारा दिया जाता आहार ग्रहण करने की प्रतिज्ञा लिये रहना। पृष्टलाभ—'श्रमण, आपको क्या आहार दें', यों पूछ कर दिया जाने वाला आहार ग्रहण करने की प्रतिज्ञा स्वीकार करना। अपृष्ट लाभ — विना पूछे ही दी जाने वाली भिक्षा ग्रहण करने की प्रतिज्ञा लेना। भिक्षालाभ — भिक्षा मांग कर लाये हुए तुच्छ आहार ग्रहण करने का अभिग्रह — प्रतिज्ञा स्वीकार करना अथवा दाता जो भिक्षा में मांग कर लाया हो उस भोजन में से आहार ग्रहण करने की प्रतिज्ञा किये रहना। अभिक्षालाभ—भिक्षा-लाभ से विपरीत आहार ग्रहण करने की प्रतिज्ञा रखना। अन्न-ग्लायक—रात का ठंडा-बासी आहार में से भिक्षा लेने की प्रतिज्ञा करना। उपनिहित—भोजन करते हुए गृहस्थ के समीप रखे हुए आहार में से भिक्षा स्वीकार करने की प्रतिज्ञा करना। परिमित-पिण्ड-पातिक—अल्प आहार ग्रहण करने की प्रतिज्ञा लिये रहना। शुद्धैषणिक—शंका आदि दोषों से रहित या व्यञ्जन आदि से रहित शुद्ध आहार लेने की प्रतिज्ञा स्वीकार करना। संख्यादत्तिक—पात्र में आहार-क्षेपण — डालने की सांख्यिक मर्यादा के अनुसार भिक्षा ग्रहण करने की प्रतिज्ञा रखना या कटोरी, कड़छी आदि द्वारा पात्र में डाली जाती भिक्षा की अविच्छिन्न धारा—की मर्यादा के अनुरूप भिक्षा लेने की प्रतिज्ञा करना। यह भिक्षाचर्या का स्वरूप है।

What is it to live on alms ?

It has many types, such as, related to object, related to space, related to time and related to cognition ; or one related to living on food obtained from the householder's own dish ; or one living on food before any

portion of it has been taken out of the pot in which it has been cooked; or one living on food taken out of the pot or not so taken out; or one living on food which is in the process of being deposited on the householder's dish; or one living on food fully served on the house-holder's dish; or one living on food which was spread on the dish to cool and which is in the process of being recollected; or related to one who is resolved to share food sent by one person to another; or one who is resolved to share food given for another, or shifted from one place to another; or one who is resolved to share food which is removed to another or food which first arrived and was then shifted or food which was first extolled and then decried; or one who is resolved to share food which is separately kept for somebody or which is meant to be a gift for somebody or which was first shifted and then brought or which was first decried and then extolled; or one who is resolved to receive food from a hand which is full, or one who is resolved to receive food from a hand which is clean or one who is resolved to receive food from a hand which is full with the same food; or one who is resolved to receive food from a stranger; or one who is resolved to receive food silently or from a silent donor; or one who is resolved to receive food which is visible, or from a donor seen first; or one who is resolved to receive food which he has not seen, or from a donor whom he has never known; or one who is resolved to accept food only when he is addressed as follows: "Oh monk! What may I offer thee?"; or one who is resolved to accept food without being addressed; or one who is resolved to accept a beggar's (mean) food; or one who is resolved to accept food which is not even worthy of a beggar i. e., food unsuitable for human consumption; or one who is resolved to accept food cooked on the previous day; or one who is resolved to accept food which remains on the dish after one has eaten (remnant food); or one who accepts little food, or pure food, or food which is counted at the time of the offer. Such is living on alms.

से किं तं रस-परिच्चाए ?

रस-परिच्चाए अणेगविहे पण्णत्ते। तं जहा—णिव्वि(य)तिए पणीअ-रस-परिच्चाए आयंबिलए आयामसित्थभोई अरसाहारे विरसाहारे अंताहारे पंताहारे लूहाहारे। से तं रसपरिच्चाए।

वह रस परित्याग क्या है ? उसके कितने भेद हैं ?

रस परित्याग के अनेक भेद कहे गये हैं जो इस प्रकार हैं: निर्विकृतिक—घृत, दूध, दही, तथा गुड़-शक्कर से रहित आहार करना। प्रणीत-रस परित्याग—जिससे घृत, दूध, चासनी आदि की बून्दें टपकती हों ऐसे आहार का त्याग करना। आयंबिल—आचामाम्ल—मिर्च-मसाले और घृत, दूध, दही, तेल, गुड़ आदि से रहित रोटी, भात आदि रूखा-सूखा पदार्थ अथवा भुना हुआ अन्न अचित्त पानी में भिगोकर दिन में एक बार खाना। आयाम-मसिक्थभोजी—ओसामान तथा उसमें स्थित अन्न-कण सीथ मात्र का आहार करना। अरसाहार—रस रहित या हींग, जीरा आदि से बिना छौंका हुआ आहार ग्रहण करना। विरसाहार—बहुत पुराने अन्न से, जो स्वभावतः स्वाद अथवा रस से रहित हो गया हो, बना हुआ आहार ग्रहण करना। अन्ताहार—अत्यन्त ही हल्की जाति के अन्न से बने हुए आहार को ग्रहण करना। प्रान्ताहार—भोजन कर लेने के पश्चात् बचा-खुचा आहार ग्रहण करना या बहुत ही हल्की जाति के अन्न से बना हुआ आहार ग्रहण करना। रुक्षाहार—रूखा-सूखा आहार लेना। यह रस परित्याग का स्वरूप कहा गया है।

What is renunciation of taste ?

It has many types, viz., giving up food containing clarified butter (*ghee*), oil, milk, curd or jaggery, or giving up food wherefrom (being excessive) clarified butter, oil, (till jaggery) drops ; or living on food which is not spiced or on fried grains/puffed grains soaked in water, or one who lives on grain particles (broken grains) ; or one who lives on food without good taste, or one who

lives on food prepared from old grains, or one who lives on food which is cheap (mean), or one who lives on the remnant of cheap food, or one who lives on coarse food. Such is renunciation of taste.

से किं तं कायकिलेसे ?

कायकिलेसे अणेगविहे पण्णत्ते । तं जहा—ठाणट्ठितिए ठाणाइए उक्कुडु-आसणिए पडिमट्ठाई वीरासणिए नेसज्जिए दंडायए लउडसाई आयावए अवाउडए अकंडुअए अणिट्ठुहए सव्व-गाय-परिकम्म-विभूस-विप्प-मुक्के । से तं कायकिलेसे ।

वह कायक्लेश क्या है ? वह कितने प्रकार का है ?

कायक्लेश अनेक प्रकार का बतलाया गया है, जो इस प्रकार है : स्थान स्थितिक—एक ही तरह से खड़े या एक ही आसन में बैठे रहना । उत्कुटुकासनिक—पुट्ठों को भूमि पर न टिकाते हुए केवल पाँवों के बल पर ही बैठने की स्थिति में सुस्थिर रहना और दोनों हाथों की अंजलि बांधे रखना । प्रतिमास्थायी — मासिक आदि बारह प्रतिमाएँ स्वीकार करना । वीरासनिक—भूमि पर पैर टिकाकर सिंहासन के समान बैठने की स्थिति में रहना । अर्थात् जैसे कोई व्यक्ति सिंहासन पर बैठा हुआ हो, उसके नीचे से सिंहासन निकाल लेने पर भी वैसी ही स्थिति में सुस्थिर रहना । नैषधिक —पलाथी लगाकर या पुट्ठे टिकाकर बैठना । आतापक—सूर्य आदि के ताप से शरीर को आतापना पहुँचाना । अप्रावृतक—शरीर को कपड़े आदि से नहीं ढंकना । अकण्डूयक – खुजली चलने पर भी शरीर को नहीं खुजलाना । अनिष्ठीवक—थूक आने पर भी नहीं थूकना । सर्वगात्र परिकर्म विभूआ विप्रमुक्त—शरीर के सभी संस्कार, सज्जा—विभूषा आदि से विमुक्त रहना ।

What is hardship of the body ?

It has many types, viz., remaining fixed (unmoved)

on the seat, sitting in *utkuṭuka* posture, undergoing month-long fasts, sitting in *vīrāsana* posture, squatting. giving exposure to himself in heat and cold, remaining unclad, not itching the body, never spitting and neglecting body care in all respects (or not decorating or taking care of the body in any way). Such is hardship of the body.

से किं तं पडिसंलीणया ?

पडिसंलीणया चउव्विहा पण्णत्ता। तं जहा—इंदिअ-पडिसंलीणया कसाय-पडिसंलीणया जोग-पडिसंलीणया विवित्त-सयणासण-सेवणया।

वह प्रतिसंलीनता क्या है ? वह कितने प्रकार की है ?

प्रतिसंलीनता चार प्रकार की बतलाई गई हैं, जो इस प्रकार है: (१) इन्द्रिय-प्रतिसंलीनता—इन्द्रियों की चेष्टाओं का निरोध करना, (२) कषाय-प्रतिसंलीनता—क्रोध, मान, माया और लोभ के आवेगों का निरोध करना, (३) योग-प्रतिसंलीनता—मन, वचन और काय की प्रवृत्तियों का निरोध करना, (४) विविक्त-शयनासन-सेवनता—एकान्त स्थान में निवास करना।

What is the restraint called *pratisaṁlīnatā* ?

It has four types, viz., restraint of the sense-organs, restraint of passions, restraint of activities and living a solitary life.

से किं तं इंदिय-पडिसंलीणया ?

इंदिय-पडिसंलीणया पंचविहा पण्णत्ता। तं जहा— सोइंदिय-विसय-पयार-निरोहो वा सोइंदिय-विसय-पत्तेसु अत्थेसु

राग-दोस-निग्गहो वा। चक्खिदिय-विसय-पयार-निरोहो वा चक्खिदिय-विसय-पत्तेसु अत्थेसु राग-दोस-निग्गहो वा। घाणिंदिय-विसय-पयार-निरोहो वा घाणिंदिय-विसय-पत्तेसु अत्थेसु राग-दोस-निग्गहो वा। जिब्भिंदिय-विसय-पयार-निरोहो वा जिब्भिंदिय-विसय-पत्तेसु अत्थेसु राग-दोस-निग्गहो वा। फासिंदिय-विसय-पयार-निरोहो वा फासिंदिय-विसय-पत्तेसु अत्थेसु राग-दोस-निग्गहो वा। से तं इंदिय-पडिसंलीणया।

वह इन्द्रिय प्रतिसंलीनता क्या है? उसके कितने भेद है?

इन्द्रिय प्रतिसंलीनता पाँच प्रकार की बतलाई गई है, जो इस प्रकार हैं: (१) श्रोत्रेन्द्रिय विषय प्रचार निरोध—कानों के विषय शब्द में प्रवृत्ति का निरोध करना अर्थात् शब्द श्रवण न करना या श्रोत्रेन्द्रिय को शब्द रूप में प्राप्त प्रिय और अप्रिय, अनुकूल एवं प्रतिकूल विषयों में राग-द्वेष के संचार का निरोध करना, उसे रोकना, (२) चक्षुरिन्द्रिय विषय प्रचार निरोध—आँखों के विषय रूप में प्रवृत्ति को रोकना अर्थात् रूप नहीं देखना या अनायास दृष्ट प्रिय व अप्रिय, सुन्दर और असुन्दर रूपात्मक विषयों से उदासीन रहना, उनमें राग-द्वेष के संचार को रोकना, (३) घ्राणेन्द्रिय विषय प्रचार निरोध—नाक के विषय सुरभि गन्ध और दुरभि गन्ध में प्रवृत्ति को रोकना या घ्राणेन्द्रिय को प्राप्त सुगन्ध-दुर्गन्ध स्वरूप विषयों में राग और द्वेष के संचार का निरोध करना, उन विषयों से उदासीन रहना, (४) जिह्वेन्द्रिय विषय प्रचार निरोध—जीभ के विषय रस में प्रवृत्ति को रोकना या जीभ से प्राप्त स्वाद-अस्वाद रसात्मक विषयों में राग-द्वेप के संचार को रोकना, उस ओर से उदासीन रहना, (५) स्पर्शेन्द्रिय विषय प्रचार निरोध—त्वचा के विषय स्पर्श में प्रवृत्ति को रोकना या स्पर्शेन्द्रिय को प्राप्त अनुकूल-प्रतिकूल एवं सुखात्मक-दुःखात्मक विषयों में राग-द्वेप के संचार का निरोध करना, उस ओर से उदासीन रहना। यह इन्द्रिय प्रतिसंलीनता का स्वरूप है।

What is the restraint of the organs of sense?

It has five types, viz., not to hear and not to be swayed by love and malice even when heard. Not to see and not to be swayed by love and malice even when seen. Not to smell and not to be swayed by love and malice even when smelt. Not to taste and not to be swayed by love and malice even when tasted. Not to touch and not to be swayed by love and malice even when touched.

से किं तं कसाय-पडिसंलीणया ?

कसाय-पडिसंलीणया चउव्विहा पण्णत्ता। तं जहा— कोहस्सुदय-निरोहो वा उदय-पत्तस्स वा कोहस्स विफली-करणं। माणस्सुदय-निरोहो वा उदय-पत्तस्स वा माणस्स विफली-करणं। माया-उदय-निरोहो वा उदय-पत्तस्स वा मायाए विफली-करणं। लोहस्सुदय-निरोहो वा उदय-पत्तस्स वा लोहस्स विफली-करणं। से तं कसायपडिसंलीणया।

वह कषाय प्रतिसंलीनता क्या है ? वह कितने प्रकार की है ?

कषाय प्रतिसंलीनता चार प्रकार की बतलाई गई है, वह इस प्रकार है : (१) क्रोध के उदय का निरोध करना अर्थात् क्रोध को नहीं उठने देना अथवा उदय प्राप्त—उठे हुए क्रोध को निष्फल करना, उसे निष्प्रभाव बनाना, (२) मान के उदय का निरोध करना अर्थात् मान को उभार में नहीं आने देना अथवा उदय प्राप्त अहंकार को विफल—प्रभाव शून्य बनाना, (३) माया के उदय का निरोध करना अर्थात् माया को नहीं उभरने देना अथवा उदयप्राप्त-माया को विफल—प्रभाव शून्य बनाना, (४) लोभ के उदय का निरोध करना अर्थात् लोभ को नहीं उठने देना अथवा उदय प्राप्त लोभ को विफल—प्रभाव रहित बना देना। यह कषाय प्रतिसंलीनता का स्वरूप है।

What is the restraint of passions ?

It has four types, viz., to check anger and make it nugatory. To check pride and make it nugatory. To check attach-

ment and make it nugatory. To check greed and make it nugatory.

से किं तं जोग-पडिसंलीणया ?

जोग-पडिसंलीणया तिविहा पण्णत्ता । तं जहा — मण-जोग-पडिसंलीणया वय-जोग-पडिसंलीणया काय-जोग-पडिसंलीणया ।

वह योग प्रतिसंलीनता क्या है ? उसके कितने प्रकार है ?

योग प्रतिसंलीनता तीन प्रकार की बतलाई गई हैं । वह इस प्रकार है : (१) मनोयोग प्रतिसंलीनता, (२) वचन-योग प्रतिसंलीनता, (३) काय-योग प्रतिसंलीनता ।

What is the restraint of activity ?

It has three types, viz., restraint on the activity of mind, restraint on the activity of words and restraint on the activity of body.

से किं तं मण-जोग-पडिसंलीणया ?

मण-जोग-पडिसंलीणया अकुसल-मण-णिरोहो वा कुसल-मण-उदीरणं वा । से तं मण-जोग-पडिसंलीणया ।

वह मनोयोग प्रतिसंलीनता क्या है ?

अकुशल—अशुभ दुर्विचारपूर्ण मन का निरोध करना अर्थात् मन में बुरे विचारों को नहीं आने देना अथवा कुशल/शुभ—सुविचार पूर्ण मन का प्रवर्तन करना, मन में सद् विचारों को लाते रहने का अभ्यास करना मनोयोग प्रतिसंलीनता है । यह मनोयोग प्रतिसंलीनता का स्वरूप है ।

What is the restraint on the activity of mind ?

It includes restraint on evil thought and cultivation of noble thought.

से किं तं वय-जोग-पडिसंलीणया ?

वय-जोग-पडिसंलीणया अकुसल-वय-णिरोहो वा कुसल-वय-उदीरणं वा। से तं वय-जोग-पडिसंलीणया।

वह वचनयोग प्रतिसंलीनता क्या है ? उसका क्या स्वरूप है ?

अकुशल—दुर्वचन का निरोध करना, अशुभ वचन नहीं बोलना अथवा कुशल वचन—सद्‌वचन बोलने का अभ्यास करना वचन योग प्रतिसंलीनता है। यह वचन योग प्रतिसंलीनता का स्वरूप है।

What is the restraint on the activity of words ?

It includes restraint on unwholesome words and use of wholesome words.

से किं तं काय-जोग-पडिसंलीणया ?

काय-जोग-पडिसंलीणया जण्णं सुसमाहिअ-पाणिपाए कुम्मो इव गुत्तिंदिय सव्व-गाय-पडिसंलीणे चिट्ठइ। से तं काय-जोग-पडिसंलीणया। (से तं जोग-पडिसंलीणया।)

वह काययोग प्रतिसंलीनता क्या है ?

हाथ, पैर आदि को सुस्थिर कर, कछुए के समान अपनी इन्द्रियों को गोपन कर, सारे शरीर को संवृत्त कर अर्थात् प्रवृत्तियों से खींच कर सुस्थिर होना, काययोग प्रतिसंलीनता है। यह योग प्रतिसंलीनता का स्वरूप कहा गया है।

What is the restraint on the activity of body ?

It includes making hands and feet motionless, withholding the organs of sense and restraining all the limbs.

से किं तं विवित्त-सयणासण-सेवणया ?

विवित्त-सयणासण-सेवणयाए जं णं आरामेसु उज्जाणेसु देव-कुलेसु सभासु पवासु पणिय-गिहेसु पणिअसालासु इत्थी-पसु-पंडग-संसत्त-विरहियासु वसहीसु फासुएसणिज्ज-पीढ-फलग-सेज्जा-संथारगं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ। से तं पडिसंलीणया। से तं बाहिरए तवे ॥ १९ ॥

वह विविक्त शय्यासन सेवनता क्या है ?

आराम—पुष्पप्रधान बगीचा, उद्यान—फूल, फल आदि से युक्त बड़े-बड़े वृक्षों से सुशोभित बगीचा, देवकुल—देव मन्दिर, छतरियाँ, सभा—लोगों के विचार-विमर्श हेतु एकत्र होने का स्थान-विशेष, प्रपा—प्याऊ, पणित-गृह—वर्तन भाण्ड आदि क्रय-विक्रयोचित वस्तुएँ रखने के घर अर्थात् गोदाम, पणितशाला—क्रय-विक्रय करने वाले लोगों के ठहरने हेतु योग्य गृह विशेष, ऐसे स्थानों में, जो स्त्री, पशु और नपुंसक की संसक्त—युक्तता या संसर्ग से रहित हो, प्रासुक—निर्जीव, अचित्त, ऐषणीय—संयमी व्यक्तियों के द्वारा ग्रहण करने योग्य, निर्दोष पीठ, फलक—काष्ठ का पट्ट, शय्या—पैर फैलाकर शयन किया जा सके ऐसा बिछौना, तृण, घास आदि का कुछ छोटा-सा बिछौना प्राप्त कर विचरण करना, साधना-प्रधान जीवन-यापन करना विविक्त शयनासन-सेवनता है। यह प्रतिसंलीनता का स्वरूप कहा गया है। यहाँ बाह्य-तप का वर्णन पूर्ण होता है, सम्पन्न होता है ॥ १९ ॥

What is it to use a prescribed lodge and bed ?

A garden, an orchard, a temple, an assembly-hall, a water-storage, a store, a market centre, which is free from the presence of women, animals or eunuches constitute a prescribed lodge. A piece of wood to support the back, a bed just enough to lie on and a small cushion made from dry hay constitute a prescribed bed. Such is external penance. 19

आभ्यन्तर तप

Internal Penance

से किं तं अब्भिंतरए तवे ?

अब्भिंतरए तवे छव्विहे पण्णत्ते । तं जहा—पायच्छित्तं विणओ वेयावच्चं सज्झाओ झाणं विउस्सग्गो ।

वह आभ्यन्तर तप क्या है ? वह कितने प्रकार का है ?

आभ्यन्तर तप छः प्रकार का कहा गया है। वह इस प्रकार है : (१) प्रायश्चित्त, (२) विनय, (३) वैयावृत्य, (४) स्वाध्याय, (५) ध्यान, (६) व्युत्सर्ग ।

Internal penance is said to be of six types, viz., atonement, humility, sharing food with fellow monks, reading of texts, meditation/concentration and giving up attachment for mundane life.

से किं तं पायच्छित्ते ?

पायच्छित्ते दसविहे पण्णत्ते । तं जहा—आलोअणारिहे पडिक्कमणारिहे तदुभयारिहे विवेगारिहे विउस्सग्गारिहे तवारिहे छेदारिहे मूलारिहे अणवट्ठप्पारिहे पारंचिआरिहे । से तं पायच्छित्ते ।

वह प्रायश्चित्त क्या है ? वह कितने प्रकार का है ?

प्रायश्चित्त दस प्रकार का बतलाया गया है, जो इस प्रकार है : (१) आलोचनार्ह—गमन, आगमन, भिक्षा, प्रतिलेखन आदि दैनिक कार्यों में

लगने वाले दोषों को गुरु या ज्येष्ठ साधु के समक्ष प्रकट करना, उन दोषों की आलोचना करना आलोचना प्रायश्चित्त है। (२) प्रतिक्रमणार्ह—पाँच समिति और तीन गुप्ति के सम्बन्ध में सहसाकारित्व आदि से लगने वाले दोषों के सन्दर्भ में 'मिच्छा मे दुक्कड़' मेरा दुष्कृत या पाप मिथ्या हो, निष्फल हो, इस प्रकार चिन्तनपूर्वक पश्चात्ताप करना प्रतिक्रमणार्ह प्रायश्चित्त है। (३) तदुभयार्ह—आलोचना और प्रतिक्रमण इन दोनों से होने वाला प्रायश्चित्त तदुभयार्ह कहलाता है। (४) विवेकार्ह—ज्ञान पूर्वक त्याग के द्वारा होने वाला प्रायश्चित्त विवेकार्ह है। (५) व्युत्सर्गार्ह—कायोत्सर्ग के द्वारा निष्पन्न होने वाला प्रायश्चित्त व्युत्सर्गार्ह है अर्थात् मल-मूत्र आदि के परिष्ठापन में, नदी पार करने में अनिवार्यतः आसेवित दोषों की विशुद्धि के लिये यह प्रायश्चित्त लिया जाता है। (६) तपोऽर्ह—सचित्त वस्तु को स्पर्श करने, आवश्यक आदि समाचारी, प्रतिलेखन, प्रमार्जन आदि नहीं करने से जो दोष लग जाते हैं, उनकी शुद्धि के लिये यह तपोऽर्ह प्रायश्चित्त लिया जाता है। (७) छेदार्ह—सचित्त-विराधना, प्रतिक्रमण-अकरणता आदि के कारण लगे हुए दोषों की शुद्धि-हेतु यह छेदार्ह प्रायश्चित्त है। इस प्रायश्चित्त में पाँच दिन से लेकर छः महीने तक के दीक्षा-पर्याय की न्यूनता करने का विधान है। (८) मूलार्ह—प्रायश्चित्त योग्य दूषित स्थान के तीन वार सेवन, मैथुन, रात्रि भोजन आदि के द्वारा चरित्र भंग, किसी भी महाव्रत का जानबूझ कर खण्डन करने पर जो पुनः दीक्षा दी जाती है, उसे मूलार्ह प्रायश्चित्त कहते हैं। (९) अनवस्थाप्यार्ह—प्रायश्चित्त के रूप में दिये गए अमुक प्रकार के विशिष्ट तप को जब तक न कर लिया जाए, तब तक उस श्रमण का संघ से सम्बन्ध विच्छेद रखना, उसे पुनः दीक्षा नहीं देना, यह अनवस्थाप्यार्ह प्रायश्चित्त कहलाता है। (१०) पाराञ्चिकार्ह—संघ से सम्बन्ध विच्छेद कर और विशिष्ट तप का अनुष्ठान कराकर गृहस्थ भूत बनाना महाव्रतों की पुनः प्रतिष्ठापना करना पाराञ्चिकार्ह प्रायश्चित्त है। इस प्रकार यह प्रायश्चित्त का स्वरूप है।

What is atonement ?

It has ten types, viz., submission *to/discussion with* the spiritual master (preceptor) of lapses in daily routine, *prati-*

kramaṇa or self-confession of lapses pertaining to *samitis* and *guptis*, a combination of the two, (in case there is an evil dream which may have defiled a great vow) atonement through renunciation or non-use, *kāyotsarga* or causing hardship to the body (through the control of respiration so that even the body-sense ceases), atonement by external penance like fasting, demotion in seniority in the order of monks, fresh initiation, temporarily cutting off relation with the body of monks till one has performed the penance (during which period one is neither a full monk nor returned to the household order) and performing a prescribed penance after cutting off relation with the order of monks. Such are the atonements.

से किं तं विणए ?

विणए सत्तविहे पण्णत्ते । तं जहा—णाणविणए दंसणविणए चरित्तविणए मणविणए वइविणए कायविणए लोगोवयारविणए ।

वह विनय क्या है ? उसके कौन-कौन से भेद हैं ?

विनय सात प्रकार का बतलाया गया है । वह इस प्रकार है : (१) ज्ञान विनय, (२) दर्शन विनय, (३) चारित्र विनय, (४) मनो विनय, (५) वचन विनय, (६) काय विनय, (७) लोकोपचार विनय ।

What is humility ?

It has seven types, viz., humility of knowledge, humility of faith, humility of conduct, humility of mind, humility of words, humility of body and humility in behaving with others.

से किं तं णाणविणए ?

णाणविणए पंचविहे पण्णत्ते । तं जहा—आभिणिबोहियणाण-

विणए सुअणाणविणए ओहिणाणविणए मणपज्जवणाणविणए केवल णाणविणए। (से तं णाणविणए।)

वह ज्ञान विनय क्या है? वह कितने प्रकार का है?

ज्ञान विनय पांच प्रकार का बतलाया गया है: (१) आभिनिबोधिक ज्ञान—मति ज्ञान विनय, (२) श्रुत ज्ञान विनय, (३) अवधि ज्ञान विनय, (४) मनःपर्याय ज्ञान विनय, (५) केवल-ज्ञान विनय। इन पांच ज्ञानों की यथार्थता मानते हुए इनके लिये विनम्र भाव से यथाशक्ति पुरुषार्थ करना।

What is humility of knowledge?

It has five types, viz., humility of perceptual knowledge, of scriptural knowledge, of extra-sensory knowledge, of telepathic knowledge and of absolute knowledge.

से किं तं दंसणविणए?

दंसणविणए दुविहे पण्णत्ते। तं जहा—सुस्सुसणाविणए अणच्चासायणाविणए।

वह दर्शन विनय क्या है? उसके कितने भेद हैं?

दर्शन विनय दो प्रकार का कहा गया है। वह इस प्रकार है: (१) शुश्रूषणा विनय, (२) अनत्याशातना विनय।

What is humility of faith?

It has two types, viz., *śuśruṣaṇā-vinaya* or undistorted fulfilment of faith and *anatyāśātanā-vinaya* or humility free from flaw.

से किं तं सुस्सुसणाविणए ?

सुस्सुसणाविणए अणेगविहे पण्णत्ते । तं जहा—अब्भुट्ठाणे इ वा आसणाभिग्गहे इ वा आसणप्पदाणे इ वा सक्कारे इ वा सम्माणे इ वा किइकम्मे इ वा अंजलिपग्गहे इ वा एंतस्स अणुगच्छणया ठिअस्स पज्जुवासणया गच्छंतस्स पडिसंसाहणया । से तं सुस्सुसणा-विणए ।

वह शुश्रूषणा-विनय क्या है ? वह कितने प्रकार का है ?

शुश्रूषणा-विनय अनेक प्रकार का कहा गया है । जो इस प्रकार है : अभ्युत्थान—गुरुजनों या गुणीजनों के आने पर उन्हें आदर देने हेतु खड़े होना, आसनाभिग्रह—गुरुजन जहाँ बैठना चाहें, वहाँ पर आसन बिछाना—रखना, आसन-प्रदान—गुरुजनों को आसन देना, गुरुजनों का सत्कार करना, सम्मान करना, यथाविधि वन्दन-नमन करना, कोई बात स्वीकार या अस्वीकार करते समय हाथ जोड़ना, आते हुए गुरुजनों के सामने जाना, बैठे हुए गुरुजनों के समीप बैठना, उनकी सेवा करना, जाते हुए गुरुजनों को पहुँचाने जाना । यह शुश्रूषणा-विनय का स्वरूप है ।

What is *Śuśruṣaṇā-vinaya* ?

It has many types, viz., to stand up when an elder or superior person arrives, to carry cushion/stool for elders to sit on, and to spread it wherever desired, to offer them clothes, to show them respect, to pay them homage and obeisance as prescribed, to fold palms at the time of agreeing or disagreeing, to receive elders by going a few steps forward, to be in full attention in the presence of the elders, and to go with them a few steps when they go and see them off with due respect. Such is *Śuśruṣaṇā-vinaya.*

से किं तं अणच्चासायणाविणए ?

अणच्चासायणाविणए पणतालिसविहे पण्णत्ते । तं जहा—अरहंताणं

अणच्चासायणया अरहंतपण्णत्तस्स धम्मस्स अणच्चासायणया आयरियाणं अणच्चासायणया एवं उवज्झायाणं थेराणं कुलस्स गणस्स संघस्स किरिआणं संभोगिअस्स आभिणिबोहियणाणस्स सुअणाणस्स ओहिणाणस्स मणपज्जवणाणस्स केवलणाणस्स। एएसिं चेव भत्ति-बहुमाणे एएसिं चेव वण्णसंजलणया। से तं अणच्चासायणाविणए।

वह अनत्याशातना विनय क्या है? वह कितने प्रकार का है?

अनत्याशातना विनय के पैंतालीस भेद कहे गये हैं। वे इस प्रकार हैं: (१) अर्हंतों (अरिहंतों) की आशातना नहीं करना, आत्म-गुणों का घातक नाश करने वाले अवहेलनापूर्ण कार्य नहीं करना, (२) अरिहन्तों के द्वारा बतलाये गये धर्म की आशातना नहीं करना, (३) आचार्यों की आशातना नहीं करना, (४) उपाध्यायों की आशातना नहीं करना, (५) स्थविरों—ज्ञान और चारित्र में वृद्धिप्राप्त, वयोवृद्ध श्रमणों की आशातना नहीं करना, (६) कुल की आशातना नहीं करना, (७) गण की आशातना नहीं करना, (८) संघ की आशातना नहीं करना, (९) क्रियावान् की आशातना नहीं करना, (१०) सांभोगिक—जिस गच्छ के श्रमण के साथ वन्दन, नमन, आहार-आचार आदि पारस्परिक व्यवहार हों, उस गच्छ के श्रमण या समान आचार वाले श्रमण की आशातना नहीं करना, (११) आभिनिबोधिक—मतिज्ञान की आशातना नहीं करना, (१२) श्रुतज्ञान की आशातना नहीं करना (१३) अवधि-ज्ञान की आशातना नहीं करना, (१४) मनःपर्यव ज्ञान की आशातना नहीं करना, (१५) केवल ज्ञान की आशातना नहीं करना।

इन पन्द्रह की भक्ति—उपासना, बहुमान, सद्गुणों के प्रति विशेष भावानुराग रूप पन्द्रह भेद तथा इन पन्द्रह की यशस्विता, प्रशस्ति और गुणोत्कीर्तन रूप और पन्द्रह भेद इस प्रकार अनत्याशातना विनय के कुल मिला कर पैंतालीस भेद होते हैं।

What is *anatyāśātanā-vinaya* ?

It has forty-five types, viz., not to behave wrongly towards

the Arihantas, not to show disrespect to reilgion propounded by the Arihantas, not to behave wrongly towards the head of the order (*ācārya*), preceptor (*upādhyāya*)), senior monks, *kula*, *gaṇa*, *saṅgha*, superior monks, monks of similar rank who are fulfilling a similar code, towards perceptual knowledge, scriptural knowledge, extra-sensory knowledge, telepathic knowledge and absolute knowledge (total 15), a similar number for devotion and a similar number for attaining fame/reputation. Such is *anatyāśātanā-vinaya*.

से किं तं चरित्तविणए ?

चरित्तविणए पंचविहे पण्णत्ते। तं जहा—सामाइअ-चरित्तविणए छेओवट्ठावणिअ-चरित्तविणए परिहारविसुद्धि-चरित्तविणए सुहुम-संपराय-चरित्तविणए अहक्खाय-चरित्तविणए। से तं चरित्तविणए।

वह चारित्र-विनय क्या है ? उसके कितने भेद हैं ?

चारित्र विनय पाँच प्रकार का कहा गया है, जो इस प्रकार है : (१) सामायिक चारित्र विनय, (२) छेदोपस्थापनिक चारित्र विनय, (३) परिहार विशुद्धि चारित्र विनय, (४) सूक्ष्म-संपराय चारित्र विनय, (५) यथाख्यात् चारित्र विनय। यह चारित्र विनय का स्वरूप कहा गया है।

What is humility of conduct ?

It has five types, viz., *sāmāyika* or sitting in equanimity for 48 minutes, *chedopasthāpanika* or restoration to righteousness after a lapse. *parihāra-viśuddhi* or perfection of physical activities, *sukṣma-samparāya* or having no more than very minute passions, and *yathākhyāta* or moulding the conduct as per code.

से किं तं मणविणए ?

मणविणए दुविहे पण्णत्ते । तं जहा—पसत्थ-मणविणए अपसत्थ-मण-विणए ।

वह मनोविनय क्या है ? उसके कितने भेद हैं ?

मनोविनय दो प्रकार का बतलाया गया है, जो इस प्रकार है—(१) प्रशस्त मनोविनय, (२) अप्रशस्त मनोविनय ।

What is humility of the mind ?

It has two types, viz., wholesome and unwholesome.

से किं तं अपसत्थ-मणविणए ?

अपसत्थ-मणविणए जे अ मणे सावज्जे सकिरिए सकक्कसे कडुए णिट्ठुरे फरुसे अण्हयकरे छेयकरे भेयकरे परितावणकरे उद्दवणकरे भूओवघाइए तहप्पगारं मणो णो पहारेज्जा । से तं अपसत्थ-मणोविणए ।

वह अप्रशस्त मनोविनय क्या है ?

जो मन सावद्य—पाप अथवा गर्हित कर्मयुक्त, सक्रिय—प्राणातिपात, मृषावाद आदि आरंभ क्रिया सहित, कर्कश, कटु—अपने लिये और अन्य के लिये अनिष्टकारक, निष्ठुर—कठोर, परुष—स्नेह-सद्भावना से रहित, आश्रवकर—अशुभ कर्मग्राही, छेदकर—किसी के हाथ, पैर आदि अंगों को काटने के दुर्भाव रखने वाला, भेदकर—नासिका आदि अंग काट डालने का बुरा भाव रखने वाला, परितापनकर—प्राणियों को संतप्त करने के भाव रखने वाला, उपद्रवणकर—मरणान्तिक कष्ट देने अथवा धन-संपत्ति हर लेने का दुर्भाव रखने वाला, भूतोपघातिक—जीवों का घात करने का बुरा विचार रखने वाला होता है, ऐसी मनःस्थिति लिये रहना अप्रशस्त मनोविनय है, वैसा मन धारण नहीं करना चाहिये । यह अप्रशस्त मनोविनय का स्वरूप है ।

What is unwholesome humility of the mind ?

It is as follows : to entertain sin in the mind, to have a thought in the mind about physical, instrumental, etc., activities, to have a mind which is rough, harsh, cruel, devoid of affection, attracting *karma* influx, to entertain thought to cut the limb of a living being, to torture him, to cause him death-like pain/to deprive him of his belongings, even to kill him. These are unwholesome.

से किं तं पसत्थ-मणोविणए?

पसत्थ-मणोविणए तं चेव पसत्थं णेयव्वं। एवं चेव वइ-विणओऽवि एएहिं पएहिं चेव णेअव्वो। से तं वइविणए।

वह प्रशस्त मनोविनय क्या है ? वह कितने प्रकार का है ?

जैसा अप्रशस्त मनोविनय का वर्णन किया गया है, उसी के आधार पर प्रशस्त मनोविनय का स्वरूप समझना चाहिये। अर्थात् प्रशस्त मनोविनय, अप्रशस्त मनोविनय से सर्वथा विपरीत होता है। वचन विनय को भी इन्हीं पदों से समझना चाहिये। अर्थात् वचन विनय अप्रशस्त वचन विनय तथा प्रशस्त वचन विनय के रूप में दो प्रकार का कहा गया है। अप्रशस्त मन और प्रशस्त मन के जो-जो विशेषण हैं वे क्रमशः अप्रशस्त वचन तथा प्रशस्त वचन के साथ जोड़ देने चाहिये। इस प्रकार यह वचन-विनय का स्वरूप कहा गया है।

What is wholesome humility of the mind ?

Just the reverse of the aforesaid items. So also humility of expression, to be stated in similar terms.

से किं तं कायविणए ?

काय विणए दुविहे पण्णत्ते। तं जहा—पसत्थ-कायविणए अपसत्थ-कायविणए।

वह काय विनय क्या है ? वह कितने प्रकार का है ?

काय विनय दो प्रकार का कहा गया है जो इस प्रकार है : (१) प्रशस्त काय विनय, (२) अप्रशस्त काय विनय।

What is humility of the body ?

It has two types, viz., wholesome and unwholesome.

· से किं तं अपसत्थकाय विणए ?

अपसत्थकाय विणए सत्तविहे पण्णत्ते। तं जहा—अणाउत्तं गमणे अणाउत्त ठाणे अणाउत्तं निसीदणे अणाउत्तं तुअट्टणे अणाउत्तं उल्लंघणे अणाउत्तं पल्लंघणे अणाउत्तं सव्विदियकाय-जोग-जुंजणया। से तं अपसत्थकाय विणए।

अप्रशस्त काय विनय क्या है ? उसके कौन-कौन से भेद हैं ?

अप्रशस्त काय विनय सात प्रकार का कहा गया है जो इस प्रकार है : (१) अनायुक्त गमन—सावधानी बिना चलना, (२) अनायुक्त स्थान—बिना उपयोग जागरूकता, स्थित होना, खड़ा होना, (३) अनायुक्त निषीदन—असावधानी से बैठना, (४) अनायुक्त त्वग्वर्तन—बिना उपयोग बिछौने पर करवट बदलते रहना, (५) अनायुक्त उल्लंघन—बिना उपयोग कर्दम-कीचड़ आदि को लांघना, (६) अनायुक्त प्रलंघन—बिना उपयोग बार-बार अतिक्रमण—लांघना, (७) अनायुक्त सर्वेन्द्रियकाय-योग-योजनता—बिना उपयोग सभी इन्द्रियों और शरीर को विभिन्न प्रवृत्तियों में लगाना। इस प्रकार यह अप्रशस्त काय विनय का स्वरूप है।

What is unwholesome humility of the body ?

It has seven types, viz., being careless about movement, halt, sitting, lying, crossing, jumping, and making a reckless use of sense-organs and body. These are unwholesome.

से किं तं पसत्थकाय विणए ?

पसत्थकाय विणए एवं चेव पसत्थं भाणियव्वं। से तं पसत्थकाय विणए। से तं काय विणए।

वह प्रशस्त काय विनय क्या है ?

प्रशस्त काय विनय को अप्रशस्त काय विनय के आधार पर समझ लेना चाहिये। अर्थात् अप्रशस्त काय विनय में जहाँ प्रत्येक क्रिया के साथ असावधानी जुड़ी रहती है वहां प्रशस्त काय विनय में क्रिया के साथ सावधानी—जागरुकता जुड़ी रहती है। यह प्रशस्त काय विनय है। इस प्रकार यह काय विनय का स्वरूप कहा गया है।

What is wholesome humility of the body ?
Just the reverse of the aforesaid items.

से किं तं लोगोवयारविणए ?

लोगोवयारविणए सत्तविहे पण्णत्ते। तं जहा—अब्भासवत्तियं परच्छंदाणुवत्तियं कज्जहेउं कयपडिकिरिया अत्त-गवेषणया देस-कालण्णुया सव्वट्ठेसु अपडिलोमया। से तं लोगोवयारविणए। से तं विणए।

वह लोकोपचार विनय क्या है ? उसके कितने भेद हैं ?

लोकोपचार विनय सात प्रकार का बतलाया गया है जो इस प्रकार हैं: (१) अभ्यासवर्तिता—गुरुजनों, सत्पुरुषों के सान्निध्य या समीप में बैठना, (२) परच्छदानुवर्तिता—गुरुजनों, पूज्यजनों की इच्छा के अनुसार प्रवृत्ति करना, (३) कार्य हेतु—ज्ञान आदि प्राप्त करने के लिये या जिनसे ज्ञानार्जन किया उनकी सेवा करना, (४) कृत-प्रतिक्रिया—अपने प्रति किये गये उपकारों को स्मरण रख कर, उनके लिये कृतज्ञता अनुभव करते हुए उपकारी पुरुषों की परिचर्या करना, (५) आर्त्त गवेषणता—वृद्धावस्था, रुग्णता से पीड़ित गुरुजनों, संयमी पुरुषों की सार-सम्भाल तथा औषधि, पथ्य

आदि के द्वारा परिचर्या—सेवा करना, (६) देश कालज्ञता—देश और समय को संलक्ष्य में रखकर ऐसा आचरण करना चाहिये जिससे अपना मूलभूत-ध्येय व्याहत न हो, (७) सर्वार्थाप्रतिलोमता—समस्त अनुष्ठेय-विषयों में, आराध्य सम्बन्धी सभी प्रयोजनों में विपरीत-आचरण का निवारण करना, आचरण को अनुकूल बनाना। यह लोकोपचार विनय का स्वरूप है। इस प्रकार यह विनय का स्वरूप सम्पन्न होता है।

What is humility of behaviour to others?

It has seven types, viz., to sit near the spiritual guide, to obey the wishes and orders of elders, to serve and show respect in order to acquire knowledge, to be grateful, to take care of the aged monks ; and monks who are ill, to behave according to time and place in such a manner that one does not do harm to his goal and to avoid in every case a behaviour which is not normal. Such is humility of behaviour to others. Such is humility.

से किं तं वेआवच्चे ?

वेआवच्चे दसविहे पण्णत्ते। तं जहा—आयरियवेआवच्चे उवज्झायवेआवच्चे सेहवेआवच्चे गिलाणवेआवच्चे तवस्सिवेआवच्चे थेरवेआवच्चे साहम्मिअवेआवच्चे कुलवेआवच्चे गणवेआवच्चे संघवेआवच्चे। से तं वेआवच्चे।

वह वैयावृत्य क्या है ? वह कितने प्रकार का है ?

वैयावृत्य के दस भेद कहे गये हैं। वे इस प्रकार हैं: (१) आचार्य का वैयावृत्य, (२) उपाध्याय का वैयावृत्य, (३) नव-दीक्षित श्रमण का वैयावृत्य, (४) रुग्णता आदि से पीड़ित श्रमण का वैयावृत्य, (५) तेला, चौला आदि तपनिरत तपस्वी श्रमण का वैयावृत्य, (६) वय, श्रुत, दीक्षा पर्याय में ज्येष्ठ स्थविर श्रमण का वैयावृत्य, (७) साधर्मिक—श्रमण-

श्रमणी का वैयावृत्य, (८) कुल—गच्छ, सम्प्रदाय का वैयावृत्य, (९) गण—कुलों के समुदाय का वैयावृत्य, (१०) संघ—गणों के समुदाय का वैयावृत्य, इस प्रकार यह वैयावृत्य का स्वरूप कहा गया है ।

What is it to render service ?

It has ten types, viz., service to the *ācārya*, the *upādhyāya*, a newly initiated monk, an ailing monk, to one who is undergoing a hard penance, a senior monk, a fellow monk/nun, to *kula*, *gaṇa* and *saṅgha*. (Several *gacchas* make a *kula*, several *kulas* make a *gaṇa* and several *gaṇas* make a *saṅgha*.)

से किं तं सज्झाए ?

सज्झाए पंचविहे पण्णत्ते । तं जहा — वायणा पडिपुच्छणा परिअट्टणा अणुप्पेहा धम्मकहा । से तं सज्झाए ।

वह स्वाध्याय क्या है ? उसके कितने भेद हैं ?

स्वाध्याय पांच प्रकार का बतलाया गया है । वह इस प्रकार है : (१) वाचना –यथाविधि यथासमय आगम साहित्य और आध्यात्मिक ग्रन्थों का अध्ययन, अध्यापन, (२) प्रतिपृच्छना—पठित विषय में विशेष रूप से स्पष्टीकरण हेतु पूछना, शंका समाधान करना, (३) परिवर्तना—पठित ज्ञान की पुनरावृत्ति करना । जो भी सीखा है, उसे बार-बार दुहराना, (४) अनुप्रेक्षा—आगमानुसारी और आत्मानुसारी चिन्तन-मनन करना, (५) धर्मकथा—श्रुतधर्म और चारित्रधर्म की व्याख्या करना, उनकी विवेचना करना । इस प्रकार यह स्वाध्याय का स्वरूप कहा गया है ।

What is the reading of texts, etc. ?

It has five types, viz., to read/teach the *sūtras*, to resolve doubt or difficulty, to repeat what has already been learnt, to ruminate over anything connected with the *sūtras*, to give discourse over spiritual themes.

से किं तं झाणे ?

झाणे चउव्विहे पण्णत्ते। तं जहा—अट्टज्झाणे रुद्दज्झाणे धम्मज्झाणे सुक्कज्झाणे।

वह ध्यान क्या है ? उसके कौन-कौन से भेद हैं ?

ध्यान चार प्रकार का बतलाया गया है। वह इस प्रकार है : (१) आर्त्त ध्यान—राग आदि भावना से अनुरंजित ध्यान, (२) रौद्र ध्यान—हिंसा, मृषा आदि भावना से अनुप्रेरित ध्यान, (३) धर्म ध्यान—धार्मिक-भावना से अनुप्राणित ध्यान, (४) शुक्ल ध्यान—जो जन्म-मृत्यु रूप शोक का क्षय करे अथवा शुभ-अशुभ से अतीत निर्मल आत्मोन्मुख शुद्ध ध्यान। इस प्रकार यह ध्यान का स्वरूप कहा गया है।

What is meditation ?

It has four types, viz., meditation with deep attachment or meditation of the wretched/ distressed called *ārta-dhyāna*, meditation with a thought of violence called *raudra-dhyāna*, meditation with a thought of *dharma* called *dharma-dhyāna*, and pure meditation (free from all these) called *śukla-dhyāna.*

अट्टज्झाणे चउव्विहे पण्णत्ते। तं जहा—अमणुण्ण-संपओग-संपउत्ते तस्स विप्पओगस्सति-समण्णागए आवि भवइ। मणुण्ण-संपओग-संपउत्ते तस्स अविप्पओगस्सति-समण्णाए आवि भवइ। आयंक-संपओग-संपउत्ते तस्स विप्पओगस्सति-समण्णाए आवि भवइ। परि-जूसिय-काम-भोग-संपओग-संपउत्ते तस्स अविप्पओगस्सति-समण्णागए आवि भवइ।

आर्त्त ध्यान चार प्रकार का बतलाया गया है जो इस प्रकार है: (१) मन को प्रिय नहीं लगने वाले साधनों के प्राप्त होने पर उनके वियोग

दूर करने, दूर होने के सन्दर्भ में निरन्तर आकुलतापूर्ण चिन्तन करना। (२) मन को प्रिय लगने वाले साधनों—विषयों के प्राप्त होने पर उनके अवियोग—वे सर्वदा अपने साथ रहे, वे अपने से कभी भी दूर, अलग नहीं हों, यों निरन्तर आकुलतापूर्ण चिन्तन करना। (३) रोग के उत्पन्न हो जाने पर, उनके मिटने के सम्बन्ध में निरन्तर आकुलतापूर्ण चिन्तन करना। (४) पूर्व सेवित और प्रीतिकर काम-भोगों की प्राप्ति होने पर, फिर कभी उनका वियोग न हो, यों निरन्तर आकुलतापूर्ण चिन्तन करना।

The meditation of the wretched/distressed has four types, viz., anxious desire to get rid of unwholesome instruments, anxious desire to stick to or hold on wholesome instruments, anxious desire to get rid of terror/ailment and anxious desire to stick to or hold on desired objects.

अट्टस्स णं झाणस्स चत्तारि लक्खणा पण्णत्ता। तं जहा— कंदणया सोअणया तिप्पणया विलवणया।

आर्त्त ध्यान के चार लक्षण बतलाये गये हैं, वह इस प्रकार है: (१) क्रन्दनता—रोना, चीखना, (२) शोचनता—दीनता का अनुभव करना, (३) तेपनता—आँसू ढलकाना, (४) विलपनता—विलाप करना।

Meditation of the wretched/distressed has four expressions, viz., to cry, to feel wretched, to shed tears and to lament.

रुद्दज्झाणे चउव्विहे पण्णत्ते। तं जहा—हिंसाणुबंधी मोसाणुबंधी तेणाणुबंधी सारक्खणाणुबंधी।

रौद्र ध्यान चार प्रकार का बतलाया गया है, जो इस प्रकार है: (१) हिंसानुबन्धी—हिंसा का अनुबन्ध लिये एकाग्र चिन्तन करना, (२) मृषानुबन्धी—असत्य का अनुबन्ध लिये एकाग्र चिन्तन करना,

(३) स्तैन्यानुवन्धी—चोरी से सम्बन्धित एकाग्र चिन्तन करना, (४) संरक्षणानुवन्धी—धन-वैभव, भोग-साधनों के संरक्षण का एकाग्र चिन्तन करना।

Meditation with a thought of violence has four types, viz., *thought linked with violence, thought linked with falsehood*, thought linked with committing a theft and thought for protecting ill-gotten treasure.

रुद्दस्स णं झाणस्स चत्तारि लक्खणा पण्णत्ता। तं जहा—उसण्णदोसे वहुदोसे अण्णाणदोसे आमरणंतदोसे।

रौद्रध्यान के चार लक्षण वतलाये गये हैं, वे इस प्रकार हैं : (१) उत्सन्नदोप—हिंसा, मृपा प्रभृति दोपों में से किसी एक दोप में विशेष रूप से लीन रहना, उस दोप की ओर प्रवृत्तिशील रहना, (२) वहुदोप—हिंसा, मृपा आदि अनेक दोपों में प्रवृत्त रहना, (३) अज्ञान दोप—मिथ्या शास्त्र के संस्कारवश हिंसा आदि धर्म प्रतिकूल क्रिया-कलापों में धर्माराधना की दृष्टि से संलग्न रहना, उधर प्रवृत्त रहना, (४) आमरणान्त दोप—सेवित दोपों के लिये मृत्यु पर्यन्त भी पश्चात्ताप नहीं करना और उनमें निरन्तर प्रवृत्त रहना।

Meditation with a thought of violence has four expressions, viz., to be immersed deep in one type of fault to be immersed deep in all types of fault, to be unconscious about indulgence and to practise bad things till the end of life without remorse.

धम्मज्झाणे चउव्विहे चउप्पडोयारे पण्णत्ते। तं जहा—आणाविजए अवायविजए विवागविजए संठाणविजए।

धर्मध्यान का चार भेद वाला चार प्रकार का स्वरूप वतलाया गया है। स्वरूप की अपेक्षा से धर्म ध्यान के चार भेद इस प्रकार हैं—(१) आज्ञा

विचय—आप्त पुरुष का वचन आज्ञा कहा जाता है। जो राग-द्वेष से मुक्त है, जो सर्वज्ञ है, वह आप्त पुरुष है। सर्वज्ञ देव की आज्ञा, जहाँ विचय—मनन, चिन्तन, निदिध्यासन आदि का विषय है वह एकाग्र चिन्तन आज्ञा विचय है। (२) अपाय विचय—अपाय शब्द का अर्थ दुःख, अनर्थ है। उसके प्रमुख हेतु—राग, द्वेष, विषय और कषाय हैं, जिनसे कर्म-पुद्गल का उपार्जन होता है। अर्थात् कर्म उपचित होते हैं। राग-द्वेष, कषाय आदि का अपचय, कर्म-सम्बन्ध का विच्छेद, आत्म-समाधि की संप्राप्ति, सभी अपायों का विनाश इत्यादि विषय इसकी चिन्तन धारा के अन्तर्गत आते हैं। (३) विपाक विचय—विपाक शब्द का अर्थ फल है। कर्मों के विपाक पर इस ध्यान की चिन्तनधारा आधारित है। ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय आदि आठ कर्मों से जनित विपाक (फल) को संसारी जीव किस प्रकार भोगता है। वह किन-किन स्थितियों में से गुजरता चला जाता है,—ये इस ध्यान में चिन्तन के मुख्य विषय हैं। (४) संस्थान विचय—लोक, द्वीप, समुद्र आदि पदार्थों की आकार का एकाग्र चिन्तन। विशेष ज्ञातव्य यह है कि आज्ञा के दो भेद हैं: (१) स्वरूप ज्ञापनी आज्ञा, (२) आदेश आज्ञा। तीर्थंकर भगवान् के द्वारा वस्तु-स्वरूप का जो कथन हुआ है, उसे स्वरूप ज्ञापनी आज्ञा कहते हैं और आचरण से सम्बन्धित वचनों को आदेश आज्ञा कहा जाता है।

Meditation with a thought of *dharma* has four types; it has four varieties, viz., to know through meditation the order/prescription of the Jinas about conduct, to know the evils arising from attachment and greed, to know the fruit of *karma* and to know the details of the universe.

धम्मस्स णं झाणस्स चत्तारि लक्खणा पण्णत्ता। तं जहा—आणारुई णिसग्गरुई उवएसरुई सुत्तरुई।

धर्म ध्यान का लक्षण चार प्रकार का कहा गया है, वह इस प्रकार है: (१) आज्ञा रुचि—वीतराग भगवान् की आज्ञा में अभिरुचि होना, श्रद्धा होना, (२) निसर्ग रुचि—स्वभावतः धर्म में अभिरुचि होना,

(३) उपदेश रुचि—धर्मोपदेश सुनने में रुचि होना अथवा साधु या ज्ञानी के उपदेश में रुचि होना, (४) सूत्ररुचि—आगम-साहित्य से तत्त्वरुचि होना, अथवा आगमों में श्रद्धा—विश्वास होना।

Meditation with a thought of *dharma* has four expressions, viz., habitual respect for the order of the Jinas, respect for religion, respect for the discourses by the monks and respect for the *Āgamas.*

धम्मस्स णं झाणस्स चत्तारि आलंवणा पण्णत्ता। तं जहा—वायणा पुच्छणा परियट्टणा धम्मकहा।

धर्मध्यान के चार आलम्बन अर्थात् धर्मध्यान रूपी प्रासाद के शिखर पर चढ़ने के लिये या सहायता के लिये चार साधन—आश्रय कहे गये हैं। जो इस प्रकार हैं: (१) वाचना—जीव, अजीव के यथार्थ स्वरूप, और सत्य सिद्धान्तों का प्रतिपादन करने वाले आगम, ग्रन्थ आदि का पठन करना, (२) पृच्छना—पठित, ज्ञात विषय में स्पष्टीकरण हेतु जिज्ञासा भाव से अपने मन में ऊहापोह करना, ज्ञानी पुरुषों से पूछना, शंका-समाधान पाने का प्रयास करना, (३) परिवर्तना—सीखे हुए, जाने हुए ज्ञान की पुनरावृत्ति करना, ज्ञात विषय के सम्बन्ध में मानसिक एवं वाचिक वृत्ति संलग्न करना, (४) धर्मकथा—धार्मिक उपदेशप्रद कथाओं, श्रुत-धर्म की व्याख्याओं, महापुरुषों के प्रेरक-प्रसंगों एवं जीवन-वृत्तों द्वारा मनोऽनुशासन और आत्मानुशासन में गतिशील होना।

There are four aids to the meditation with a thought of *dharma,* viz., to read the *Āgamas,* to acquire true knowledge about fundamentals, to resolve doubts/difficulties through questions and to repeat very often what has been learnt and hear discourses on spiritual themes and act accordingly.

धम्मस्स णं झाणस्स चत्तारि अणुप्पेहाओ पण्णत्ताओ । तं जहा — अणिच्चाणुप्पेहा असरणाणुप्पेहा एगत्ताणुप्पेहा संसाराणुप्पेहा ।

धर्मध्यान की चार अनुप्रेक्षाएँ—भावनाएँ अथवा विचार-विकास की अभ्यास प्रणालिकाएँ कही गई हैं : (१) अनित्यानुप्रेक्षा—भौतिक सुख, वैभव, शरीर, जीवन, परिवार आदि सभी ऐहिक वस्तुएँ अनित्य हैं, क्षणभंगुर हैं, यों बार-बार चिन्तन करना, (२) अशरणानुप्रेक्षा—जन्म, जरा, मृत्यु, रोग, कष्ट आदि की दुर्धर विभीषिका में जिनेश्वर देव के वचन के अतिरिक्त समूचे जगत् में और कोई शरण नहीं है, ऐसे विचारों का अभ्यास करना, (३) एकत्वानुप्रेक्षा—मृत्यु, पीड़ा, वेदना, शुभाशुभ कर्म का फल, इत्यादि सभी जीव अकेला ही पाता है, भोगता है, उत्थान, पतन का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व एकमात्र अपना अकेले का है । इस प्रकार पुनः-पुनः चिन्तन करना, आत्मोन्मुखता पाने हेतु विचारों का अभ्यास करना, (४) संसारानुप्रेक्षा—संसार में जीव कभी माता, कभी पिता, कभी भाई, कभी बहन, कभी पति, कभी पत्नी होता है इत्यादि अनेक रूपों में संसरण करता है, इस प्रकार वैविध्यपूर्ण सांसारिक स्वरूप का, सांसारिक सम्बन्धों का बार-बार चिन्तन करना, इस प्रकार की वैचारिक प्रवृत्ति जगाना, उसे गतिशील करना, उसे बल देना ।

Four types of thinking are helpful for the practice of meditation with a thought of *dharma* viz., to think that objects and relations in mundane life are transitory, to think that worldly life really gives no succour which can be had only in the words of the Jinas, to think that one is all alone at all times and in all situations, and to think that the soul enters into diverse relations with other souls at different periods of time.

सुक्कज्झाणे चउव्विहे चउप्पडोआरे पण्णत्ते । तं जहा — पुहुत्तवियक्के सविआरी एगत्तवियक्के अविआरी सुहुमकिरिए अप्पडिवाई समुच्छिन्न-किरिए अणिअट्टी ।

शुक्ल ध्यान चार भेदों से युक्त चार समवितार वाला कहा गया है। जो इस प्रकार हैं: (१) पृथक्त्व वितर्क सविचारी—वितर्क-शब्द का अर्थ है श्रुतावलम्बी विकल्प। पूर्वधर श्रमण विशिष्ट ज्ञान के अनुसार किसी एक द्रव्य-विशेष का आलम्बन लेकर ध्यान करता है, किन्तु उस द्रव्य के किसी एक पर्याय—क्षण-क्षणवर्ती अवस्था विशेष पर स्थिर नहीं रहता है, उसके विभिन्न परिणामों पर संचरण करता है अर्थात् शब्द से अर्थ पर, अर्थ से शब्द पर, और मन, वाणी एवं देह में एक-दूसरी की पर संक्रमण करता है, भिन्न-भिन्न अपेक्षाओं से चिन्तन करता है, ऐसा करना पृथक्त्व वितर्क सविचार शुक्ल ध्यान है, (२) एकत्व वितर्क अविचार—पूर्वधर विशिष्ट ज्ञान के अनुसार किसी एक परिणाम पर चित्त को स्थिर करता है। वह शब्द, अर्थ, मन, वाणी तथा देह पर संक्रमण नहीं करता है, वैसा ध्यान एकत्व वितर्क अविचार की संज्ञा से अभिहित होता है। विशेष ज्ञातव्य यह है कि प्रथम में पृथक्त्व है, अतः वह सविचार है, द्वितीय में एकत्व है, इस अपेक्षा से उसकी अविचार संज्ञा है। प्रथम में वैचारिक संक्रमण है और द्वितीय में वैचारिक संक्रमण नहीं है, (३) सूक्ष्मक्रिया अप्रतिपाति—जब केवली आयु के अन्त समय में योग-निरोध का क्रम प्रारम्भ करते हैं, तब वे मात्र सूक्ष्मकाय योग का अवलम्बन किये होते हैं। उनके और सभी योग निरुद्ध हो जाते हैं। उनमें श्वास-प्रश्वास जैसी सूक्ष्म-क्रिया ही अवशिष्ट रह जाती है। वहाँ ध्यान से च्युत होने की किञ्चित् मात्र भी कोई संभावना नहीं रहती है। उस अवस्थागत एकाग्र-चिन्तन सूक्ष्मक्रिया अप्रतिपाति शुक्ल ध्यान है। शुक्ल ध्यान का यह तृतीय भेद तेरहवें गुणस्थान में होता है, (४) समुच्छिन्न क्रिया-अनिवृत्ति—इस ध्यान में सभी-योगों और क्रियाओं का सर्वथा निरोध हो जाता है। आत्म-प्रदेशों में सभी प्रकार का परिस्पन्दन—प्रकम्पन निरुद्ध हो जाता है। अत्यल्प पांच ह्रस्व स्वरों को उच्चारण करने में जितना समय लगता है, उतना ही इस ध्यान का समय है। यह ध्यान अयोगी केवली नामक चौदहवें गुणस्थान में होता है, अयोगी केवली अन्तिम गुणस्थान है। यह ध्यान मोक्ष-प्राप्ति का साक्षात् कारण है।

Pure meditation has four types, it has four varieties, viz., to meditate on the diversity in an object, such as genesis, etc. (*prthaktva-vitarka-savicāri*), to meditate on the unity in an object

(*ekatva-vitarka-avicārī*), to meditate on the semi-restrained activity of the body before entering into liberation when all other activities are withheld (*sūkṣmakriyā-apratipāti*), and to meditate on the rock-like posture when all the three activities are wholly stopped and from where there is no come back (*samucchinna-kriyā-anivṛtti*).

सुक्कस्स णं झाणस्स चत्तारि लक्खणा पण्णत्ता । तं जहा —
विवेगे विउसग्गे अव्वहे असम्मोहे ॥

शुक्ल ध्यान के चार लक्षण बतलाये गये हैं। वे इस प्रकार हैं: (१) विवेक—शरीर से आत्मा की भिन्नता, आत्मा से सभी सांयोगिक पदार्थों का पृथक्करण, आत्मा एवं अनात्मा के पार्थक्य की प्रतीति, (२) व्युत्सर्ग—निःसंग भाव से देह एवं उपकरणों का विशेष से उत्सर्ग—त्याग। अर्थात् अपने अधिकारवर्ती भौतिक वस्तुओं से ममता का त्याग करना, (३) अव्यथा—देव, पिशाच आदि के द्वारा दिये गये उपसर्ग से विचलित नहीं होना, व्यथा तथा कष्ट आने पर भी आत्मस्थ रहना, (४) असंमोह—देवादि कृत माया-जाल में तथा सूक्ष्म भौतिक विषयों में संमूढ़ या विभ्रान्त नहीं होना। विशेष ज्ञातव्य यह है कि ध्यान-साधना निरत पुरुष स्थूल रूप से भौतिक-पदार्थों का त्याग किये हुए होता ही है। ध्यान के समय जब कभी इन्द्रिय-विषय सम्बन्धी उत्तेजनात्मक भाव उठते हैं, तो उनसे भी ध्यान-साधक विचलित एवं विभ्रान्त नहीं होता।

Pure meditation has four expressions, viz., *viveka* or separation with the help of intellect of the body from the soul and *vice-versa* ; *vyutsarga* or renunciation of everything except the soul ; *avyathā* or not to allow the soul to be influenced by trouble created by the gods and demi-gods ; and *asaṁmoha* or not to be misguided by delusion of any kind.

सुक्कस्स णं झाणस्स चत्तारि आलंबणा पण्णत्ता । तं जहा —
खंती मुत्ती अज्जवे मद्दवे ।

शुक्ल ध्यान के चार आलम्बन बतलाये गये हैं, जो इस प्रकार हैं : (१) क्षान्ति—सहनशील, क्षमाशील होना, (२) मुक्ति—लोभ आदि के बन्धन से मुक्त होना, (३) आर्जव ऋजुता, सरलता, (४) मार्दव—कोमलता, निरभिमानता।

Pure meditation has four aids, viz., endurance, greedlessness, lack of hypocracy and lack of pride.

सुक्कस्स णं झाणस्स चत्तारि अणुप्पेहाओ पण्णत्ताओ। तं जहा—अवायाणुप्पेहा असुभाणुप्पेहा अणंतवित्तिआणुप्पेहा विप्परिणामाणुप्पेहा। से तं झाणे।

शुक्लध्यान की चार अनुप्रेक्षाएँ—भावनाएँ बतलाई गई हैं, जो इस प्रकार हैं: (१) अपायानुप्रेक्षा—आत्मा के द्वारा आबद्ध कर्मों के कारण उत्पद्यमान अवांछित अनर्थों के सन्दर्भ में बार-बार चिन्तन, (२) अशुभानुप्रेक्षा—संसार की अशुभता का पुनः-पुनः चिन्तन करना, (३) अनन्तवृत्तितानुप्रेक्षा—संसार-चक्र की अनन्तवृत्तिता अन्त काल तक चलते रहने की वृत्ति के विषय में बार बार चिन्तन, (४) विपरिणामानुप्रेक्षा—प्रतिपल-प्रतिक्षण विविध परिणामों में परिवर्तित होती वस्तुस्थिति अर्थात् वस्तु-जगत् के सम्बन्ध में पुनः-पुनः चिन्तन करना। इस प्रकार यह ध्यान का स्वरूप कहा गया है।

Four types of thinking are helpful to pure meditation, viz., to think again and again of *karma* influx into the soul, to think again and again of the ills in the world, to think again and again of migration from one existence to another, and to think again and again of the continuous change in every moment of all objects. Such is meditation.

से किं तं विउस्सग्गे ?

विउस्सग्गे दुविहे पण्णत्ते। तंजहा—दव्व-विउस्सग्गे भाव-विउस्सग्गे अ।

वह व्युत्सर्ग क्या है ? उसके कौन-कौन से भेद हैं ?

व्युत्सर्ग दो प्रकार का बतलाया गया है। जो इस प्रकार हैं : (१) द्रव्य व्युत्सर्ग, (२) भाव व्युत्सर्ग।

What is *vyutsarga* or renunciation of the soul ?

It has two types, viz., renunciation of objects and renunciation of cognition.

से किं तं दव्व-विउस्सग्गे ?

दव्व-विउस्सग्गे चउव्विहे पण्णत्ते। तं जहा—सरीरविउस्सग्गे गणविउस्सग्गे उवहिविउस्सग्गे भत्तपाणविउस्सग्गे। से तं दव्व-विउस्सग्गे।

वह द्रव्य व्युत्सर्ग क्या है ? वह कितने प्रकार का है ?

द्रव्य व्युत्सर्ग चार प्रकार का बतलाया गया है, जो इस प्रकार हैं : (१) शरीर व्युत्सर्ग—शरीर और शारीरिक सम्बन्धों की आसक्ति—ममता का त्याग, (२) गणव्युत्सर्ग—गण और गण के ममत्व का विसर्जन, (३) उपाधि व्युत्सर्ग—उपाधि—साधन-सामग्रीगत ममत्व का त्याग य साधन-सामग्री को आकर्षक बनाने हेतु प्रयुक्त होने वाले उपायों का त्याग, (४) भक्तपान-व्युत्सर्ग—आहार-पानी का, तद्गत लोलुपता का परित्याग।, इस प्रकार यह द्रव्य व्युत्सर्ग का स्वरूप कहा गया है।

What is renunciation of objects ?

It has four types, viz., renunciation of (attachment to) the body, renunciation of *gaṇa* (and of pride that goes with it), renunciation of objects in use by the monks (and of attachment to them), and renunciation of food and drink (and of attachment to them).

से किं तं भाव-विउस्सग्गे ?

भाव-विउस्सग्गे तिविहे पण्णत्ते । तं जहा — कसाय-विउस्सग्गे संसार-विउस्सग्गे कम्म-विउस्सग्गे ।

यह भाव व्युत्सर्ग क्या है ? वह कितने प्रकार का है ?

भाव व्युत्सर्ग तीन प्रकार का वतलाया गया है, जो इस प्रकार है : (१) कषाय व्युत्सर्ग, (२) संसार व्युत्सर्ग, (३) कर्म व्युत्सर्ग ।

What is renunciation of cognition ?

It has three types, viz., renunciation of passions, renunciation of the world and renunciation of *karma.*

से किं तं कसाय-विउस्सग्गे ?

कसाय-विउस्सग्गे चउव्विहे पण्णत्ते । तं जहा — कोह-कसाय-विउस्सग्गे माण-कसाय-विउस्सग्गे माया-कसाय-विउस्सग्गे लोह-कसाय-विउस्सग्गे । से तं कसाय-विउस्सग्गे ।

यह कषाय व्युत्सर्ग क्या है ? उसके कौन-कौन से भेद हैं ?

कषाय व्युत्सर्ग चार प्रकार का वतलाया गया है वह इस प्रकार है : (१) क्रोध व्युत्सर्ग—क्रोध का त्याग, (२) मान व्युत्सर्ग अहंकार का त्याग, (३) माया व्युत्सर्ग—छल-कपट का त्याग, (४) लोभ व्युत्सर्ग—लालच का त्याग । इस प्रकार यह कषाय व्युत्सर्ग का स्वरूप कहा गया है ।

What is renunciation of passions ?

It has four types. viz., renunciation of anger, of pride, of attachment and of greed. Such is renunciation of passions.

से किं तं संसार-विउस्सग्गे ?

संसार-विउस्सग्गे चउव्विहे पण्णत्ते । तं जहा—णेरइअसंसार-विउस्सग्गे तिरियसंसारविउस्सग्गे मणुअसंसारविउस्सग्गे देवसंसार-विउस्सग्गे । से तं संसारविउस्सग्गे ।

वह संसार-व्युत्सर्ग क्या है ? वह कितने प्रकार का है ?

संसार व्युत्सर्ग चार प्रकार का बतलाया गया है, वह इस प्रकार है : (१) नैरयिक संसार व्युत्सर्ग—नरक गति बँधने के चार (महारम्भ, महापरिग्रह, मांसाहार, पंचेन्द्रियवध) कारणों का त्याग, (२) तिर्यक् संसार व्युत्सर्ग—तिर्यञ्च गति बंधने के चार (माया करने से, गूढ़ माया करने से, असत्य बोलने से, खोटे तोल-माप करने से) कारणों का त्याग, (३) मनुष्य संसार व्युत्सर्ग—मनुष्य गति बंधने के चार (प्रकृति भद्रता, प्रकृति विनीतता, अनुकम्पा, ईर्ष्या का अभाव) कारणों का त्याग, (४) देव संसार व्युत्सर्ग—देव गति बंधने के चार (सराग संयम, संयमासंयम, बालतप, अकाम निर्जरा के कारणों का त्याग । इस प्रकार यह संसार व्युत्सर्ग का स्वरूप कहा गया है ।

What is renunciation of the world ?

It has four types, viz., renunciation of bondage giving life in hell, renunciation of bondage giving life in the world of animals, renunciation of bondage giving life in the world of human beings and renunciation of bondage giving life in one of the heavens.

से किं तं कम्मविउस्सग्गे ?

कम्मविउस्सग्गे अट्ठविहे पण्णत्ते । तं जहा—णाणावरणिज्ज-कम्मविउस्सग्गे दरिसणावरणिज्जकम्मविउस्सग्गे वेअणीअकम्म-विउस्सग्गे मोहणीयकम्मविउस्सग्गे आऊअकम्मविउस्सग्गे णामकम्म-

विउस्सग्गे गोअकम्मविउस्सग्गे अंतरायकम्मविउस्सग्गे। से तं कम्मविउस्सग्गे। से तं भाव विउस्सग्गे ॥ २० ॥

वह कर्म व्युत्सर्ग क्या है? वह कितने प्रकार का है?

कर्म व्युत्सर्ग आठ प्रकार का बतलाया गया है, वह इस प्रकार है: (१) ज्ञानावरणीय कर्म व्युत्सर्ग—आत्मा के ज्ञानगुण के आवरण रूप कर्म-पुद्गलों का जीव प्रदेशों के साथ बंधने के कारणों का त्याग, (२) दर्शनावरणीय कर्म व्युत्सर्ग-आत्मा के सामान्य ज्ञान गुण के आवरण रूप कर्म पुद्गलों का जीव प्रदेशों के साथ बंधने के कारणों का त्याग, (३) वेदनीय कर्म व्युत्सर्ग—साता-सुख, असाता-दुःख रूप वेदना के हेतुभूत कर्म पुद्गलों का आत्म प्रदेशों के साथ बद्ध होने के कारणों का त्याग, (४) मोहनीय कर्म व्युत्सर्ग—आत्मा के स्वभाव रमण स्वप्रतीति रूप गुण के बाधक कर्म पुद्गलों के जीव-प्रदेशों के साथ आबद्ध होने के कारणों का त्याग, (५) आयुष्यकर्म व्युत्सर्ग—किसी भव में आत्मा को रोक रखने वाले आयुष्यकर्म पुद्गलों का जीव प्रदेशों के साथ बद्ध होने के कारणों का त्याग, (६) नामकर्म व्युत्सर्ग—आत्मा के अमूर्तत्व गुण को विकृत करने वाले कर्म पुद्गलों का जीव प्रदेशों के साथ आबद्ध होने वाले हेतुओं का त्याग, (७) गोत्रकर्म व्युत्सर्ग—आत्मा के अगुरु-लघुत्व रूप गुण को विकृत करने वाले कर्म पुद्गलों के आत्म प्रदेशों के साथ बंधने के कारणों का त्याग, (८) अन्तराय कर्म व्युत्सर्ग—आत्मा के शक्ति रूप गुण के अवरोधक कर्म पुद्गलों का आत्म-प्रदेशों के साथ बंधने के कारणों का त्याग। इस प्रकार यह कर्म-व्युत्सर्ग का स्वरूप कहा गया है। इस प्रकार यह व्युत्सर्ग का वर्णन संपन्न होता है। ॥२०॥

What is renunciation of *karma* ?

It has eight types, viz., renunciation of *karma* enshrouding knowledge, of *karma* enshrouding faith, of *karma* enshrouding conduct, of *karma* causing delusion, of *karma* giving a life-span, of *karma* giving a name, of *karma* giving a lineage, and of *karma* causing obstruction. Such is renunciation of *karma*. Such is renunciation of everything except the soul. 20

अनगारों की सक्रियता

Activities of the Monks

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स बहवे अणगारा भगवंतो अप्पेगईआ आयारधरा जाव•••विवागसुअधरा। तत्थ तत्थ तहिं तहिं देसे देसे गच्छागच्छिं गुम्मागुम्मिं फड्डाफड्डि अप्पेगइआ वायंति। अप्पेगइआ पडिपुच्छंति। अप्पेगइआ परियट्टंति। अप्पेगइआ अणुप्पेहंति। अप्पेगइआ अक्खेवणीओ विक्खेवणीओ संवेअणीओ णिव्वेअणीओ चउव्विहाओ कहाओ कहंति। अप्पेगइया उड्ढंजाणू अहोसिरा झाणकोट्ठोवगया संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणा विहरंति।

उस काल (वर्तमान अवसर्पिणी) उस समय (जब प्रभु महावीर चम्पा नामक नगरी में पधारे तब) श्रमण भगवान् महावीर के साथ बहुत से अनगार—श्रमण भगवन्त थे। उनमें कई एक आचार श्रुत के धारक, यावत् (सूत्रकृत, स्थान, समवाय, व्याख्याप्रज्ञप्ति, ज्ञातृधर्मकथा, उपासक दशा, अन्तकृतदशा, अनुत्तरोपपातिकदशा, प्रश्नव्याकरण तथा) विपाक श्रुत के धारक थे अर्थात् आचारांग सूत्र से लेकर विपाक श्रुत तक ग्यारह अंगों के ज्ञाता—अध्येता थे। वे वहीं—उसी बगीचे में भिन्न-भिन्न स्थानों पर एक-एक समूह के रूप में, समूह के एक-एक विभाग के रूप में, तथा अलग अलग रूप में विभक्त होकर बैठ जाते थे, इक्के-दुक्के भी बैठ जाते थे। उनमें कई एक श्रमण आगमों की वाचना देते थे—आगम-साहित्य का अध्ययन करवाते थे, कई प्रश्नोत्तर द्वारा शंका समाधान करते थे, कई अधीत-पाठ की बार-बार आवृत्ति करते थे, कई चिन्तन-मनन करते थे। उनमें कई एक श्रमण आक्षेपणी—मोह-माया से हटकर समभाव की ओर आकृष्ट अथवा उन्मुख करने वाली, विक्षेपणी—कुमार्ग से विमुख करने वाली, संवेगनी—मोक्ष सुख की अभिलाषा उत्पन्न करने वाली, निर्वेदनी—संसार से औदासीन्य उत्पन्न करने वाली—यों चार प्रकार की (धर्म) कथाएँ कहते थे। उनमें कई एक श्रमण अपने दोनों घुटनों को ऊँचा उठाये, मस्तक

को नीचा किये अर्थात् एक विशेष आसन में अवस्थित होकर ध्यान रूप कोष्ठ—कोठे में प्रविष्ट थे अर्थात् वे अपनी भावना और धारणा के अनुरूप विभिन्न-दैहिक-अवस्थाओं में स्थित हो ध्यान साधना में सलग्न रहते थे। इस प्रकार वे अनगार—श्रमण संयम और तप से अपनी आत्मा को भावित—अनुप्राणित करते हुए विचरण करते थे।

In that period, at that time, Sramaṇa Bhagavān Mahāvīra had many monks in his order who were highly illustrious (*Bhagavanta*). Some were the masters of *Ācāra Śruta*, till *Vipāka Śruta* (i.e., masters of 11 *Aṅgas*, from *Ācārāṅga* till *Vipāka*). Some read them, some resolved doubts, some repeated them, some ruminated over them, some gave four types of spiritual discourses, viz., attracting people from attachment to fundamentals, reverting them from a weak track, creating in them a desire for liberation and making them indifferent to mundane life. Some lived with their thighs up and head bent low, sheltered in the cell of meditation, enriching their soul by restraint and penance.

संसार भउव्विग्गा भीआ जम्मण-जर-मरण-करण-गंभीर-दुक्ख-पक्खुब्भिअ-पउर-सलिलं। संजोग-विओग-वीची-चिंता-पसंग-पसरिअ-वह-बंध-महल्ल-विउल-कल्लोल-कलुण-विलविअ-लोभ-कल-कलंतबोलबहुलं।

वे अनगार—श्रमण संसार के भय से उद्विग्न—डरे हुए थे, आवागमन रूप चतुर्गतिमय संसार-चक्र को कैसे पार कर पाएँ इस चिन्ता में व्यस्त थे। यह संसार एक सागर है, जन्म, जरा, वृद्धावस्था और मृत्यु के द्वारा उत्पन्न हुए घोर दुःख रूप छलछलाते अपार जल से यह (समुद्र) भरा हुआ है। उस दुःख रूप जल में संयोग-मिलन, वियोग-विरह के रूप में लहरें उत्पन्न हो रही हैं, वे लहरें चिन्तापूर्ण प्रसंगों से दूर-दूर तक फैलती जा रही है। वध

और वन्धन रूप विशाल व विपुल कल्लोलें उठ रही हैं, जो करुण या शोकपूर्ण विलाप और लोभ की कल-कल करती हुई तीव्र-ध्वनि से युक्त है।

They were afraid and alarmed of the world which is like an ocean full of severe misery with its non-ending and restless water which arises out of birth, old-age and death. In this water which is misery, there are waves establishing and breaking relations ; these waves spread through thought-process. There are very deep waves of slaughter and bondage and they emit a terrible sound of attachment and lamentation.

अवमाणण-फेण-तिव्व- खिंसण-पुलंपुल-प्पभूअ-रोग-वेअण- परिभव विणिवाय-फरुस-धरिसणा-समावडिअ-कढिण-कम्म-पत्थर-तरंग - रंगत-निच्च-मच्चुभय तोअपट्ठं-कसाय-पायाल-संकुलं ।

संसार-सागर में भरे हुए दुःख रूप जल का ऊपरी भाग अवमानना—तिरस्कार रूप झागों से ढंका है। क्योंकि तीव्र निन्दा, निरन्तर होने वाली रोग-वेदना, औरों से प्राप्त होता अपमान, विनाश, कटुतापूर्ण वचन द्वारा निर्भर्त्सना, तत्प्रतिवद्ध ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय आदि आठ कर्मों के प्रगाढ़ उदय रूप कठोर पत्थरों की टक्कर से उठती हुई संयोग-वियोग रूप लहरों से वह (भव सागर) परिव्याप्त है। वह तोयपृष्ठ—जल का ऊपरी भाग नित्य मृत्यु-भय रूप है। यह संसार रूप समुद्र कषाय—क्रोध, मान, माया और लोभ रूप पाताल-कलशों (तलभूमि) से परिव्याप्त है।

The upper surface of this water which is misery in this worldly ocean is full of constant terror of death. It is full of foam made from scolding. This is generated by waves (which establish and break relations) crushing against the hard rock

of *karma* made of profound infamy, incessant pain from disease, frequent births and deaths, harsh words and scolding. This wordly ocean has the four passions as its base.

भव-सय-सहस्स-कलुस-जल-संचयं पतिभयं अपरिमिअ-महिच्छ-कलुस-मति-वाउ-वेग-उद्धुम्म-माण-दगरय-रयंधआर-वर-फेण-पउर-आसा-पिवास-धवलं मोह-महावत्त-भोग भममाण-गुप्पमाणुच्छलंत-पच्चोणियत्त-पाणिय-पमाय चंड-वहुदुट्ठ-सावय-समाहउद्धायमाण-पब्भार-घोर-कंदिय-महाररवंत-भेरवरवं।

इस संसार-सागर में हजारों-लाखों जन्मों में अर्जित पापमय पानी संचित है। अपरिमित—असीम इच्छाओं से मलिन बनी हुई बुद्धि रूपी वायु के वेग से ऊपर उछलते हुए सघन जलकणों के समूह के कारण आवेग से अन्धकार युक्त तथा आशा—अप्राप्त वस्तुओं के प्राप्त होने की संभावना, पिपासा—अप्राप्त पदार्थों को प्राप्त करने की पुनः-पुनः आकांक्षा के द्वारा उलझे हुए धागों की तरह वह धवल है। इस संसार रूप समुद्र में मोह के रूप में बड़े-बड़े आवर्त्त—जलमय विशाल चक्र हैं। उनमें भोग रूप भंवर—जल के छोटे-छोटे गोलाकार घुमाव उठते हैं। इसलिये दुःख रूप जल चक्र काटता हुआ या भ्रमण करता हुआ, चंचल होता हुआ, ऊपर उछलता हुआ, नीचे गिरता हुआ दिखाई देता है। अपने में स्थित प्रमाद रूप भयानक, अति दुष्ट—हिंसक जल-जन्तुओं से आहत (घायल) होकर ऊपर उछलते हुए, नीचे की ओर गिरते हुए, बुरी तरह चीखते-चिल्लाते हुए क्षुद्र जीवों के समूहों से यह (संसार-समुद्र) परिव्याप्त है। वही मानों (उत्प्रेक्षा अलंकार) उस का कोलाहलरूप भयावह गर्जन या आघोष है।

The worldly ocean has the accumulation of dirt from hundreds, thousands, even tens of thousands lives and is apparently exceedingly dreadful. It has been made dark by the force of rushing particles of water moving up by the

pressure of wind which is perception (*mati*) which in its turn is rendered dirty by a non-ending misery (*mahecchā*). It is white only to the extent to which there is hope and hankering for what is yet to be attained. It is covered by a good-looking foam (consisting of infamy and disrespect). The worldly ocean has big whirls of attachment. They create circular movements of water which are the experiences. Thus the water of misery is visible, circling, restless, moving up and falling down. Inside the water, there are terrible and extremely wicked aquatics in the form of delusion. Being incessantly disturbed by the rise and fall of water, living beings in the ocean incessantly cry. Thus with (rising and) falling current of water which is misery, aquatics which are delusion and the groan of wounded worldly beings ; the worldly ocean is full of great noise which emits a terrific sound.

अण्णाण - भमंत - मच्छ-परिहत्थ - अणिहुतिंदिय-महामगर- तुरिअ चरिअ - खोखुब्भमाण - नच्चंत -चवल-चंचल - चलंतं-घुम्मंत-जलसमूहं अरति-भय-विसाय-सोग-मिच्छत्त-सेल-संकडं अणाइ-संताण-कम्मबंधण-किलेस-चिक्खिल्ल-सुदुत्तारं ।

इस संसार-सागर में अज्ञान रूप घूमते हुए मत्स्य हैं, अनुपशान्त इन्द्रिय समूह रूप बड़े-बड़े मगरमच्छ हैं, ये त्वरापूर्वक हलन-चलन करते हैं, जिससे दुःख रूप जल उछल रहा है, क्षुब्ध हो रहा है, नृत्य-सा कर रहा है, चपलता एवं चंचलता पूर्वक चल रहा है, घूम रहा है। यह संसार रूप समुद्र, अरति—संयम में अभिरुचि का अभाव, भय, विषाद, शोक, मिथ्यात्व रूप पर्वतों से व्याप्त है। यह (भव सागर) अनादिकालीन प्रवाह वाले कर्म बन्धन और तत्प्रसूत क्लेश रूप कर्दम (कीचड़) के कारण अति ही दुस्तर—दुर्लंघ्य है ।

Floating to and fro in the worldly ocean are the clever fish which are ignorance and the crocodiles which are the

restless sense-organs. They move at a very quick pace. This disturbs the water which looks as if dancing, flowing from one place to another, whirling and restless. The worldly ocean has rocks such as sadness, fear, gloom, sorrow and falsehood. This is made uncrossable by the bondage of *karma* which comes down from an endless past, and also by the dirt of misery.

अमर-नर-तोरिय-निरय-गइ-गमण-कुडिल - परिवत्त-विउल- वेलं चउरंत-महंत-मणवदग्गं रुद्दं संसारसागरं भीमदरिसणिज्जं तरंति धीई-धणिअ-निप्पकंपेण तुरिय-चवलं संवर-वेरग्ग-तुंग-कूवय-सुसंपउत्तेणं णाण-सित-विमल-मूसिएणं सम्मत्त-विसुद्ध-लद्ध-णिज्जामएणं धीरा संजमपोएण सीलकलिआ ।

वह (भव सागर) देव गति, मनुष्य गति, तिर्यंच गति और नरक गति में गमन रूप कुटिल परिवर्त—जल के छोटे-छोटे गोलाकार घुमाव (भंवर) से युक्त है, विपुल ज्वारवाला है। चार गतियों के रूप में इसके चार किनारे हैं, दिशाएँ हैं। यह विशाल, अगाध, रौद्र तथा भयावह दिखाई देने वाला है। इस संसार-समुद्र को वे शील सम्पन्न अनगार—श्रमण संयम रूप जहाज के द्वारा शीघ्रतापूर्वक पार कर रहे थे। वह संयम रूप जहाज धैर्य, सहिष्णुता रूप रज्जू—रस्सी के बन्धन से बँधा होने के कारण निष्प्रकम्प—सर्वथा स्थिर था। संवर—हिंसा मृषावाद आदि से विरति, वैराग्य—संसार से विरक्ति रूप उच्च कूपक—ऊँचे मस्तूल स्तम्भ विशेष से संयुक्त था। उस संयम रूप पोत में ज्ञान रूप निर्मल वस्त्र का ऊँचा पाल तना हुआ था। विशुद्ध सम्यक्त्व—सम्यग्दर्शन रूप नियामक—कर्णधार उसे प्राप्त हुआ था।

The ocean has devious turns/tides which are migrations to and from infernal life, animal life, human life and life in heaven, all together giving the impression of a tidal bore. This worldly ocean has four forms of existence,

limitless and terrific. The monks in the order of Mahāvīra were quickly crossing through this terrific ocean with the help of a boat which is restraint and was held fast by a rope called patience. It is fitted with masts which are the checking of *karma* inflow and total detachment. Its sail is a pure white cloth which is knowledge. Pure equanimity is its (unfailing) boatman.

पसत्थ-ज्झाण-तव-वाय-पणोल्लिअ-पहाविएणं उज्जम-ववसाय-ग्गहिय-णिज्जरण-जयण-उवओग-णाण-दंसण-विसुद्ध-वय-भंड - भरिअ-सारा जिणवर-वयणोवदिट्ठ-मग्गेणं अकुडिलेण सिद्धि-महापट्टणाभिमुहा समण-वर-सत्थवाहा सुसुइ-सुसंभास-सुपण्ह-सासा गामे गामे एगरायं णगरे णगरे पंचरायं दूइज्जंता जिइंदिया णिब्भया गयभया सचित्ता-चित्त-मीसिएसु दव्वेसु विरागयं गया संजया विरया मुत्ता लहुआ णिरवकंखा साहू णिहुआ चरंति धम्मं ॥२१॥

वह (संयम रूप जहाज) प्रशस्त ध्यान तथा तप रूप वायु की प्रेरणा से अनुप्रेरित होता हुआ शीघ्रतापूर्वक चल रहा था। उसमें उद्यम—अनालस्य, व्यवसाय—वस्तु-निर्णय या सुप्रयत्नपूर्वक गृहीत निर्जरा, यतना, उपयोग, ज्ञान, दर्शन, (चारित्र) तथा विशुद्ध व्रत रूप सार पदार्थ श्रेष्ठ माल (अनगारों के द्वारा) भरा हुआ था। वीतराग प्रभु के वचनों के द्वारा उपदिष्ट विशुद्ध मार्ग से वे श्रमणश्रेष्ठ रूप सार्थवाह—दूर-दूर तक कुशलतापूर्वक व्यवसाय करने वाले बड़े व्यापारी, सिद्धि रूप महापट्टन—बड़े बन्दरगाह की ओर अभिमुख होकर बढ़े जा रहे थे, अर्थात् वे सीधी गति से संयम रूप जहाज के द्वारा जा रहे थे। वे अनगार—श्रमण सम्यक् श्रुत-सत्सिद्धान्त प्रतिपादक आगमीय ज्ञान, उत्तम संभाषण, सुप्रश्न, सद्भावना समायुक्त अर्थात् उत्तम आकांक्षा वाले थे अथवा वे सम्यक् श्रुत, उत्तम भाषण तथा प्रश्न, प्रतिप्रश्न आदि द्वारा सद्शिक्षा प्रदान करते थे। वे अनगार—श्रमण ग्रामों में एक-एक रात तथा नगरों में पाँच-पाँच रात तक निवास करते हुए, जितेन्द्रिय—इन्द्रियों को वश किये हुए, निर्भय—मोहनीय आदि भयोत्पादक कर्मों के उदय को रोकने वाले, भय के उदय को

निष्फल बनाने वाले अर्थात् भय से अतीत, सचित्त—जीव सहित, अचित्त—जीव रहित, मिश्रित—सचित्त-अचित्त—सजीव-निर्जीव मिले हुए द्रव्यों से विरक्त रहने वाले, संयत—सम्यक् प्रयत्न वाले, विरत—हिंसा मृषावाद आदि से निवृत्त या तपःसाधना में विशेष रूप से रत, मुक्त—राग और द्वेष रूप ग्रन्थि से छूटे हुए, लघुक—न्यूनतम उपकरण रखने वाले, निरवकांक्ष—आकांक्षा—इच्छा से रहित, साधु—मुक्ति की प्राप्ति हेतु साधना करने वाले, एवं निभृत—प्रशान्तवृत्ति से संयुक्त होकर धर्म की आराधना करते थे ॥२१॥

This boat which is restraint moves fast with the help of the wind which is wholesome meditation and penance. This boat has been filled up by the monks with jars containing activity (absence of idleness), *karma* exhaustion, endeavour, knowledge, faith, pure conduct—all essentials. Following the course indicated by the Jinas, these great Sramaṇa merchants are moving very fast in their boat which is restraint with their faces turned towards the great port which is perfection. These monks were the masters of right texts. Their talk was pleasant as their questions were intelligent and they cherished a decent hope. *While in a village, they spent one night there,* and five nights when in a town, conquerors of senses, wholly free from fear, destroying the very possibility of the genesis of fear, totally detached to all forms of life, to non-life (matter), life-non-life, restrained, desisted, tie-free, with little possession, without hankering, covetous of liberation, calm, they led a spiritual life. 21

असुरकुमार देवों का अवतरण

The Descent of the Asurakumāra Gods

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स बहवे असुरकुमारा देवा अंतिअं पाउब्भवित्था । काय-महाणील-सरिस-

णील-गुलिअ-गवल-अयसि-कुसुमप्पगासा विअसिअ-सयवत्तमिव पत्तल-निम्मल-ईसिं-सितरत्त-तंबणयणा गरुलायत-उज्जु-तुंग-णासा उअचिअ-सिल-प्पवाल-बिंबफल-सण्णिभाहरोट्ठा ।

उस काल (वर्तमान अवसर्पिणी) उस समय (चतुर्थ आरे के अन्त) में श्रमण भगवान् महावीर के समीप बहुत से असुर कुमार देव प्रकट हुए थे। उनका वर्ण काले महानील मणि के समान था और नीलमणि, नील की गुटिका, भैंसे के सींग तथा अलसी के फूल के समान उनकी दीप्ति थी। उनके नेत्र खिले हुए शतपत्र कमल के सदृश थे, नेत्रों की भौंहें सूक्ष्म रोममय निर्मल थीं, उनके नेत्रों का वर्ण कुछ-कुछ सफेद, लाल एवं ताम्र के सदृश था। उनकी नासिकाएँ गरूड़ की नाक की तरह लम्बी, सीधी एवं ऊँची थी। उनके ओष्ठ—होठ परिपुष्ट शिला-प्रवाल—मूंगे तथा बिम्बफल के समान लाल थे।

In that period, at that time, many Asurakumāra gods came down to Bhagavān Mahāvīra. They had a black complexion like the colour of *mahānīla* stone and the glaze of *nīlamaṇi* stone, indigo, the horn of a buffalo and the *alasī* flower. Their eyes were open like a blossomed lotus, with polished brows, somewhat white, red and copper-like. Their noses were sharp like that of Garuḍa, straight and high. Their lips were red like a refined coral or the *bimba* fruit.

पंडुर-ससि-सकल-विमल - णिम्मल - संख गोक्खीर-फेण-दगरय - मुणालिया-धवल-दंत - सेढी हुयवह - णिद्धंत-धोय-तत्त-तवणिज्ज-रत्त-तल-तालु-जीहा अंजण - घण-कसिण-रुयग-रमणिज्ज-णिद्धकेसा वामेग-कुंडलधरा अद्दचंदणाणुलित्तगत्ता ।

उनकी दन्तपंक्तियाँ स्वच्छ—निष्कलंक, चन्द्रमा के टुकड़ों के समान उज्ज्वल एवं निर्मल, शंख, गाय के दूध के झाग, जलकण तथा कमलनाल के

सदृश श्वेत थीं, उनकी हथेलियाँ, पैरों के तलवें, तालु एवं जिह्वा—जीभ अग्नि में उष्ण किये हुए, धोये हुए, पुनः तपाये हुए, शोधित किये हुए निर्मल स्वर्ण के सदृश लालिमा लिये हुए थे। उनके केश काजल तथा मेघ के समान काले एवं रुचक मणि के सदृश रमणीय और स्निग्ध—चिकने, मुलायम थे। उनके बायें कानों में एक-एक कुण्डल था। (दाहिने कानों में अन्य आभूषण थे।) उनके शरीर आर्द्र—घिसकर पीठी बनाये हुए चन्दन से लिप्त थे।

The rows of their teeth were faultless, like a portion of the moon, white like a clean conch, cow's milk, foam or a lotus stalk. The palms of their hands and the sole of their feet, the upper portion of their mouth and tongue were red like burnt gold. Their hairs were as black as the collyrium, or a dark cloud, or like the *rucaka* stone, delightful and polished. Their left ears had a ring. Their body had a coat of sandal paste.

ईसिं-सिलिंध-पुप्फ-प्पगासाइं सुहुमाइं असंकिलिट्ठाइं वत्थाइं पवर-परिहिया।

उन्होंने सिलीध्रपुष्प जैसे कुछ-कुछ सफेद या लालिमा लिये हुए श्वेत, सूक्ष्म—महीन, निर्दोष वस्त्रों को सुन्दर रूप में पहन रखे थे।

They nicely wore robes bright like the *śilidhra* flower, fine and free from dirt.

वयं च पढमं समतिक्कंता बितिअं च वयं असंपत्ता भद्दे जोव्वणे वट्टमाणा। तलभंगय-तुडीअ-पवर-भूसण-निम्मल-मणि-रयण-मंडिअ-भुआ दस-मुद्दा-मंडिअग्ग-हत्था।

वे प्रथम वय—बाल्यावस्था को पार कर चुके थे, द्वितीय वय—मध्यम वय—युवावस्था को नहीं प्राप्त किये हुए थे। भद्र यौवन—किशोरावस्था

में अवस्थित थे—विद्यमान थे। उनकी भुजाएँ मणिरत्नों से वने हुए अति श्रेष्ठ तलभंगकों—वाहुओं के आभरणों, बाहु-रक्षिकाओं, अन्यान्य श्रेष्ठ आभूषणों, उज्ज्वल रत्नों और मणियों से सुशोभित थीं। उनके दोनों हाथों की दशों अंगुलियाँ अंगुठियों से अलंकृत थीं।

They had crossed through their childhood days but had not attained full youth. They were in the prime of their youth. Their arms were decorated with *talabhaṅgaka, truṭikā* and other beautiful ornaments. All the ten fingers had rings on.

चूलामणि - चिंधगया सुरूवा महिड्ढिआ महज्जुतिआ महवला महायसा महासोक्खा महाणुभागा हार-विराइत-वच्छा-कडग-तुडिअ-थंभिअ-भुआ अंगय-कुंडल-मट्ठ-गंडतल-कण्ण-पीढ-धारी विचित्त-वत्था-भरणा विचित्त-माला-मउलि-मउडा कल्लाण-कय-पवर-वत्थ-परिहिया कल्लाण-कय-पवर-मल्लाणुलेवणा भासुरबोंदी पलंव-वणमालधरा ।

उनके मुकुटों पर चूड़ामणि के रूप में विशेप चिन्ह था। वे सुन्दर रूप युक्त, परम ऋद्धिशाली, महान् द्युतिमान्, परम वलशाली, महान् यशस्वी, अत्यन्त सुखी और अचिन्त्य शक्ति से सम्पन्न थे। उनके वक्षः-स्थलों पर हार सुशोभित हो रहे थे, वे अपनी भुजाओं पर कंकण एवं भुजाओं को सुस्थिर वनाये रखने वाली वाहुरक्षिकाओं—आभरणात्मक पट्टियाँ और अंगद—भुजवन्ध धारण किए हुए थे। उनके केसर, कस्तूरी आदि से चित्रित कपोलों पर कुण्डल तथा अन्यान्य कर्णपीठ—कान के आभूषण अलंकृत थे। वे विशिष्ट अथवा अनेक प्रकार के हाथों के आभूषण धारण किये हुए थे। उनके मस्तकों पर तरह-तरह की पुष्प-मालाओं से युक्त मुकुट थे। वे कल्याणकारी—मंगलस्वरूप, अखण्डित, श्रेष्ठ पोशाक धारण—पहने हुए थे। वे मंगलमय, श्रेष्ठ मालाओं तथा चन्दन, केसर आदि के विलेपन से युक्त थे। उन सभी के शरीर देदीप्यमान थे। सभी ऋतुओं में विकसित होने वाले पुष्पों से वनी हुई मालाएँ (वनमालाएँ) उनके गलों से घुटनों तक लटक रही थीं।

Their crowns bore the mark of hood-stone (*cūdāmaṇi*). They had grace, great fortune, great glow, great valour, great friendship and great power. Their chests were decorated with necklaces. Their arms became stiff like pillars because of the weight of ornaments. They wore bracelets and ear-rings. They painted their cheeks with musk. Their robes and ornaments were uncommon. On their crests, there was a crown bedecked with sundry garlands. They were laden with auspicious flowers and pastes. On their body dangled garlands made from flowers of all seasons. These touched the knee.

दिव्वेणं वण्णेणं दिव्वेणं गंधेणं दिव्वेणं रूवेणं दिव्वेणं फासेणं दिव्वेणं संघाएणं दिव्वेणं संठाणेणं दिव्वाए इड्ढीए दिव्वाए जुत्तीए दिव्वाए पभाए दिव्वाए छायाए दिव्वाए अच्चीए दिव्वेणं तेएणं दिव्वाए लेसाए दस दिसाओ उज्जोवेमाणा पभासेमाणा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिअं आगम्मागम्म रत्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ । करेत्ता वंदंति णमंसंति । वंदित्ता णमंसित्ता णच्चासणे णाइदूरे सुस्सूसमाणा णमंसमाणा अभिमुहा विणएणं पंजलिउडा पज्जुवासंति ।।२२।।

उन्होंने देवोचित दिव्य वर्ण, दिव्य गन्ध, दिव्य रूप, दिव्य स्पर्श, दिव्य संघात—शारीरिक गठन, दिव्य संस्थान—शारीरिक अवस्थिति, दिव्यऋद्धि—विमान, वस्त्र, आभूषण आदि समृद्धि, दिव्य द्युति—आभा या युति—विवक्षित परिवार आदि योग, दिव्य प्रभा, दिव्य छाया—कान्ति, दिव्य अर्चि—शरीरस्थ रत्नादि की दीप्ति, दिव्य लेश्या—आत्मपरिणति, तदनुरूप प्रभामण्डल के द्वारा दशों दिशाओं को प्रकाशित एवं प्रभा या शोभायुक्त करते हुए श्रमण भगवान् महावीर के समीप में आ-आकर अनुरागपूर्वक तीन बार आदक्षिणा-प्रदक्षिणा की, वन्दन-नमन किया, वन्दन नमन करके या वैसा कर—अपने-अपने नामों एवं गोत्रों का उच्चारण करते हुए, वे श्रमण भगवान् महावीर के न अधिक समीप, न अधिक दूर स्थिर

रहकर सुनने की इच्छा रखते हुए, प्रणाम करते हुए—भगवान् की ओर सन्मुख रहकर विनयपूर्वक—हाथ जोड़े हुए पर्युपासना—अभ्यर्थना करने लगे ॥२२॥

With divine colour, divine smell, divine shape, divine touch, divine body frame, divine structure, divine fortune, divine glow, divine radiance, divine grace, divine decorations, divine brilliance and divine tinge, brightening and beautifying all the directions, they came down to Sramaṇa Bhagavān Mahāvīra and moved round him with great devotion. Then they paid their homage and obeisance to him, and having done so, they took their seat neither very near nor very far, with their faces turned towards him, with folded palms. 22

भवनवासी देवों का अवतरण

The Descent of Bhavanavāsī Gods

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स वहवे असुरिंदवज्जिआ भवणवासी देवा अंतियं पाउब्भवित्था। णागपइणो सुवण्णा विज्जू अग्गीआ दीवा उदही दिसाकुमारा य पवण-थणिआ य भवणवासी। णागफडा-गरुल-वयर-पुण्णकलस-सीह-हय-गय-मगर-मउड-वद्धमाण-णिजुत्त-विचित्त-चिंधगया सुरूवा महिड्ढिया सेसं तं चेव जाव ...पज्जुवासंति ॥२३॥

उस काल (वर्तमान अवसर्पिणी) उस समय (चतुर्थ आरे के अन्त म) श्रमण भगवान् महावीर के पास वहुत से असुर कुमारों को छोड़कर नागकुमार, सुवर्णकुमार, विद्युत्कुमार, अग्निकुमार, द्वीपकुमार, उदधिकुमार, दिशाकुमार, पवनकुमार और स्तनितकुमार जाति के भवनवासी—पाताललोक में स्थित अपने आवासों में निवास करने वाले देव प्रादुर्भूत—प्रगट हुए। उनके मुकुट क्रमशः नागफण, गरुड़, वज्र, पूर्ण कलश, सिंह, अश्व, हाथी,

मगर, और वर्द्धमानक—शराव सिकोरा, तरह-तरह के चिह्न से अंकित थे। वे सुन्दर रूप युक्त, अत्यन्त ऋद्धिशाली शेष वर्णन असुरकुमार देवों के समान है यहां तक, उनकी पर्युपासना—अभ्यर्थना करने लगे ॥२३॥

In that period, at that time, leaving aside the Indras of the Asuras, many other denizen gods of the *bhavanas*, such as, Nāgakumāras, Suvarṇakumāras, Vidyutkumāras, Agnikumāras, Dvīpakumāras, Udadhikumāras, Diśākumāras, Pavanakumāras and Stanitakumāras, descended to wait upon Bhagavān Mahāvīra. They wore different marks, such as, the hood of a snake, garuḍa, thunderbolt, auspicious pitcher, lion, horse, elephant, crocodile and *vardhamānaka* (wine-cup) printed on their crown depending on their place of residence. They had great grace, great fortune, till were worshipping him. 23

वाणव्यन्तर देवों का अवतरण

The Descent of Vāṇavyantara Gods

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स बहवे वाणमंतरा देवा अंतिअं पाउब्भवित्था। पिसाया भूआ य जक्ख रक्खस किंनर किंपुरिस भुअगवइणो अ महाकाया गंधव्वणिकायगणा णिउणगंधव्वगीतरइणो अणपण्णिअ पणपण्णिअ इसिवादीअ भूअवादीअ कंदिअ महाकंदिआ य कुहंड पयए य देवा।

उस काल (वर्तमान अवसर्पिणी) उस समय (चतुर्थ आरे के अन्त) में श्रमण भगवान् महावीर के समीप में पिशाच, भूत, यक्ष, राक्षस, किन्नर, किंपुरुष, महाकाय भुजगपति, गन्धर्व—नाट्योपेत गान, गीत—नाट्यवर्जित संगीत में अनुरक्त गन्धर्वगण, अणपन्निक, पणपन्निक. ऋषिवादिक, भूतवादिक, क्रन्दित, महाक्रन्दित, कुष्मांड, पतग या प्रयत—बहुत से ये वाणव्यन्तर जाति के देव प्रादुर्भूत—प्रकट हुए।

In that period, at that time, many Vāṇavyantara gods descended to wait upon Bhagavān Mahāvīra. They were Piśācas, Bhūtas, Yakṣas, Rākṣasas, Kinnaras, Kimpuruṣas, Mahākāyas, Mahoragas, Gandharvas who were experts in music and dramatics, Aṇapannikas, Paṇapannikas, Ṛṣivādikas, Bhūtavādikas, Kranditas, Mahākranditas, Kuṣmāṇḍas and Prayatas.

चंचल-चवल-चित्त-कीलण-दवप्पिआ गंभीर-हसिअ-भणिअ-पीअ-गीअ-णच्चणरई वणमाला-मेल-मउड-कुंडल-सच्छंद-विउव्विआ-भरण-चारु-विभूसणधरा सव्वोउय-सुरभि-कुसुमसुरइय-पलंव - सोभंत - कंत - विअसंत-चित्त-वणमाल-रइअ-वच्छा कामगमी कामरूवधारी णाणाविह-वण्ण-राग-वर-वत्थ-चित्त-चिल्लिय-णियंसणा विविह - देसी - णेवत्थ - ग्गहिअ-वेसा पमुइअ-कंदप्प-कलह-केलि-कोलाहल-प्पिआ हास - वोल - बहुला अणेग-मणि-रयण-विविह-णिजुत्त - विचित्त - चिंधगया सुरूवा महिड्ढिआ जाव....पज्जुवासंति ।।२४।।

वे देव अति चंचल चित्तयुक्त, क्रीड़ाप्रिय और परिहासप्रिय थे। उन्हें गम्भीर हास्य और वैसी ही अट्टहासपूर्ण वाणी प्रिय थी। वे गीत एवं नृत्य में अनुरक्त थे। वे देव उत्तर वैक्रिय के द्वारा अपनी इच्छा के अनुसार निर्मित वनमाला—सभी ऋतुओं में विकसित होने वाले पुष्पों से वनी मालाएँ, फूलों का सेहरा, अथवा कलंगी, मुकुट, कुण्डल आदि आभूषणों के द्वारा सुन्दर रूप से सजे हुए या पहने हुए थे। सभी ऋतुओं में खिलने वाले, सुगन्धित फूलों से सुन्दर ढंग से वनी हुई लम्वी, घुटनों तक लटकती हुई, सुशोभित होती हुई, सुन्दर, विकसित वनमालाओं द्वारा उन देवों के वक्षःस्थल वड़े मनोज्ञ—आह्लादकारी या सुन्दर प्रतीत होते थे। वे अपनी इच्छानुसार जहाँ कहीं पर जाने का सामर्थ्य रखते थे और यथेच्छ रूप धारण करने वाले थे। वे भिन्न-भिन्न रंग के उत्तम, तरह-तरह के चमकीले-भड़कीले वस्त्र धारण किये हुए थे। अनेक देशों की वेश-भूषाओं के अनुरूप उन्होंने तरह-तरह की पोशाकें पहन रखी थीं। वे

प्रमोदपूर्ण काम-कलह, क्रीड़ा तथा तज्जनित कोलाहल में आनन्द लेते थे। वे बहुत हँसने वाले और बहुत बोलने वाले थे। वे अनेक मणियों तथा अनेक रत्नों से भिन्न-भिन्न रूप में निर्मित तरह-तरह के चिह्न धारण किये हुए थे। वे सुन्दर रूप से सम्पन्न तथा परम ऋद्धिशाली थे। शेष वर्णन पूर्व समागत देवों के समान है, यहाँ तक, वे उनकी पर्युपासना करने लगे, उनका सान्निध्य लाभ लेने लगे ॥२४॥

They were fickle in their mind, always fond of jokes and games. They were addicted to laughter and gossip. They had interest in music and dancing. They wore wreaths, tiara, crown, ear-rings and many other ornaments, all made from wild flowers produced by their divine power. Their chests were decorated with very long garlands, also made from wild flowers of all seasons which were fragrant, delightful and fully blossomed. They were capable to go wherever they pleased and assume any form they desired. They had put on robes and dresses of diverse hues, all very gaudy and conspicuous, as if they had assembled from many lands. They took delight in games flaming up sex, in quarrels, in swimming with girls, and in simply making noise. They were talking and laughing much. They wore diverse marks which were decked with gems and precious stones. They had immense grace, immense fortune, till were worshipping him. 24

ज्योतिष्क देवों का अवतरण

The Descent of Jyotiṣka Gods

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जोइसिया देवा अंतिअं पाउब्भवित्था। विहस्सती चंद सूर सुक्क सणिच्चरा राहू धूमकेतू वुहा य अंगारका य तत्त-तवणिज्ज-कणग-वण्णा जे गहा जोइसंमि चारं चरंति। केऊ अ गइरइआ। अट्ठावीसविहा

य णक्खत्तदेवगणा। णाणासंठाण-संठियाओ पंच-वण्णाओ ताराओ। ठिअलेस्सा चारिणो अ अविस्साम-मंडल-गती। पत्तेयं णामंक-पागडिय-चिंध-मउडा। महिड्ढिया जाव....पज्जुवासंति ॥२५॥

उस काल (वर्तमान अवसर्पिणी) उस समय (चतुर्थ आरे के अन्त) में श्रमण भगवान् महावीर के समक्ष वृहस्पति, चन्द्र, सूर्य, शुक्र, शनैश्चर, राहू, धूमकेतु, बुध और मंगल, जिनका वर्ण तपे हुए स्वर्ण-विन्दु के सदृश देदीप्यमान् था—ये ज्योतिष्क देव प्रादुर्भूत—प्रगट हुए। इन देवों के अतिरिक्त ज्योतिश्चक्र में भ्रमण करने वाले—गतिशील, गति में आनन्द अनुभव करने वाले, केतु—जलकेतु आदि ग्रह, अट्ठाईस प्रकार के नक्षत्र देवगण, भिन्न-भिन्न आकृतियों के पाँच वर्ण के तारे-तारा जाति के देव प्रादुर्भूत—प्रकट हुए। उनमें स्थित रह कर प्रकाश करने वाले, अनवरत मण्डलाकार गति से चलने वाले, दोनों प्रकार के ज्योतिष्क देव थे। प्रत्येक—हर किसी ने अपने-अपने नाम से अंकित अपना विशिष्ट चिन्ह अपने मुकुट पर धारण कर रखा था। वे अत्यन्त ऋद्धिशाली पूर्व समागत देवों के सदृश यथाविधि वन्दना-नमस्कार करके श्रमण भगवान् महावीर की पर्युपासना—अभ्यर्थना करने लगे ॥२५॥

In that period, at that time, the Jyotiṣka gods descended to wait upon Bhagavān Mahāvīra. They were : Jupiter, Moon, Sun, Venus, Saturn, Rāhu, Comets, Mars and Maṅgala which were as red as a drop of molten gold. These heavenly bodies which usually move on their orbit came down to Bhagavān Mahāvīra. There came down the mobile Ketu, twentyeight types of Nakṣatras of diverse shape and stars of five hues. There came down some heavenly bodies which shine from a fixed position, and others which shine as they move. Each one wore a crown with the distinguishing emblem of his own *vimāna* and its name printed on it. They had immense grace, immense fortune, till were worshipping him. 25

वैमानिक देवों का अवतरण

The Descent of Vaimānika Gods

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स वेमाणिया देवा अंतियं पाउब्भवित्था। सोहम्मीसाण-सणंकुमार-माहिंद-बंभ-लंतक-महासुक्क-सहस्साराणय-पाणयारण-अच्चुयवई पहिट्ठा देवा।

उस काल (वर्तमान अवसर्पिणी) उस समय (चतुर्थ आरे के अन्त) में श्रमण भगवान् महावीर के सान्निध्य में सौधर्म, ईशान, सनत्कुमार, माहेन्द्र, ब्रह्म, लान्तक, महाशुक्र, सहस्रार, आनत, प्राणत, आरण और अच्युत ये वैमानिक देवलोक के अधिपति इन्द्र अत्यधिक प्रसन्नतापूर्वक प्रादुर्भूत—प्रगट हुए।

In that period, at that time, many Vaimānika gods descended to wait upon Bhagavān Mahāvīra. They came down from their heavenly abodes, viz., Saudharma, Īśāna, Sanatkumāra, Māhendra, Brahma, Lāntaka, Mahāśukra, Sahasrāra, Ānata, Prāṇata, Āraṇa and Acyuta. They appeared to be immensely happy.

जिण-दंसणुस्सुगागमण-जणिय-हासा पालक-पुप्फक-सोमणस-सिरिवच्छ-णंदिआवत्त-कामगम-पीइगम-मणोगम-विमल - सव्वओभद्द-णामधिज्जेहिं विमाणेहिं ओइण्णा वंदका जिणिंदं। मिग-महिस-वराह-छगल-दद्दुर-हय-गयवइ-भुअग-खग्ग-उसभंक-विडिम - पागडिय - चिंधमउडा पसिढिल-वर-मउड-तिरीडधारी कुंडल-उज्जोविआणणा मउड-दित्त-सिरया। रत्ताभा पउमपम्हगोरा सेया सुभ-वण्ण-गंध-फासा उत्तम-विउव्विणो विविह-वत्थ-गंध-मल्लधरा महिड्ढिआ महज्जुतिआ जाव...पंजलिउडा पज्जुवासंति ॥२६॥

वे देव जिन—राग-द्वेष के विजेता तीर्थंकर प्रभु महावीर के दर्शन पाने की उत्सुकता और तदर्थ अपने वहाँ पहुँचने से उत्पन्न हुए हर्ष से उल्लसित थे। जिनेश्वर का वन्दन-स्तवन करने वाले वे (बारह देवलोकों के दस अधिपति) देव पालक, पुष्पक, सौमनस, श्रीवत्स, नन्द्यावर्त, कामगम, प्रीतिगम, मनोगम, विमल और सर्वतोभद्र नाम के अपने-अपने विमानों से भूमि पर अवतीर्ण—उतर आये। वे इन्द्र मृग—हरिण, महिष—भैंसा, वराह —सूअर, छगल—बकरा, दर्दुर—मेंढक, हय—घोड़ा, गजपति—उत्तम हाथी, भुजंग—सर्प, खड्ग—गैंडा और वृषभ—सांड, के चिन्हों से अंकित मुकुट को धारण किये हुए थे। वे उत्तम मुकुट ढीले बन्धनवाले, उनके सुन्दर सविन्यास युक्त मस्तकों पर विद्यमान—दीप्तिमान् थे। कुण्डलों की उज्ज्वल प्रभा से उनके मुख देदीप्यमान—उद्योतित थे। मुकुटों से उनके मस्तक सुशोभित—दीप्तिमान् थे। वे लाल आभा—लालिमा लिए हुए, कमल गर्भ के समान गौर कान्तिमय श्वेत वर्ण से युक्त थे। वे उत्तम उत्तर वैक्रिय के द्वारा शुभ वर्ण, शुभ गन्ध और शुभ स्पर्श के निष्पादन में सक्षम थे। वे भिन्न-भिन्न प्रकार के वस्त्र, सुगन्धित द्रव्य, और मालाएँ धारण किये हुए थे। वे परम ऋद्धि से सम्पन्न तथा अत्यन्त द्युतिमान् थे। पूर्व समागत देवों की तरह शेष वर्णन, यहाँ तक, वे भगवान् महावीर के सामने विनयपूर्वक अंजलि बाँधे—हाथ जोड़े, उनकी पर्युपासना—अभ्यर्थना या उनका सान्निध्य लाभ लेने लगे ॥२६॥

They were full of joy because they were keen to pay their homage to the Jina and they had been able to come. They descended on this earth from various *vimānas*, such as, Pālaka, Puṣpaka, Somanasa, Srivatsa, Nandyāvarta, Kāmagama, Prītigama, Manogama, Vimala and Sarvatobhadra. They wore on their crown their respective emblems, such as, deer, buffalo, pig, goat, frog, horse, pedigree elephant, snake, rhino and ox. The crowns were loosely placed. Their faces were beaming in the glitter of their ear-rings. So did their crest in the glitter of their crown. They were red in their pigmentation, or yellow like the central piece of lotus, or simply white. They had great power to transform themselves. They had put on

diverse robes and dresses, fragrant cosmetics and garlands, had grace and fortune till worshipped him with folded palms. 26

चम्पानगरी में लोगवार्ता

Popular Gossip in the City of Campā

तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपाए णयरीए सिंघाडग-तिग-चउक्क-चच्चर-चउम्मुह-महापहपहेसु महया जणसद्दे इ वा जणवूहे इ वा जणबोले इ वा जणकलकले इ वा जणुम्मी ति वा जणुक्कलिया इ वा जणसण्णिवाए इ वा।

उस काल (वर्तमान अवसर्पिणी) उस समय (चतुर्थ आरे के अन्त) में चम्पा नगरी के सिंघाटों—सिंगाड़े के से आकार वाले तिकोने स्थानों, त्रिकों—जहां तीन मार्ग मिलते हैं, ऐसे तिराहों, चतुष्कों—चौक, जहाँ चार रास्ते मिलते हैं ऐसे चौराहों, चत्वरों—जहाँ से चार से अधिक रास्तें मिलते हैं ऐसे स्थानों, चतुर्मुखों—चारों ओर मुख अथवा चार द्वार युक्त देवकुलों, राजमार्गों और गलियों में मनुष्यों की बहुत ही आवाज आ रही थी, वहाँ बहुत से लोग शब्द कर रहे थे, परस्पर में कह रहे थे, मन्द स्वर में बात कर रहे थे, लोगों का बड़ा जमघट लगा हुआ था, वे बोल रहे थे। उनके वार्तालाप की कल-कल—मनोज्ञ ध्वनि सुनाई देती थी। लोगों की मानों एक लहर-सी उमड़ी आ रही थी, छोटी-छोटी टोलियों में लोग घूम रहे थे, एक स्थान से हटकर दूसरे स्थान पर इकट्ठे हो रहे थे।

In that period, at that time, there was a huge uproar of a large gossip in triangular parks, at places where three roads met, in the squares, at places where four roads met, in the temples, on the highways, in lanes and bye-lanes, in the market place of the city of Campā. All these places were thronged

with men. Some groups were talking in a whisper, some were talking aloud, but there was talk everywhere. People were moving in small groups, often changing position.

वहुजणो अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ एवं भासइ एवं पण्णवेइ एवं परूवेइ—एवं खलु देवाणुप्पिआ ! समणे भगवं महावीरे आदिगरे तित्थगरे सयंसंवुद्धे पुरिसुत्तमे जाव....संपाविउकामे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे इहमागए इह संपत्ते इह समोसढे, इहेव चंपाए णयरीए वाहिं पुण्णभद्दे चेइए अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ।

वहुत से मनुष्य परस्पर में चर्चा कर रहे थे, अभिभाषण कर रहे थे, प्रज्ञापित कर रहे थे—जता रहे थे, प्ररूपित कर रहे थे—एक-दूसरे को वता रहे थे। अर्थात् इस प्रकार कार्य-कारण की व्याख्या सहित तर्कसम्मत कथन करते थे। हे देवानुप्रियो ! वात ऐसी है कि श्रमण भगवान् महावीर जो अपने युग में श्रुत धर्म के आद्य प्रवर्तक, तीर्थंकर—श्रमण-श्रमणी, श्रावक-श्राविका रूप धर्म तीर्थ के प्रतिष्ठापक, स्वयंवुद्ध—स्वयं विना किसी अन्य निमित्तों के वोध प्राप्त, पुरुषोत्तम—पुरुषों में उत्तम,.....यावत् सिद्धिगति रूप स्थान की प्राप्ति के लिये समुद्यत भगवान् महावीर क्रमशः आगे से आगे विचरण करते हुए, ग्रामानुग्राम विहार—एक गांव से दूसरे गांव का स्पर्श करते हुए यहां आये हैं, सम्प्राप्त हुए हैं, यहाँ समवसृत हुए हैं—पधारे हैं। यहीं चम्पा नगरी के वाहर पूर्णभद्र चैत्य में श्रमण चर्या के योग्य स्थान ग्रहण कर संयम तथा तप से अपनी आत्मा को भावित—अनुप्राणित करते हुए विराजित हैं, या आत्माराम में विहार कर रहे हैं।

Some were talking to others very casually, some seriously, some were expressing the same theme in different words. Said they, "Oh beloved of the gods ! The fact is that Śramaṇa Bhagavān Mahāvīra, who is self-enlightened, the founder, the creator of the order, the best among men, till one who is

perfected, while wandering from village to village, has, in the course of his wandering mission, arrived here, camped here and is staying here. He is camped in the Purṇabhadra temple outside the city of Campā, with appropriate resolve, enriching his soul by restraint and penance.

तं महप्फलं खलु भो देवाणुप्पिया ! तहारूवाणं अरहंताणं भगवंताणं णामगोअस्स वि सवणताए किमंग पुण अभिगमण-वंदण-णमंसण-पडिपुच्छण-पज्जुवासणयाए ?

"हमलोगों के लिये यह महान् लाभप्रद है कि—हे देवानुप्रियों ! अरिहन्त के गुणों से युक्त ऐसे अर्हत् भगवान् के नाम—पहचान के लिये बनी हुई संज्ञा, गोत्र—गुणों के अनुरूप दिया हुआ नाम, को सुनने से भी महान् फल की प्राप्ति होती है। अर्थात् उनके नाम-गोत्र का सुनना भी बहुत बड़ी बात है। तो फिर उनके सम्मुख जाना, वन्दन-नमन करना, प्रतिपृच्छा—जिज्ञासा करना, अर्थात् उनसे धर्म-तत्त्व के विषय में पूछना, उनकी पर्युपासना करना—उनका सान्निध्य-लाभ लेना—इन सभी से प्राप्त होने वाले फल का तो कहना ही क्या ?

"Oh beloved of the gods ! When the mere mention of his auspicious name and lineage is the giver of great merit, the outcome to one who waits upon him, who pays him homage and obeisance, who asks him questions, who worships him, must indeed be very great.

एक्कस्स वि आयरियस्स धम्मिअस्स सुवयणस्स सवणताए किमंग पुण विउलस्स अत्थस्स गहणयाए ?

"उनके एक भी आर्य—सद्गुण नष्पन्न, सद्धर्ममय एक उत्तम वचन

को सुनने से और विपुल—विस्तृत अर्थ के ग्रहण करने से होने वाले फल की तो बात ही क्या है ?

"When even a single, noble, well-spoken and pious word from Bhagavān Mahāvīra gives great merit, the merit derived from listening and accepting his whole sermon must indeed be very great.

तं गच्छामो णं देवाणुप्पिया ! समणं भगवं महावीरं वंदामो णमंसामो सक्कारेमो सम्माणेमो कल्लाणं मंगलं देवयं चेइअं (विणएणं) पज्जुवासामो ।

"अतः हे देवानुप्रियों ! अच्छा हो, हम सब वहाँ जाएँ, श्रमण भगवान् महावीर को वन्दन करें, नमन करें, उनका सत्कार करें, सम्मान करें, भगवान् कल्याण के हेतु रूप हैं, पाप-नाश के हेतु रूप हैं, दिव्य स्वरूप की प्राप्ति में हेतु रूप हैं, और ज्ञान-प्राप्ति के हेतु रूप हैं, हम सब विनयपूर्वक उनकी पर्युपासना—सान्निध्य प्राप्त करें ।

"So Oh beloved of the gods ! Let us all go to Sramaṇa Bhagavān Mahāvīra. Let us pay him homage. Let us pay him compliments. Let us show him respect. Let us worship this great personality with due humility who helps us to destroy sin and to acquire perfection, knowledge and bliss.

एतं णे पेच्चभवे इहभवे अ हियाए सुहाए खमाए णिस्सेअसाए आणुगामिअत्ताए भविस्सइ ।

"यह (वन्दना-नमस्कार आदि) परभव—जन्म-जन्मान्तर में और इस भव—वर्तमान जीवन में हमारे लिये हितप्रद, सुखप्रद, क्षान्तिप्रद तथा निश्रेयप्रद—मोक्षप्रद सिद्ध होगा ।"

"This will help us in this life as well as in life hereafter. This will give us bliss. This will wipe clean adverse situations. This will help us in the attainment of perfection."

त्ति कट्टु वहवे उग्गा उग्गपुत्ता भोगा भोगपुत्ता एवं दुपडोआरेणं राइण्णा खत्तिआ माहणा भडा जोहा पसत्थारो मल्लई लेच्छई लेच्छईपुत्ता अण्णे य वहवे राईसर-तलवर-माडंबिय-कोडुंबिअ-इब्भ-सेट्ठि-सेणावइ-सत्थवाह-पभितिओ अप्पेगइआ वंदण - वत्तिअं अप्पेगइआ पूअणवत्तिअं एवं सक्कारवत्तियं सम्माणवत्तियं दंसण-वत्तियं कोऊहलवत्तियं ।

यों विचार-विमर्श करते हुए वहुत से उग्रों—आरक्षक अधिकारियों, उग्रपुत्रों—कुमार अवस्था वाले उग्रवंशी, भोगों—राजा के मन्त्रिमण्डल के सदस्यों, भोगपुत्रों, राजान्यों—राजा के परामर्शक मण्डल के सदस्यों, अर्थात् इक्ष्वाकुवंशीयों, ज्ञातवंशीयों और कुरुवंशीयों, क्षत्रियों—सामान्य राजकुलीन, ब्राह्मणों, सुभटों, योद्धाओं—युद्धोपजीवी सैनिकों, प्रशास्ताओं—प्रशासनिक अधिकारियों, मल्लकियों—मल्ल गणराज्य के सदस्यों, मल्लकीपुत्रों, लिच्छवियों—लिच्छवि गणराज्य के सदस्यों, लच्छवीपुत्रों तथा अन्य अनेक राजाओं—माण्डलिक नरपतियों, ईश्वरों—युवराजाओं, या प्रभावशील एवं ऐश्वर्यशाली पुरुषों, तलवरों—पट्टवन्ध विभूषित राज सम्मानित विशिष्ट नागरिकों, माडंविकों—जागीरदारों, कौटुम्विकों—वड़े-वड़े परिवारों के प्रमुख व्यक्तियों, इभ्यों—वैभवशाली जनों, श्रेष्ठियों—सुव्यवहार और धन-वैभव से प्रतिष्ठाप्राप्त सेठों, सेनापतियों, सार्थवाहों—छोटे-छोटे व्यापारियों को साथ लिये देशान्तर में व्यापार करने वाले समर्थ व्यापारियों, इन सभी के पुत्रों में से, कई एक वन्दन हेतु, कई एक पूजा करने के लिये, कई एक सत्कार हेतु, कई एक सम्मान हेतु, कई एक दर्शन हेतु, और कई एक उत्सुकता-पूर्ति हेतु भगवान् के सान्निध्य में आने को समुद्यत हुए ।

Having discussed like this, a vast crowd of people prepared

to go to Sramaṇa Bhagavân Mahāvīra. This included the Ugras, the progeny of the Ugras, the Bhogas, the progeny of the Bhogas, the Rājanyas, the progeny of the Rājanyas, the Kṣatriyas, the progeny of the Kṣatriyas, the Brāhmaṇas, the progeny of the Brāhmaṇas, heroes and their progeny, warriors and their progeny, readers of religious texts and their progeny, Mallakis and their progeny, Licchavis and their progeny, and many other chiefs, princes, nobles, *māndavikas, kauṭumbikas, ivyas, śreṣṭhis*, army commanders, foreign traders, and so on—some to pay homage, some to worship, some to pay compliments, some to show him regard, some just to catch a glimpe, and some out of sheer curiosity.

अप्पेगइआ अट्ठविणिच्छयहेउं अस्सुयाइं सुणेस्सामो सुयाइं निस्संकियाइं करिस्सामो अप्पेगइआ अट्ठाइं हेऊइं कारणाइं वागरणाइं पुच्छिस्सामो ।

उनमें कई एक जन अर्थ निश्चय हेतु—तत्त्व का यथार्थ निर्णय हेतु, अश्रुत—नहीं सुने हुए भाव को सुनेंगे, श्रुत—सुने हुए भावों को संशय-रहित करेंगे, अर्थात् तद्गत संशय को जड़—मूल से दूर करेंगे। अनेक जन इस भाव से सोचकर जीव, अजीव आदि अर्थ, पदार्थों में रहे हुए धर्म और नहीं रहे हुए धर्म से सम्बन्धित (अन्वय-व्यतिरेक) हेतु—कारण (युक्ति-युक्त तर्कसंगत व्याख्या) और व्याकरण—दूसरों के द्वारा पूछे गये प्रश्नों के उत्तर पूछेंगे—जिज्ञासा करेंगे ।

Some wanted to have some meaning clarified, some wanted to hear what they had never heard, some wanted to have their doubts clarified about what they had heard before. Some wanted to be clear about the fundamentals, such as, *jīva*, ajīva, about the nature of things, about logical interpretations, and about solutions given on the questions raised by others

अप्पेगइआ सव्वओ समंता मुण्डे भवित्ता अगाराओ अणगारिअं पव्वइस्सामो पंचाणुवइयं सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं गिहिधम्मं पडिवज्जिस्सामो अप्पेगइआ जिण भत्तिरागेण अप्पेगइआ जीयमेअं।

उनमें से कई एक जनो ने अपने सब प्रकार के सांसारिक सम्बन्धों का परिवर्जन—विच्छेद कर, मुण्डित होकर—प्रव्रजित होकर अगार धर्म—गृहस्थ धर्म से निकल कर (आगे बढ़कर) अनगार धर्म—श्रमण धर्म स्वीकार करेंगे। अनेक इस भाव से या यह चिन्तन कर कि पांच अणुव्रत—(१) स्थूल प्राणातिपात विरमण, (२) स्थूल मृषावाद विरमण, (३) स्थूल अदत्तादान विरमण, (४) स्वदार संतोष परदार विवर्जन रूप मैथुन विरमण, (५) स्थूल परिग्रह परिमाण, और सात शिक्षाव्रत—(१) दिशा परिमाण, (२) उपभोग-परिभोग परिमाण, (३) अनर्थदण्ड विरमण, (४) सामायिक, (५) देशावकाशिक, (६) पोषधोपवास, (७) अतिथि संविभाग, यों बारह व्रत युक्त श्रावक धर्म स्वीकार करेंगे। कई एक जन भक्ति—अनुराग के कारण, कई एक जन यह चिन्तन कर कि यह अपनी वंश-परम्परा का व्यवहार है कि 'दर्शन करने को जाना है' प्रभु महावीर के सान्निध्य में आने हेतु उद्यत हुए।

Some desired to use the occasion to cut off all worldly relations and join the order as monks by permanently renouncing their homes. Some wanted to court the five lesser vows and seven educative vows prescribed for the householders. Some were attracted by devotion, and some because it was a family tradition.

त्ति कट्टु ण्हाया कयवलिकम्मा कयकोऊयमंगलपायच्छित्ता सिरसाकंठेमालकडा आविद्ध-मणिसुवण्णा कप्पियहारऽद्धहार-तिसरय-पालंब-पलंबमाणकडिसुत्तय-सुकय-सोहाभरणा पवरवत्थपरिहिया चंदणोलित्तगायसरीरा।

इस प्रकार विचार करके उन्होंने स्नान किया। नैमित्तिक कार्य किये, शरीर-सज्जा की दृष्टि से आँखों में अंजन आंजा। ललाट पर मंगल स्वरूप तिलक किया। प्रायश्चित—दुःस्वप्न आदि दोषों के निवारण हेतु चन्दन, कुंकुम, अक्षत, दधि आदि से मंगल-विधान किया। उन्होंने सिर पर एवं गले में मालाएँ धारण कीं। मणि-सुवर्ण जड़ित आभरण, हार, अर्धहार, तीन लड़ों के हार, प्रलम्ब हार, लटकती हुई करधनियाँ और अन्य भी शोभावर्धक अलंकारों से अपने आपको सजाया; उत्तम, श्रेष्ठ मांगलिक वस्त्र पहनें। उन्होंने समुच्चय रूप में शरीर पर और शरीर के प्रत्येक अवयव पर चन्दन का लेप किया।

Having thought like this, people took their bath, performed necessary propitiatory and conciliatory rites, made atonements to make their journey free from danger and put on beautiful dresses. They decorated their heads and necks with beautiful garlands. They decorated themselves with golden ornaments beset with gems. They placed round their neck necklaces, half-necklaces (*ardhahāras*), necklaces with three strings, decorated their waists with *kaṭisūtras* and placed other decorative ornaments on their person. They besmeared their limbs with sandal paste.

अप्पेगइआ हयगया एवं गयगया रहगया सिवियागया संदमाणियागया अप्पेगइआ पायविहारचारिणो पुरिसवग्गुरा-परिक्खित्ता महया उक्किट्ठि-सीहणायबोलकलकलरवेणं पक्खुभिअ-महासमुद्दरवभूतंपिव करेमाणा चंपाए णयरीए मज्झंमज्झेणं णिगच्छंति णिगच्छित्ता जेणेव पुण्णभद्दे चेइए तेणेव उवागच्छंति।

उनमें से कई एक घोड़ों पर, कई हाथियों पर, कई पर्देदार पालखियों पर, कई पुरुष-प्रमाण पालखियों पर सवार हुए। कई जन बहुत पुरुषों के द्वारा चारों ओर से घिरे हुए पैदल ही चल पड़े। वे सभी लोग उत्कृष्ट, हर्षोल्लसित, सुन्दर और सिंहनाद द्वारा या कल-कल

स्वर के द्वारा (चम्पा) नगरी को लहराते-गरजते विशाल समुद्र के समान बनाते हुए चम्पानगरी के बीचों-बीच से गुजरे। वैसा कर (निकल कर) जहाँ पूर्णभद्र चैत्य था, वहाँ आये।

Some sat on horse back, some on elephants, some on chariots, palanquins, *syandamāṇikās*, some walked down on feet, surrounded by many other pedestrians all around, shouting, roaring, gossiping, filling the city of Campā with a great noise, a great commotion, giving it the look of a mighty ocean, all topsy turvy. They passed through the heart of the city of Campā and moved in the direction of Purṇabhadra Caitya.

उवागच्छित्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूरसामंते छत्ताईए तित्थयराइसेसे पासंति। पासित्ता जाण-वाहणाइं ठावइंति। ठावइत्ता जाण-वाहणेहिंतो पच्चोरुहंति। पच्चोरुहित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छंति।

वैसा कर—आकर न अधिक दूर से और न अधिक निकट से श्रमण भगवान् महावीर के तीर्थंकर रूप के वैशिष्ट्य—प्रतीक या परिचय देनेवाली छत्र आदि अतिशय—विशेषताएँ—चिन्ह उपकरण, देखीं। देखते ही यान—गाड़ी, रथ आदि और वाहन—घोड़े, हाथी, बैल आदि को वहाँ ठहराये। ठहराकर यान एवं वाहन से नीचे उतरे। नीचे उतरकर जहाँ श्रमण भगवान् महावीर थे, या विराजित थे, वहाँ आये।

When they reached the vicinity of Bhagavān Mahāvira, some of the supernaturals attending a Tirthaṅkara, such as umbrella, etc., came to their sight. Having seen them, they stopped their vehicles and alighted therefrom and came to the spot where Bhagavān Mahāvira was seated.

उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेंति। करित्ता वंदंति णमंसंति। वंदित्ता णमंसित्ता णच्चासण्णे णाइदूरे सुस्सूसमाणा णमंसमाणा अभिमुहा विणएणं पंजलिउडा पज्जुवासंति ॥२७॥

वहाँ आकर श्रमण भगवान् महावीर की तीन बार आदक्षिणा-प्रदक्षिणा की, वैसा कर वन्दन-नमस्कार किया। वन्दन-नमस्कार कर श्रमण भगवान् महावीर के न अधिक दूर, न अधिक समीप अवस्थित हो, शुश्रूषा—भगवान् के वचन-श्रवण करने की उत्कण्ठा लिये, नमस्कार मुद्रा में (श्रमण भगवान् महावीर के) सम्मुख विनयपूर्वक अंजलि बाँधे हुए—दोनों हाथ जोड़े हुए उनकी पर्युपासना—सान्निध्य लाभ लेने लगे ॥२७॥

Having arrived there, they moved round him thrice, paid their homage and obeisance . Having done so, they stood in front of him folding their hands in humility, neither very near nor very far, fully attentive, worshipping him with devotion. 27

कूणिक को भगवद्चर्या का निवेदन

The Intelligence Officer submits

तए णं से पवित्तिवाउए इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे हट्ठतुट्ठे जाव…हियए। ण्हाए जाव…अप्पमहग्घाभरणालंकिअसरीरे सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमइ। सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमित्ता चंपाणयरिं मज्झंमज्झेणं जेणेव बाहिरिया सव्वेव हेट्ठिल्ला वत्तव्वया जाव…णिसीयइ णिसीइत्ता तस्स पवित्तिवाउअस्स अद्धतेरससयसहस्साइं पीइदाणं दलयति। दलयित्ता सक्कारेइ सम्माणेइ। सक्कारेत्ता सम्माणेत्ता पडिविसज्जेइ ॥२८॥

प्रवृत्ति निवेदक को जब यह (श्रमण भगवान् महावीर के आगमन की) बात विदित हुई, वह हर्षित एवं संतुष्ट हुआ।... यावत् विकसित हृदय हुआ। उसने स्नान किया।...यावत् संख्या में कम, पर मूल्यवान् आभूषणों से शरीर को अलंकृत किया। यों वह सज-धजकर अपने घर से निकला। अपने घर से निकल कर चम्पा नगरी के बीचों-बीच—मध्य बाजार से होता हुआ, जहाँ राजा कूणिक का महल था, जहाँ बहिर्वर्ती राजसभा थी...(इसके बाद का सभी वर्णन—जो कि पहले कहा जा चुका है यहाँ तक कहना चाहिये कि राजा कूणिक प्रभु महावीर को वन्दन-नमन कर सिंहासन पर) बैठा। बैसा कर—बैठ कर उस वार्ता-निवेदक को साढ़े बारह लाख रजत-मुद्राएँ प्रीतिदान—पारितोषिक या तुष्टिदान के रूप में प्रदान की। प्रदान कर, उन्होंने उत्तम वस्त्र आदि द्वारा उसका (वार्ता निवेदक का) सत्कार किया, आदर-पूर्ण वचनों द्वारा सम्मान किया, इस प्रकार सत्कृत एवं सम्मानित कर उसे विसर्जित—विदा किया ॥२८॥

Then the aforesaid Intelligence Officer, having learnt all this, was highly delighted, till his heart expanded in glee. He took his bath, till decorated himself with ornaments light in weight but precious in value, and moved out of his residence. Then moving through the heart of the city of Campā, he arrived in the audience-room of king Kūṇika, till the king having transmitted his homage and obeisance to Bhagavān Mahāvīra, sat on his throne. Having sat on his throne, the king conferred on the Intelligence Officer a cash award of 12.50 lakhs and honoured him duly. Having done so, he dismissed him. 28

कूणिक राजा का आदेश

King Kūṇika issues instructions

तए णं से कूणिए राया भंभसारपुत्ते बलवाउअं आमंतेइ। आमंतेत्ता एवं वयासी—खिप्पामेव भो देवाणुप्पिआ ! आभिसेक्कं

हत्थिरयणं पडिकप्पेहि । हयगयरहपवरजोहकलिअं च चाउरंगिणिं सेणं सण्णाहिहि । सुभद्दापमुहाण य देवीणं बाहिरियाए उवट्ठाण-सालाए पाडिएक्कपाडिएक्काइं जत्ताभिमुहाइं जुत्ताइं जाणाइं उवट्ठवेह । चंपं णयरिं सब्भिंतर-बाहिरिअं आसित्तसित्तसुइसम्मट्ठ-रत्थंतरावणवीहिअं मंचाइमंचकलिअं णाणाविहरागउच्छियज्झयपडा-गाइपडागमंडिअ लाउल्लोइयमहियं गोसीस-सरसरत्तचंदण जाव... गंधवट्टिभूअं करेह कारवेह । करित्ता कारवेत्ता एअमाणत्तिअं पच्चप्पिणाहि । निज्जाइस्सामि समणं भगवं महावीरं अभिवंदए ।।२९।।

तब भंभसार के पुत्र राजा कूणिक ने सैन्य व्यापार में पारायण या सैन्य से सम्बन्धित अधिकारी को बुलाकर उससे इस प्रकार कहा—"हे देवानुप्रिय ! शीघ्रतापूर्वक ही आभिषेक्य—अभिषेक के योग्य या प्रधान पद पर विधिपूर्वक स्थापित, (राजा की सवारी में प्रयोजनीय) हस्तिरत्न—श्रेष्ठ हाथी को सजाकर तैयार कराओ। घोड़े, हाथी, रथ और श्रेष्ठ योद्धाओं से सहित या परिगठित चतुरंगिणी—चार अंगवाली सेना को सुसज्ज कराओ। सुभद्रा आदि प्रमुख देवियों—रानियों के लिये, उनमें से प्रत्येक के लिये यात्राभिमुख—गमन करने के लिये उद्यत जोते हुए सवारियों को बहिर्वर्ती राजसभा के समीप उपस्थापित—तैयार करा कर हाजिर करो। चंपा नगरी के बाहर और भीतर (उसके संघाटक, त्रिक, चतुष्क, चत्वर, चतुर्मुख, राजमार्ग और सामान्य मार्ग, इन सभी की सफाई कराओ, वहाँ पर जल का छिड़काव कराओ, गोबर आदि का लेप कराओ। नगरी की गलियों के मध्य भागों एवं बाजार के रास्तों की भी सफाई कराओ, जल का छिड़काव कराओ और उन्हें स्वच्छ कराओ। सीढ़ियों के आकार के प्रेक्षकासनों की रचना कराओ। भिन्न-भिन्न रंगों की, ऊंची, सिंह, चक्र आदि चिन्हों से युक्त ध्वजाएँ, पताकाएँ और अतिपताकाएँ—जिनके आस-पास ऐनेकानेक छोटी-छोटी पताकाओं—झंडियों से सजे हों, ऐसी बड़ी-बड़ीप ताकाएँ लगवाओ। नगरी की दीवारों को लिपवाओ पुतवाओ। उन दीवारों पर गोरोचन तथा सरस—आर्द्र लाल चन्दन...यावत् आदि जिससे सुगन्धित धुएँ के प्रचुरता से वहाँ पर गोल-गोल धूममय छल्ले

बनते हुए दिखलाई दें ऐसा करो और करवाओ। इनमें जो करने का है, उसे करके, तत्सम्बन्धी व्यवस्था कर, या उसे दूसरों से करवा कर मुझे सूचित करो कि आज्ञापालन हो गया है। यह सब हो जाने पर मैं श्रमण भगवान् महावीर की अभिवन्दना हेतु जाऊँगा" ॥२९॥

Then king Kūṇika, son of Bhambhasāra, called his Chief Army Officer and said unto him as follows : "Oh beloved of the gods ! Please make ready the very best of our elephants fit for the use of the king. Also prepare the four-fold army consisting of the pick from our infantry, cavalry, elephants and chariots. For the ladies, Subhadrā and others, prepare suitable and separate vehicle for each one, with animals ready to start yoked to these and present them at the exterior court. As to the city of Campā, clean it from inside and outside, remove all dirt and dust from the roads, highways, lanes, triangular parks, squares etc., and arrange to sprinkle water to make the city delightful. Then for the use of the public, erect gallery type platforms at suitable sites. Then unfurl flags, ensigns, giant flags, bearing sundry emblems like a lion, a wheel, etc., and get the floors and courtyards duly cleaned and besmeared. Then fill up the streets with the fragrant smokes of burning incences like *gośirṣa*, sandal wood, red sandal, etc. Get all these done under your care and supervision. Having completed the assignment, please report to me the due compliance of the order. I have to go to pay my homage and obeisance to Bhagavān Mahāvīra." 29

अभिवन्दना की तैयारी

Preparation for the King's visit

तए णं से बलवाउए कूणिएणं रण्णा एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठ जाव.. हिअए करयल-परिग्गहिअं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी—सामित्ति ।

तब राजा कूणिक के इस प्रकार कहे जाने पर वह सेनानायक हर्षित एवं परितुष्ट हुआ। यावत्...उसने अपने मन में प्रसन्नता का अनुभव किया। अंजलि बाँधे—दोनों हाथ जोड़े, उन्हें सिर के चारों ओर घुमाया, अंजलि को सिर से लगाया। फिर वह यों बोला—"स्वामिन्! आपकी आज्ञा का यथोचित पालन किया जाएगा।"

Having heard the order of the king, the Army Officer was highly pleased, till his heart expanded with glee. He folded his palms, moved them round his head, touched his forehead with them and submitted—"Your Majesty! Your wishes will be duly honoured."

आणाइ विणएणं वयणं पडिसुणेइ। पडिसुणित्ता हत्थिवाउअं आमंतेइ। आमंतेत्ता एवं वयासी—खिप्पामेव भो देवाणुप्पिआ! कूणिअस्स रण्णो भंभसारपुत्तस्स आभिसेक्कं हत्थिरयणं पडिकप्पेहि। हयगयरहपवरजोहकलियं चाउरंगिणिं सेणं सण्णाहिहि। सण्णाहित्ता एअमाणत्तिअं पच्चप्पिणाहि।

यों उसने विनयपूर्वक राजा का आदेश स्वीकार करते हुए उनके (राजा के) वचन सुनें। सेनानायक ने यों राजाज्ञा स्वीकार कर हस्ति-व्यापृत—महावत को बुलाया। वैसा कर—बुला कर इस प्रकार कहा—"हे देवानुप्रिय! भंभसार के पुत्र राजा कूणिक के लिये उत्तम हाथी सजाकर शीघ्र ही तैयार करो। घोड़े, हाथी, रथ तथा प्रधान योद्धाओं से संगठित चतुरंगिणी सेना के तैयार होने की व्यवस्था कराओ। ऐसा करके फिर मुझे आज्ञापालन की सूचना दो।"

Then the officer who had carefully heard the order sent for the man incharge of elephants and gave him the following instruction—"Oh beloved of the gods! Get ready the best elephant for the use by king Kūṇika, son of Bhambhasāra.

Also prepare the four-fold army with the pick from infantry, cavalry, elephants and chariots. Having done so, please report to me."

तए णं से हत्थिवाउए बलवाउअस्स एअमट्ठं सोच्चा आणाए विणएणं वयणं पडिसुणेइ ।

तब महावत ने सेनानायक की बात सुनी, उसका आदेश विनयपूर्वक स्वीकार किया ।

The keeper of the elephants heard this order and accepted it with due respect.

पडिसुणित्ता छेआयरियउवएसमइविकप्पणा-विकप्पेहिं सुणिउणेहिं उज्जलणेवत्थहत्थपरिवत्थिअं । सुसज्जं धम्मिअसण्णद्धबद्धकवइयउप्पीलियकच्छवच्छगेवेयबद्धगलवरभूसणविरायंतं अहियते-अजुत्तं सललिअवरकण्णपूरविराइयं पलंबउच्चूलमहुअरकयंधयारं चित्तपरिच्छेअ-पच्छयं । पहरणावरणभरिअजुद्धसज्जं सच्छत्तं सज्झयं सघंटं सपडागं पंचामेलअपरिमंडिआभिरामं ओसारियजमलजुअलघंटं विज्जुपणद्धं व कालमेहं उप्पाइयपव्वयं व चंकमंतं मत्तं गुलगुलंतं मणपवणजइणवेगं भीमं संगामियाओज्जं आभिसेक्कं हत्थिरयणं पडिकप्पइ । पडिकप्पेत्ता हयगयरहपवरजोहकलिअं चाउरंगिणिं सेणं सण्णाहेइ । सण्णाहित्ता जेणेव बलवाउए तेणेव उवागच्छइ । उवागच्छित्ता एअमाणत्तिअं पच्चप्पिणइ ।

वैसा कर—आदेश स्वीकार कर उस महावत ने छेकाचार्य—कलाचार्य से उपदेश—शिक्षा प्राप्त करने से जिसकी बुद्धि विविध-कल्पनाओं और सर्जनाओं—नव-निर्माण में अति निपुण अर्थात् अत्यन्त उर्वर थी उस

श्रेष्ठ हाथी को चमकीले वस्त्र, वेषभूषा आदि के द्वारा शीघ्र अलंकृत—सजा दिया। उस उत्तम हाथी को सुन्दर ढंग से सजाया। उसका धार्मिक उत्सव के अनुसार शृङ्गार किया। उसके कवच लगाया, बांधने की रस्सी को उसके वक्षःस्थल से कसा गया। उसके गले में मालाएँ—हार बाँधे, तथा उसे उत्तम आभूषण पहनाये। (वह अत्यन्त तेजस्वी—तेजोमय दीखने लगा।) सूक्ष्म लालित्ययुक्त कर्णपूरों—कानों के आभूषणों द्वारा उसे विराजित—सुसज्जित किया। लटकते हुए लम्बे-लम्बे झूलों एवं मद की गन्ध से आकर्षित हुए भ्रमरों के कारण वहाँ अन्धकार जैसा प्रतीत होता था। उस झूले पर बेल-बूँटे कढ़ा प्रच्छद—सुन्दर छोटा-सा आच्छादक वस्त्र डाला गया। शस्त्र एवं कवचयुक्त वह उत्तम हाथी युद्ध के लिये सज्जित जैसा प्रतीत होता था। उस हाथी के छत्र, ध्वजा, घंटा और पताका इन सभी को यथास्थान नियोजित किये गये। फिर उसे (मस्तक को) पाँच कलंगियों से परिमण्डित—सुसज्जित कर उसे सुन्दर बनाया। उसके दोनों परिपार्श्व में समरूप से दो घंटियाँ लटकाई गईं। वह (हाथी) बिजली सहित काले-बादल जैसा प्रतीत होता था, अर्थात् दिखाई देता था। वह हाथी अपने बड़े डील-डौल के कारण ऐसा दिखाई देता था मानों अकस्मात् कोई चलता-फिरता हुआ पर्वत उत्पन्न हो गया हो। वह मदोन्मत्त था। बड़े बादल की तरह वह गुल-गुल शब्दों के द्वारा अपने गम्भीर स्वर में मानों गरजता था। उस हाथी की गति (चाल) मन एवं पवन की गति या वेग को भी पराजित करने वाली थी। विशाल-शरीर एवं प्रचण्ड-शक्ति के कारण वह (उत्तम हाथी) भयावह जैसा लगता था। उस संग्राम योग्य -वीर-वेश से युक्त, आभिषेक्य हस्तिरत्न को महावत ने सुसज्जित कर तैयार किया। वैसा कर—उसे तैयार कर घोड़े, हाथी, रथ एवं श्रेष्ठ योद्धाओं से परिगठित चतुरंगिणी सेना को तैयार किया। वैसा कर फिर वह महावत जहाँ सेनानायक था, वहाँ आया। आकर मुझे सूचित करो 'आज्ञा का अनुपालन हो गया है' निवेदित किया।

The said keeper of the elephants who had his training under expert decorators used his knowledge as well as his own imagination and soon made ready the elephant for the king's ride. He decorated the elephant in a beautiful manner. Then he

added to the body of the said elephant exceptionally powerful talisman, some being hung round his neck, some added to other decorations, and some tightly tied round the animal's chest. Then he placed round the animal's neck many garlands and decorated the body with various other ornaments. (All this imparted extraordinary strength to the animal.) The ears of the elephant were decorated with suitable rings. The long pendants of these ornaments dangling to and fro and the drones attracted by the animal's intoxicating saliva created a dark cover before his eyes. The back was decorated with a cushion which was hanging on both sides. Then the animal was laden with arms and armours needed in a battle. The umbrella, flag and bell were duly fixed. Five crest decorations placed on the head added to the elephant's grace. On both sides, duly balanced hang two bells so that the elephant looked like a dark cloud with lightning. So huge and big was his body that it looked like a moving mountain. Thus was prepared the royal elephant, faster than the mind as well as air, infatuated and humming. Having completed the preparation of the royal elephant, the said keeper prepared the four-fold army consisting of infantry, cavalry, elephants and chariots, with the pick from each. Having done so, he came back to the Chief Army Officer and reported the due compliance of his order.

:

तएणं से वलवाउए जाणसालिअं सद्दावेइ। सद्दाविता एवं वयासी—खिप्पामेव भो देवाणुप्पिआ ! सुभद्दापमुहाणं देवीणं बाहिरियाए उवट्ठाणसालाए पाडिएक्कपाडिएक्काइं जत्ताभिमुहाइं जुत्ताइं जाणाइं उवट्ठवेह। उवट्ठविता एअमाणत्तिअं पच्चप्पिणाहि।

तब सेनानायक ने यान-शालिक—रथ आदि यान एवं वाहनों के अधिकारी को बुलाया। बुलाकर उससे इस प्रकार कहा—"हे देवानुप्रिय !

शीघ्र ही, सुभद्रा आदि प्रमुख देवियों—रानियों के लिये उनमें प्रत्येक के अलग-अलग यात्राभिमुख—गमन करने को उद्यत, जुते हुए यानों—गाड़ी, रथ आदि को बाहरी सभा भवन में उपस्थित करो, जुतवा कर—तैयार कर हाजिर करो। हाजिर कर, फिर मुझे आज्ञा पालन हो जाने की सूचना दो।"

Then the Army Officer sent for the keeper of the royal vehicles and said unto him as follows—"Oh beloved of the gods! Please present at the exterior court suitable vehicle one for each lady of the king's harem, Subhadra and others, yoked with animals ready to start. Having done so, please report to me."

तए णं से जाणसालिए वलवाउअस्स एअमट्ठं आणाए विणएणं वयणं पडिसुणेइ। पडिसुणित्ता जेणेव जाणसाला तेणेव उवागच्छइ।

तदनन्तर यान-शालिक ने सेनानायक का आदेश—वचन विनयपूर्वक सुना। सुनकर जहाँ यानशाला थी, वहाँ आया।

The keeper of the royal vehicles heard the order of the Chief Army Officer with due regard, and having done so, he went to the enclosure where vehicles were parked.

तेणेव उवागच्छित्ता जाणाइं पच्चुवेक्खेइ। पच्चुवेक्खित्ता जाणाइं संपमज्जेइ। संपमज्जेत्ता जाणाइं संवट्टेइ। जाणाइं संवट्टेत्ता जाणाइं णीणेइ। जाणाइं णीणेत्ता जाणाइं दूसे पवीणेइ। पवीणेत्ता जाणाइं समलंकरेइ। समलंकरेत्ता जाणाइं वरभंडक-मंडियाइं करेति।

वहाँ—यानशाला में आकर यानों का निरीक्षण किया। निरीक्षण कर यानों के ऊपर का धूल पोंछी अर्थात् यानों की अच्छी तरह से सफाई की। प्रमार्जन—सफाई कर यानों को वहाँ से हटाया। उन्हें वहाँ से हटाकर बाहर निकाला। (यानों को) बाहर निकाल कर उनके दूष्य—आच्छादक वस्त्र—उन पर लगी हुई खोलियों को अलग किए। खोलियों को अलग कर यानों को सजाया। (यानों को) सुसज्जित कर उन्हें श्रेष्ठ आभूषणों से अलंकृत किया।

Having arrived there, he examined all the vehicles, wiped them clean and took them out. They were suitably placed together in one spot and their covers were removed. Then the vehicles were duly fitted with parts and accessories and gracefully decorated.

करेत्ता जेणेव वाहणसाला तेणेव उवागच्छइ। तेणेव उवागच्छित्ता वाहणाइं पच्चुवेक्खेइ। पच्चुवेक्खित्ता वाहणाइं संपमज्जेइ। संपमज्जेत्ता वाहणाइं णीणेइ। णीणेत्ता वाहणाइं अप्फालेइ। अप्फालेत्ता दूसे पवीणेइ। पवीणेत्तां वाहणाइं समलंकरेइ। समलंकरेत्ता वाहणाइं वरभंडकमंडियाइं करेइ। करेत्ता वाहणाइं जाणाइं जोएइ। जोएत्ता पओदलट्ठिं पओअधरे अ समं आडहइ। आडहित्ता वट्टमग्गं गाहेइ। गाहेत्ता जेणेव बलवाउए तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता बलवाउअस्स एअमाणत्तिअं पच्चप्पिणइ।

सुसज्जित कर, जहाँ वाहनशाला थी, वह वहाँ आया। आकर वाहन शाला में प्रवेश किया। प्रविष्ट होकर वाहनों (बैल, अश्व आदि) का संप्रमार्जन—अच्छी तरह सफाई की। उन पर लगी हुई धूल आदि को दूर कर उन्हें वाहनशाला से बाहर निकाला। बाहर निकाल कर उनकी पीठ थपथपाई। वैसा कर मच्छर आदि से रक्षा के लिये उन पर लगे आच्छादक वस्त्र—धूल आदि हटाये। आच्छादक वस्त्रों को

हटाकर वाहनों को अलंकृत—सुसज्जित किया। सुसज्जित कर उन्हें उत्तम आभूषणों से विभूषित किया। विभूषित कर उन्हें यानों में गाड़ियों, रथों आदि में जोता। जोतकर प्रतोत्रयष्टिकाएँ—गाड़ी, रथ आदि को हाँकने की लकड़ियाँ अथवा चाबुक, और प्रतोत्रधर—गाड़ीवानों को साथ में नियुक्त किया। वैसा कर, जुते हुए यानों को राजमार्ग पकड़वाया अर्थात् गाड़ीवान् उसके आदेश के अनुसार यानों को राजमार्ग पर लाये। वैसा कार्य करवा कर वह, जहाँ सेनानायक था, वहाँ आया। आकर सेनानायक को आज्ञा की अनुपालना कि जा चुकने की सूचना दी।

Then he went to the shed where stood the animals and examined them carefully. He rubbed the body of the animals and drew them out. Then he patted them with his palms. After that, they were decorated with cushions and ornaments, ordinary and extraordinary. Having done so, he yoked them to the vehicles. Each vehicle was entrusted to a driver who was equipped with a whip to control the animal. The vehicles were placed on the high-road. Thereafter, he reported the compliance of the order to the Chief Army Officer.

तए णं से वलवाउए णयरगुत्तिए आमंतेइ। आमंतेत्ता एवं वयासी—खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! चंपं णयरिं सब्भिंतर-वाहिरियं आसित्त जाव...कारवेत्ता एअमाणत्तिअं पच्चप्पिणाहि।

तदनन्तर सेनानायक ने नगरगुप्तिक—नगर रक्षक या कोतवाल को बुलाया। बुलाकर इस प्रकार कहा—'हे देवानुप्रिय! शीघ्र ही चम्पा नगरी के भीतर और वाहर पानी का छिड़काव कराओ—स्वच्छ कराओ... यावत् यह सब करवाकर आज्ञा-पालन किये जा चुकने की सूचना दो।"

Then the Chief Army Officer sent for the keeper of the municipal services and said unto him as follows—"Oh

beloved of the gods! Please arrange to clean and sprinkle with pure water both inside and outside the city of Campā, till report to me the compliance of my order."

तएणं से णयरगुत्तीए बलवाउअस्स एअमट्ठं आणाए विणएणं (वयणं) पडिसुणेइ। पडिसुणित्ता चंपं णयरिं सब्भिंतर-बाहिरियं आसित्त जाव...कारवेत्ता जेणेव बलवाउए तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता एअमाणत्तिअं पच्चप्पिणइ।

तदनन्तर नगरपाल—कोतवाल ने सेनानायक का आदेश-वचन—आज्ञा-वचन विनयपूर्वक सुना। सुनकर चम्पा नगरी के भीतर और बाहर से पानी का छिड़काव, सफाई आदि...यावत् करवा कर, वह जहां सेनानायक था, वहाँ आया। आकर आज्ञा का पालन किये जा चुकने की सूचना दी।

The keeper of the municipal services duly received the order and carried it out. He had the city (both inside and outside) duly cleaned and sprinkled with pure water and having done so, he reported it to the Chief Army Officer.

तए णं से बलवाउए कोणिअस्स रण्णो भंभसारपुत्तस्स आभिसेक्कं हत्थिरयणं पडिकप्पिअं पासइ। हयगय जाव... सण्णाहिअं पासइ। सुभद्दापमुहाणं देवीणं पडिजाणाइं उवट्ठविआइं पासइ। चंपं णयरिं सब्भिंतर जाव...गंधवट्टिभूअं कयं पासइ।

इसके पश्चात् सेनानायक ने भंभसार-पुत्र राजा कूणिक के आभिषेक्य हस्तिरत्न-प्रधान हाथी को सजा हुआ देखा। घोड़े हाथी...यावत् रथ उत्तम योद्धाओं से परिगठित चतुरंगिणी सेना को सजी हुई देखी। सुभद्रा आदि प्रमुख देवियों—रानियों के लिये उपस्थापित—जुते हुए—तैयार

कर लाये हुए यान देखे। चम्पा नगरी की वाहर से, भीतर से सफाई की जा चुकी है, वह नगरी सुगन्ध से महक रही है, यह देखा।

Then the Chief Army Officer inspected the elephant meant for the use of king Kūṇika, son of Bhambhasāra; he inspected the fourfold army, the vehicles for the use of the ladies of the harem, and also the city of Campā duly cleaned and sprinkled with fragrant water both inside and outside.

पासित्ता हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिए पीअमणे जाव...हिअए जेणेव कूणिए राया भंभसारपुत्ते तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता करयल जाव...एवं वयासी—कप्पिए णं देवाणुप्पियाणं आभिसिक्के हत्थिरयणे हयगयपवरजोहकलिआ य चाउरंगिणी सेणा सण्णाहिया सुभद्दापमुहाणं च देवीणं वाहिरियाए अ उवट्ठाण-सालाए पाडिएक्कपाडिएक्काइ जत्ताभिमुहाइं जुत्ताइं जाणाइं उवट्ठावियाइं चंपा णयरी सब्भिंतर-वाहिरिया आसित्त जाव... गंधवट्टिभूआ कया। तं निज्जंतु णं देवाणुप्पिया! समणं भगवं महावीरं अभिवंदआ ॥३०॥

यह सब देखकर वह मन में हर्षित, संतुष्ट, आनन्दित तथा प्रसन्न हुआ...यावत् हृदय खिल उठा। जहां भंभसार का पुत्र कूणिक राजा था वह वहाँ आया। आकर अंजलि वाँधे—हाथ जोड़े...यावत् इस प्रकार निवेदन किया—"हे देवानुप्रिय! (सौम्यचेता राजन्!) आभिषेक्य हस्तिरत्न—प्रधान हाथी तैयार है। घोड़े, हाथी, रथ, उत्तम योद्धाओं से कलित—सुशोभित या परिगठित चतुरंगिणी सेना सुसज्जित है। सुभद्रा आदि प्रमुख देवियों—रानियों के लिये, प्रत्येक के लिये अलग-अलग जुते हुए यात्राभिमुख—गमन करने को उद्यत, वहिर्वर्ती सभा भवन के समीप उपस्थापित—तैयार हैं। चम्पा नगरी को भीतर से, वाहर से सफाई करवा दी गई है,...यावत् वह (चम्पानगरी) सुगन्ध से महक रही

है। तो हे देवानुप्रिय! (सौम्यचेता राजन्!) अब आप श्रमण भगवान् महावीर की अभिवन्दना हेतु प्रस्थान करें" ॥३०॥

Having completed his inspection, he was delighted and pleased. He was immensely happy, till his heart expanded in glee. He came back to king Kūṇika, the son of Bhambhasāra, and with folded palms, till submitted unto him as follows—"Oh beloved of the gods! The best elephant is ready for Your Majesty's ride. The fourfold army stands ready to follow thee. The vehicles for the use of the ladies stand ready at the exterior court. The city of Campā has been duly cleaned and sprinkled with pure water, till filled with the smoke of delightful incences. Now, may the journey of Your Majesty commence to pay homage and obeisance to Bhagavān Mahāvīra." 30

कूणिक का स्नान-मर्दनादि

Kūṇika's bath, exercises etc.

तए णं से कूणिए राया भंभसारपुत्ते बलवाउअस्स अंतिए एअमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव…हिअए जेणेव अट्टणसाला तेणेव उवागच्छइ उवागच्छइत्ता अट्टसालं अणुपविसइ। अणुपविसित्ता अणेगवायामजोग्गवग्गणवामद्दणमल्लजुद्धकरणेहिं संते परिस्संते।

तदनन्तर भंभसार के पुत्र राजा कूणिक सेनानायक से यह बात सुनकर, अवधारण कर प्रसन्न (हर्षित) एवं परितुष्ट हुआ। यावत्… हृदय खिल उठा। जहाँ व्यायामशाला थी, वहाँ आया, आकर व्यायाम शाला में प्रवेश किया। प्रवेश कर अनेक प्रकार से व्यायाम किया। अंगों को खींचना, उछलना-कूदना, परस्पर के अंगों को मोड़ना, कुश्ती

लड़ना, व्यायाम के अनेक उपकरण—मुद्गर आदि घुमाना इत्यादि बहुविध क्रियाओं द्वारा अपने को श्रान्त—शिथिल किया, परिश्रान्त—विशेष रूप से शिथिल किया—थकाया।

Having been thus informed by the Commander of the army and having heard his words, king Kūṇika, the son of Bhambhasāra, became highly delighted and pleased, till his heart expanded in glee. He went to his gymnasium and entered into it. Having entered there, he performed various types of physical exercises, skipping, jumping, wrestling, rubbing each other's body, sundry physical movements, till he was physically tired.

सयपागसहस्सपागेहिं सुगंधतेल्लमाइएहिं दप्पणिज्जेहिं मयणिज्जेहिं विहणिज्जेहिं सव्विदियगायपल्हायणिज्जेहिं अब्भिगेहिं अब्भिगिए समाणे तेल्लचम्मंसि पडिपुण्णपाणिपायसुकुमालकोमलतलेहिं पुरिसेहिं छेएहिं दक्खेहिं पत्तट्ठेहिं कुसलेहिं मेहावीहिं णिउणसिप्पोवगएहिं अब्भिंगणपरिमद्दणुव्वलणकरणगुणणिम्माएहिं अट्ठिसुहाए मंससुहाए तयासुहाए रोमसुहाए चउव्विहाए संवाहणाए संवाहिए समाणे अवगयखेअपरिस्समे अट्टणसालाउ पडिणिक्खमइ पडिणिक्खमित्ता जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ। तेणेव उवागच्छित्ता मज्जणघरं अणुपविसइ।

(फिर) प्रणिनीय रस, रक्त, आदि धातुओं में समता-निष्पादक, दर्पणीय—बलवर्धक, मदनीय—कामोत्तेजक, बृंहणीय—मांसवर्धक और सभी इन्द्रियों एवं सम्पूर्ण शरीर के लिये आनन्दकर या लाभप्रद शतपाक, सहस्रपाक संज्ञक सुगन्धित तैलों, अभ्यंगों—मालिस के साधनों के द्वारा शरीर का मर्दन करवाया—मसलवाया। (फिर) तैलचर्म—आसन विशेष-पर, उस प्रकार के आसन पर, जिस पर तैल मालिस किये हुए पुरुष को बिठा कर संवाहन किया जाता है, अर्थात् देहचंपी की जाती है, स्थित

होकर ऐसे व्यक्तियों द्वारा जिनके हाथों एवं पैरों के तलुए अत्यधिक सुकुमार एवं कोमल थे, जो छेक—अवसरज्ञ, कलाविद्—बहत्तर कलाओं के ज्ञाता, दक्ष—अविलम्ब कार्य संपादन में सक्षम, प्राप्तार्थ—उस विषय के आचार्य से उस कला में शिक्षाप्राप्त या कुशल, मेधावी—उर्वर प्रतिभा का धनी या अपूर्व विज्ञान को ग्रहण करने की शक्तिवाले, संवाहन कला में दक्षताप्राप्त अर्थात् तत्सम्बद्ध क्रिया-प्रक्रिया के मर्मज्ञ, अभ्यंगन—तैल आदि उबटन आदि के मर्दन, परिमर्दन—तैल आदि को अंगों के भीतर तक पहुँचाने के लिये किये जाने वाले मर्दन विशेष, उद्वलन—उलटे रूप में, नीचे से ऊपर, अथवा उलटे राओं से किया जाने वाला मर्दन, इस विशेष-मर्दन से जो गुण, लाभ होते हैं, उनको निष्पादित करने में सक्षम थे। हड्डियों के लिये सुखप्रद, मांस हेतु सुखप्रद, चमड़ी के लिये सुखप्रद, एवं रोओं के लिये सुखप्रद, यों चार प्रकार से मालिश करवाई, देहचंपी करवाई, और शरीर को दबवाया। कूणिक राजा इस प्रकार थकावट, व्यायाम जनित शरीर की अस्वस्थता विशेष दूर हो जाने पर व्यायामशाला से बाहर निकला। व्यायामशाला से बाहर निकल कर, जहाँ स्नानगृह था, वहाँ आया, वैसा कर—आकर स्नानघर में प्रवेश किया।

Then he applied to his body oils named *śatapāka* and *sahasrapāka* and creams which restored balance among the physical elements, imparted physical strength, excited the senses, improved the muscles and gave joy to all the sense-organs. Then he sat on a mat and had his body massaged by experts which gave comfort to the bones, to the muscles, to the skin and to the pore-hairs. These massagists were trained in their art, were quick in their application, had received guidance from competent persons, were dexterous and talented. They know how to apply oil to the body, how to rub it in and how to rub it in reverse order. Thus relieved of his physical exhaustion and weariness, king Kūṇika came out of the gymnasium, till he arrived at his bathroom and entered into it.

अणुपविसित्ता समुत्तजालाउलाभिरामे विचित्तमणिरयण

कुट्टिमतले रमणिज्जे ण्हाणमंडवंसि णाणामणिरयणभत्तिचित्तंसि ण्हाणपीढंसि सुहणिसण्णे सुद्धोदएहिं गंधोदएहिं पुप्फोदएहिं सुहोदएहिं पुणो पुणो कल्लाणगपवरमज्जणविहीए मज्जिए।

स्नानगृह में प्रविष्ट होकर वह, वह स्नानघर, मोतियों से बनी हुई जालियों द्वारा सुन्दर प्रतीत होता था या सब ओर जालियाँ होने से वह (स्नानघर) बड़ा ही रमणीय था। उसका आंगण अनेक प्रकार की मणियों और रत्नों से खचित था। उसमें बड़ा ही मनोरम स्नानमंडप था। उसकी भीतों पर तरह-तरह का मणियों एवं रत्नों को चित्रात्मक ढंग या रूप में जड़ा गया था। ऐसे स्नानगृह—स्नानमंडप में प्रविष्ट होकर राजा वहाँ स्नान के लिये अवस्थापित (रखी गई) स्नानपीठ—स्नान हेतु बैठने की चौकी पर सुखपूर्वक बैठा। (फिर) शुद्धोदक—शुद्ध, चन्दन आदि सुगन्धित वस्तुओं के रस से बनाया गया ऐसा जल, फूलों के रस से मिश्रित शुभ अथवा सुखप्रद—न अधिक उष्ण, न अधिक शीतल जल से आनन्दप्रद, अति श्रेष्ठ स्नान विधि द्वारा बार-बार अच्छी तरह से स्नान किया।

The bathroom was beautiful with fine lattice-work whose floor was studded with sundry precious stones and whose walls were also similarly decorated and there he sat comfortably on a stool meant for use at the bath. Then he took his bath, pleasant and auspicious, with water brought from holy places or with water pleasant for touch, with water which was scented, with water containing the essence of flowers and with pure water.

तत्थ कोउअसएहिं बहुविहेहिं कल्लाणगपवरमज्जणावसाणे पम्हल-सुकुमालगंधकासाइयलूहिअंगे सरससुरहिगोसोसचंदणाणुलित्तगत्ते। अहय सुमहग्घदूसरयणसुसंवुए सुइमालावण्णविलेवणे आविद्धमणिसुवण्णे कप्पियहारद्धहारतिसरयपालंबपलंबमाणकडिसुत्तसुकयसोभ। पिणद्ध-

गेविज्जअंगुलिज्जगललियंगयललियकयाभरणे वरकडग तुडिय-थंभिअभुए ।

स्नान करने के पश्चात् राजा ने दृष्टिदोष—नजर आदि के निवारण के लिये, रक्षाबन्धन आदि के रूप में सैंकड़ों कौतुक विविधों के द्वारा, विधानों के द्वारा उत्तम कल्याणक मज्जन को संपादित किया। उसके पश्चात् रोएँदार, सुकोमल सुगन्धित और कापायित—हरीतकी—हरड़े, विभीतक, आमलक आदि कसैली वनोषधियों से रञ्जित—रंगे हुए, या काषाय—लाल अथवा गेरुएँ रंग के वस्त्र से शरीर को पोंछा। तत्पश्चात् सरस—रसमय, आर्द्र, सुगन्धित गोरोचन, एवं चन्दन का शरीर पर लेप किया। अहत—चूहों आदि के द्वारा नहीं कुतरे हुए अर्थात् अदूषित, निर्मल, बहुमूल्य दूष्यरत्न—प्रधान वस्त्र या वस्त्रविशेष को भलीभाँति रूप से पहना, पवित्र पुष्पमाला धारण की। केसर आदि का शोभनीय विलेपन किया। मणियों से जड़े हुए सुवर्ण के आभूषण पहने। गठित हार—अठारह लड़ों के हार, अर्धहार—नवलड़ी हार, तथा त्रिसरक—तीन लड़ों के हार और लम्बी-लम्बी, लटकती हुई पुष्पमाला, कटिसूत्र—कंदोरे अथवा करधनी से अपने को अलंकृत—सुशोभित किया। गले के आभूषण धारण किये। अंगुलियों में अंगूठियाँ पहनीं। राजा कूणिक ने इस प्रकार अपने सुन्दर अंगों को सुन्दर आभरणों से सुशोभित किया अथवा 'ललितांग' नामक देव के सदृश राजा कूणिक के केश एवं आभूषण ललित-सुन्दर थे। उत्तम कंकणों और तुड़ित-भुजबन्धों द्वारा भुजाएँ स्तंभित हो गई थी।

Having completed his bath in sundry ways and cleaned his body by wholesome rubbing, he dried his body with red cloth (towel), turkish, soft and scented and then applied *gorocana* and sandal paste on his body. Then he nicely dressed his body with the best of robes which was spotlessly clean. Then he took a garland made from flowers, applied pollen *(ku nkuma)* and put on gold ornaments. Then he placed round his neck sundry garlands, some with three, some with more strings, long, with a pendant of flowers and decorated his

waist with an ornamented thread. Then he decorated his neck with a necklace and placed rings on his fingers. In this manner, his beautiful body was decorated with beautiful clothes and ornaments or his hairs and decorations were as graceful as those of a god named Lalitanga.

अहियरूवसस्सिरीए मुद्दिआपिंगलंगुलिए कुंडलउज्जोविआणणे मउडदित्तसिरए हारोत्थयसुकयरइयवच्छे । पालंबपलंबमाणपडसुकय उत्तरिज्जे णाणा-मणि-कणग-रयण-विमल-महरिह-णिउणोविअमिसि-मिसंत-विरइय-सुसि-लिट्ठ-विसिट्ठ-लट्ठ-आविद्ध-वीरवलए ।

इस प्रकार राजा की शोभा और भी अधिक बढ़ गई। सुवर्ण की अंगुठियों के कारण राजा की अंगुलियाँ पीली लग रही थीं। कुण्डलों की प्रभा से मुख चमक रहा था। मुकुट की कान्ति से मस्तक देदीप्यमान था। हारों के आच्छादन से उसका वक्षस्थल बड़ा ही मनोरम प्रतीत हो रहा था। राजा (कूणिक) ने एक लम्बे लटकते हुए अथवा झुम्बमान वस्त्र को उत्तरीय (दुपट्टे) के रूप में धारण किया। सुयोग्य शिल्पियों के द्वारा मणि, स्वर्ण, रत्न, इन सब के योग से सुरचित विमल—उज्ज्वल, महार्ह—महान् व्यक्तियों द्वारा धारण करने योग्य, सुश्लिष्ट—सुन्दर रूप से जोड़ युक्त, विशिष्ट—उत्कृष्ट, प्रशस्त—प्रशंसनीय आकृति से युक्त, वीरवलय—वीरत्वसूचक कंकण धारण किया।

In this way, the king added much to his physical glory. The glitter of the golden rings and ear-rings brightened his fingers and face. The brilliance of the crown made his forehead shine. His chest was beautified with a wilderness of garlands. Then he placed nicely on his shoulder a long shoulder-cloth hanging gracefully on both the sides. Then he placed round his wrists bracelets/bangles made of gold and studded with gems and precious stones made by expert jewellers, with joints strongly wrought, beautiful, shining and indicating the powerful (vigorous) wrists.

किं बहुणा ? कप्परुक्खए चेव अलंकियविभूसिए णरवई सकोरंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं चउचामरवालवीजियंगे मंगलजयसद्दकयालोए मज्जणघराओ पडिणिक्खमइ ।

अधिक क्या कहें ? इस प्रकार अलंकारों से युक्त, वेषभूषा से सुसज्जित, राजा कूणिक ऐसा लगता था, मानों कल्पवृक्ष हो। अपने ऊपर लगाये गये कोरंट पुष्पों की मालाओं से युक्त छत्र, तथा दोनों ओर डुलाये जाते चार चामर—चंवर, देखते ही जन-जन के द्वारा किये गये मंगलमय जय शब्द के साथ कूणिक राजा स्नान-गृह से बाहर निकला।

Needless to write more, elaborate more, with all his robes and decorations, looking like a *kalpa*-tree, when the monarch came out of the bath, there was a gracious umbrella decorated with *koraṇṭa* flowers spread over his head, with four *cāmaras* being fanned from his sides. When the monarch came within the visibility of men, they shouted victory unto him.

मज्जणघराउ पडिणिक्खमित्ता अणेग-गणनायग-दंडनायग-राईसर-तलवर-मांडविय-कोडुंबिय-इब्भ-सेट्ठि-सेणावइ-सत्थवाह-दूअ-संधिवाल-सद्धि-संपरिवुडे धवल-महामेह-णिग्गए इव गहगण-दिप्पंत-रिक्ख-तारागणाण मज्झे ससिव्व पियदंसणे णरवई जेणेव बाहिरिआ उवट्ठाणसाला जेणेव आभिसेक्के हत्थिरयणे तेणेव उवागच्छइ ।

स्नानगृह से बाहर निकल कर अनेक गणनायक—जनसमुदाय के प्रतिनिधि, दण्डनायक—आरक्षि अधिकारी, राजा—माण्डलिक नरपति, ईश्वर—प्रभावशाली पुरुष अथवा ऐश्वर्यशाली व्यक्ति, तलवर—राज सम्मानित ख्यातिप्राप्त नागरिक, मांडविक—जागीरदार, कौटुम्बिक—बड़े-बड़े परिवारों के प्रमुख व्यक्ति, इभ्य—वैभवशाली, श्रेष्ठी—सेठ—सम्पत्ति एवं सुव्यवहार से प्रतिष्ठाप्राप्त, सेनापति, सार्थवाह—छोटे-छोटे व्यापारियों

को साथ लेकर देशान्तर में व्यापार करने वाले, दूत—संदेशवाहक, सन्धिपाल—राज्य के सीमान्त प्रदेशों के अधिकारी—इन सभी से संपरिवृत्त—घिरा हुआ वह राजा कूणिक धवल महामेघ—सफेद विशाल बादल से निकले नक्षत्रों—आकाश को देदीप्यमान करते हुये तारों के समूह में मध्यवर्ती चन्द्रमा के समान देखने में बड़ा मनोरम लगता था। वह जहाँ बहिर्वर्ती सभा भवन था, आभिषेक्य—प्रधान हस्तिरत्न था, वहाँ आया।

After the monarch had come out of the bathroom, he was joined by many rulers of *gaṇa*, of *daṇḍa, kings, īśvara, talavara, māṇḍavika, kauṭumbika, ivya, śreṣṭhī,* army commanders, export merchants, ambassadors, envoys, and thus surrounded, he looked like the moon in the company of planets, satellites and stars. Thus (with a long train), he arrived at the general court of audience, and from there to the royal elephant.

उवागच्छित्ता अंजणगिरिकूडसण्णिभं गहवइं णरवई दूरूढे। तए णं तस्स कूणियस्स रण्णो भंभसारपुत्तस्स आभिसिक्कं हत्थिरयणं दुरूढस्स समाणस्स तप्पढमयाए इमे अट्ठट्ठमंगलया पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिआ तं जहा—सोवत्थिय-सिरिवच्छ-णंदिआवत्त-वद्धमाणक-भद्दासण-कलस-मच्छ-दप्पण।

वहाँ आकर अंजनगिरि—काजल के पर्वत के समान विशाल उच्च गजपति पर वह कूणिक नरपति आरूढ़ हुआ। तदनन्तर उस भंभसार पुत्र राजा कूणिक के आभिषेक्य—प्रधान हस्तिरत्न पर सवार हो जाने पर सब से पहले ये आठ मंगल क्रमशः रवाना किये गये। जो इस प्रकार हैं—
(१) स्वस्तिक (२) श्रीवत्स (३) नन्द्यावर्त (४) वर्द्धमानक (५) भद्रासन (६) कलश (७) मत्स्य (८) दर्पण।

Having arrived there, the king took his seat on the back of the elephant which looked like a mountain made of

collyrium. After the king had taken his seat on the back of the elephant, the following eight auspicious things preceded the king's vehicle. They were : svastika, *śrīvatsa, nandyāvarta, vardhamānaka, bhadrāsana* (seat), jar, fish and mirror.

तयाऽणंतरं च णं पुण्ण-कलस-भिंगारं दिव्वा य छत्तपडागा सचामरा दंसणरइअआलोअदरसणिज्जा वाउद्धूय-विजय-वेजयंती ऊस्सिआ गगणतलमणुलिहंती पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिआ। तयाऽणंतरं च णं वेरुलियभिसंतविमलदंडं पलंबकोरंटमल्लदामोवसोभियं चंदमंडलणिभं समूसिअविमलं आयवत्तपवरं सीहासणं वरमणिरयणपादपीढं सपाउआजोयसमाउत्तं वहु किंकरकम्मकरपुरिसपायत्तपरिक्खित्तं पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठियं।

तत्पश्चात् जल से परिपूर्ण कलश, झारियाँ, दिव्य छत्र, पताका, जो कि चामर—चंवर से युक्त, दर्शनरचित—राजा के दृष्टिपथ में अवस्थित—राजा को दिखाई देने वाली, आलोकदर्शनीय—देखने में सुन्दर प्रतीत होने वाली, वायु से फहराती, ऊँची उठाई हुई थी, वह मानों आकाश तल को स्पर्श करती हुई सी विजय-वैजयन्ती—विजय पताका थी, उसे लिये राजपुरुष चले या वह पताका गगनतल को छूती हुई-सी आगे रवाना हुई। उसके बाद वैंडूर्य (वैडूर्य)—नीलम की प्रभा से देदीप्यमान विमल-दण्ड से युक्त, कोरंट पुष्पों की लम्बी लटकती हुई मालाओं से सुशोभित, चन्द्रमण्डल के समान आभामय, ऊँचा तना हुआ निर्मल आतपत्र—धूप से बचाने वाला छत्र, अति उत्तम सिंहासन, श्रेष्ठ मणिरत्नों से विभूषित अर्थात् जिसमें मणियाँ और रत्न जड़े हुए थे जिस पर राजा की पादुकाओं की जोड़ी रखी हुई थीं। वह पादपीठ—राजा के पैर रखने की चौकी—पीढा और जो अनेक किङ्करों—प्रत्येक कार्य पृच्छापूर्वक करने वाले—सेवक या किसी विशेष-कार्य विभाग में नियुक्त वैतनिक सेवक, पदातियों—पैदल चलने वाले व्यक्तियों से घिरे हुए थे, क्रमशः आगे-आगे रवाना किये गये।

These were followed by pitchers and jars full of water, divine umbrella flags with *cāmaras* attached and readily visible to the monarch, smaller flags fixed round a long poll whichhold the main ensign called *Vaijayanti*, which almost touched the sky. All these proceded the royal train. Immediately following these were the brilliant royal umbrella studded with gems called *vaidurya*, fixed on a beautiful staff decorated with long *koraṇṭa flowers*, and almost as high as the lunar zone and widely spread, the throne and the foot-stool used by the monarch with the king's slippers placed on it. These were carried by valets especially deployed, surrounded by infantry men. All these preceded the king's train.

तयाऽणंतरं वहवे लट्ठिग्गाहा कुंतग्गाहा चावग्गाहा चामरग्गाहा पासग्गाहा पोत्थयग्गाहा फलकग्गाहा पीढग्गाहा वीणग्गाहा कुतुवग्गाहा हडप्फग्गाहा पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिआ ।

उसके वाद वहुत से लष्टिग्राह—लट्ठधारी, कुन्तग्राह—भालाधारी; चापग्राह—धनुर्धारी, चमरग्राह—चंवर लिये, पाशग्राह—उद्धत वैलों, अडियल घोड़ों आदि को नियन्त्रित करने हेतु चावुक आदि लिये हुए, अथवा पासे आदि द्यूत-सामग्री लिये हुए, पुस्तकग्राह—ग्रन्थ आदि लिये हुए, या आय-व्यय के ज्ञान के लिये वही-खाते आदि लिये हुए, फलकग्राह—काष्ठपट्ट लिये हुए, पीठग्राह—आसन विशेष लिये हुए, वीणाग्राह—वीणा ग्रहण किये हुए, कूप्यग्राह—पक्व तैल-पात्र लिये हुए या सुगन्वित तैल के शीशे लिये हुए, हडप्पयग्राह—द्रुम नामक सिक्कों के पात्र अथवा ताम्बूल—पान के मसाले-सुपारी आदि के पात्र लिये हुए पुरुष यथाक्रम के अनुसार आगे रवाना हुए ।

Next to these followed many who held clubs, armours, bows, *cāmaras*, dices, books, back-supports, seats, *viṇās*, oil-cans and scented betels.

तयाऽणंतरं बहवे दंडिणो मुंडिणो सिहंडिणो जडिणो पिंछिणो हासकरा डमरकरा चाटुकरा वादकरा कंदप्पकरा दवकरा कोक्कुइआ किड्डकरा वायंता गायंता हसंता णच्चंता भासंता सावेंता रक्खंता आलोमं च करेमाणा जय-जय-सद्दं पउंजमाणा पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिआ।

उसके बाद बहुत से दण्डी—दण्ड धारण करने वाले, मुण्डी—मुण्डे हुए सिर वाले, शिखण्डी—शिखाधारी, जटी—जटाधारी, पिच्छी—मोरपंख आदि धारण किये हुए, हासकर—हास-परिहास करने वाले, डमरकर—मसखरी करने वाले, दवकर—मजाक करने वाले, चाटुकार—खुशामद करने वाले या प्रिय वचन बोलने वाले, वादकर—विवाद करने वाले, कन्दर्पकर—कामुक चेष्टाएं करने वाले, शृंगारी चेष्टाएं करने वाले, कौत्कुचिक—भाण्ड आदि, क्रीड़ाकर—खेल तमाशा करने वाले, इनमें से कतिपय बजाते हुए, तालियां पीटते हुए, वाद्य बजाते हुए, गाते हुए, हंसते हुए, नाचते हुए, बोलते हुए, सुनाते हुए, रक्षा करते हुए, अवलोकन करते हुए, एवं जय शब्द का प्रयोग करते हुए यथाक्रम आगे रवाना हुए।

Many with clubs, many with tonsure of head, many with a bunch of hairs on the crest, many with matted hairs, many holding peacock feathers, many jesters, merrymakers, admirers, jokers, dialoguers, exciters, bards and many others, some playing on instruments, some singing, laughing, dancing, gossiping, haranging (talking), protecting, viewing or simply shouting.

तयाऽणंतरं जच्चाणं तरमल्लिहायणाणं हरिमेलामउल मल्लिय-च्छाणं चंचुच्चियललिअपुलिअचलचवलचंचलगईणं लंघणवग्गण-धावणधोरणतिवईजइणसिक्खिअगईणं ललंतलामगललायवरभूस-

णाणं मुहभंडगउच्चूलगथासगअहिलाण चामरगंडपरिमंडियकडीणं किंकरवरतरुणपरिग्गहियाणं अट्ठसयं वरतुरगाणं पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठियं ।

उसके वाद जात्य—उच्च जाति के ऊँची नसल के घोड़े थे जो वेग, शक्ति, स्फूर्तिमय, और यौवन वय में स्थित थे। उन घोड़े के विशेष अलंकार, अभिलान—मुखवन्ध—मुख संयमन लगाम या मोरे (मोहरे) बड़े ही सुन्दर दिखाई देते थे। उनके कटिभाग चामर दण्ड से सुशोभित थे। ऐसे एक सौ आठ घोड़े यथाक्रम आगे रवाना किये गये। हरिमेला (वनस्पति विशेष) की नव कलिका और मल्लिका-सी उनकी आँखे थीं—सफेद आँखे थी। उनकी चाल वाँकी, विलासयुक्त (ललित) और कोतल (पुलित)—नृत्यमय थी, उनके अस्थि शरीर की चपलता से चंचल थी और लाँघने, कूदने, दौड़ने, गतिकी चतुराई, त्रिपदी (चलते हुए भूमि पर, तीन पैरों का ही टिकना), जय या वग से युक्त और शिक्षित थी। उनके गले में हिलते हुए रम्य श्रेष्ठ भूषण पड़े हुए थे। विमुखमंडक—मुख का भूषण मोरा आदि, अवचूल—लम्वे गुच्छक, स्थासक, पलाण से युक्त और चामरदंड से सजी हुई कटिवाले थे। उन्हें श्रेष्ठ तरूण किंकरों ने थाम रखे थे।

These were followed by many fine steeds, youthful, decorated with an ornament called *sthāsaka*, with bridles to control their movement, and with their waist decorated with *cāmara*, 108 in all. Their eyes looked like the fresh bud of *harimelā* or like *mallikā* flower. Their pace was curved, gentle and dancing. Their bones were restless due to the movements of their body, slowly pacing, jumping, running, galloping, by the skill of their movement, *tripadi* or touching the ground with three legs only, gifted with victory and speed. These horses were all trained. Beautiful and dangling ornaments decorated their necks. They had beautiful ornaments on their face. Similarly they had sundry ornaments on their waist such as *avacūla*, *sthāsaka*, *palāṇa* etc., with a *cāmara*-like tail added. All of them were attended by trained, young and best horsemen.

तयाऽणंतरं च णं ईसीदंताणं ईसीमत्ताणं ईसीतुंगाणं ईसीउच्छंग-विसालधवलदंताणं कंचणकोसीपविट्ठदंताणं कंचणमणिरयणभूसियाणं वरपुरिसारोहगसंपउत्ताणं अट्ठसयं गयाणं पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठियं ।

तत्पश्चात् एक सौ आठ हाथी यथाक्रम आगे रवाना किये गये। वे कुछ-कुछ मदमस्त और उन्नत थे। उन हाथियों के दांत (तरुण होने के कारण) कुछ-कुछ बाहर निकले हुए थे। वे दांत पिछले भाग में कुछ विशाल थे। अति उज्ज्वल थे। उन दांतों पर स्वर्ण के खोल चढ़े हुए थे। वे हाथी स्वर्ण, मणि और रत्नों से निर्मित आभूषणों से सुशोभित थे। उत्तम, सुयोग्य महावत उन हाथियों को चला रहे थे।

The horses were followed by 108 elephants. These elephants, partly infatuated and tall, had their tusks partly visible. These tusks were broad in the rear, white and wrapped in gold. The elephants were decorated with gold and precious stones.

तयाऽणंतरं सच्छत्ताणं सज्झयाणं सघंटाणं सपडागाणं सतोरण-वराणं सणंदिघोसाणं सखिखिणीजालपरिक्खित्ताणं हेमवयचित्ततिणिस-कणकणिजुत्तदारुआणं कालायससुकयणेमिजंतकम्माणं सुसिलिट्ठ-वत्तमंडलधुराणं आइण्णवरतुरगसुसंपउत्ताणं कुसलनरच्छेअसारहि-सुसंपग्गहिआणं बत्तीसतोणपरिमंडिआणं सकंकडवडेंसकाणं सचावसर-पहरणावरणभरिअजुद्धसज्जाणं अट्ठसयं रहाणं पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठियं ।

उसके पश्चात् एक सौ आठ रथ क्रमशः आगे रवाना किये गये। वे रथ, छत्र, ध्वज—गरूड़ आदि चिन्हों से युक्त झण्डे, पताका—चिन्हरहित झण्डे, घण्टे, सुन्दर तोरण, तथा नन्दिघोष—बारह प्रकार की ध्वनि से

युक्त थे। छोटी-छोटी घंटियों से युक्त जाल उन पर लगाए हुए थे, फैलाये हुए थे। उनमें हिमवान् पर्वत पर उत्पन्न हुए शीशम जाति के वृक्ष की स्वर्ण खचित लकड़ी लगी हुई थी। उन रथों के पहियों के घेरों पर कालायस (एक जाति का लोहा) लोहे के पट्टे चढ़ाये हुए थे। उन रथों के पहियों की धुराएँ गोल थी और सुन्दर सुदृढ़ बनी थीं। उनमें छँटे हुए, उत्तम जाति के घोड़े जुते हुए थे। सुयोग्य. सुशिक्षित सारथियों ने उन घोड़ों की वागडोर थाम रखी थी, सम्हाल रखी थी। वे वत्तीस तुणों—तरकशों से परिमण्डित—सुशोभित थे। उनमें कवच, शिरस्त्राण—शिरोरक्षक टोप, धनुष, वाण एवं अन्यान्य शस्त्र रखे हुए थे। इस प्रकार वे युद्ध-सामग्री से सुसज्जित थे।

Following the elephants there were 108 chariots. They were equipped with umbrellas, flags, bells, ensigns, gates and *nandīghoṣa* (meaning notes from twelve types of musical instruments). They were covered with a network of innumerable small bells. In their construction wood of the *Śiśam* variety from the Himalayan region covered with gold plates was used. The axels of the wheels were made of a type of iron called *kālāyasa* and they were strongly fitted and looked very graceful. The wheels were nicely produced and were perfectly round. They were drawn by pedigree horses and their bridles were held by trained charioteers. They had thirtytwo types of quivers, armours protecting their chest, helmets protecting their heads. The chariots were full of weapons used in a war, such as, bows, arrows, axes, etc.

तयाऽणंतरं च णं असि-सत्ति-कोंत-तोमर-सूल-लउड-भिंडिमाल-धणु-पाणिसज्जं पायत्ताणीयं पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिअं।

उसके वाद हाथों में असि—तलवारें, शक्ति—त्रिशूले, कुन्त—भालें, तोमर—लौहदण्ड, शूल, लट्ठियाँ, भिन्दिमाल—हाथ से फेंके जाने वाले

छोटे-छोटे भाले, अथवा गोफिये, जिनमें रखकर पत्थर फेंके जाते हैं और धनुष हाथ में लिये हुए या धारण किये हुए सैनिक क्रमशः आगे बढ़ चलें।

The chariots were followed by men on foot (infantry men) carrying in their hands sundry arms such as, swords, *śaktis*, *kuntas*, javelines, clubs, *bhindimālas* and bows.

तए णं से कूणिए राया हारोत्थयसुकयरइयवच्छे कुंडलउज्जोविआणणे मउडदित्तसिरए णरसीहे णरवई णरिंदे णरवसहे मणुअरायवसभकप्पे अब्भहिअरायतेअलच्छीए दिप्पमाणे हत्थिक्खंधवरगए। सकोरंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं सेअवरचामराहिं उद्धुव्वमाणीहिं उद्धुव्वमाणीहिं वेसमणो चेव णरवई अमरवई-सण्णिभाइ इड्ढिए पहियकित्ती।

उसके बाद वह राजा कूणिक था। उसका वक्षस्थल हारों से परिव्याप्त, सुशोभित एवं प्रीतिकर था। उसका मुखमण्डल कुण्डलों से उद्योतित—दमक रहा था। उसका मस्तक मुकुट से देदीप्यमान था। वह (कूणिक राजा) नरसिंह—मनुष्यों में सिंह के सदृश शौर्यशाली, नरपति—मनुष्यों के परिपालक, स्वामी, नरेन्द्र—मनुष्यों के इन्द्र अर्थात् परम ऐश्वर्यशाली, नर-वृषभ—मनुष्यों में वृषभ के सदृश स्वीकृत कार्य-भार के निर्वाहक, मनुजराजवृषभ—राजाओं में वृषभ के समान परम धीर और सहिष्णु, चक्रवर्ती के तुल्य थे—उत्तर भारत के आधे भाग को स्वायत्त करने में संप्रवृत्त, राजोचित तेजस्विता रूप लक्ष्मी से वह अत्यधिक देदीप्यमान था। वह राजा श्रेष्ठ हाथी पर आरूढ़ हुआ। कोरंट के फूलों की मालाओं से युक्त छत्र उस राजा (कूणिक) पर तना हुआ था। अथवा वह छत्र को धारण किये हुए था। उत्तम, श्वेत चामर—चंवर डुलाये जा रहे थे। वैश्रमण—यक्षराज कुवेर, नरपति—चक्रवर्ती, अमरपति—देवराज इन्द्र के समान उसकी समृद्धि अति प्रशस्त थी, जिससे उसकी कीर्ति विश्रुत थी।

And then followed the king. His chest was decorated with necklaces. The face was beaming with the lustre of his huge ear-rings. His forehead shone with the glitter of his crown. He was like a lion among men, the master of men, the Indra of men, a bull among men, almost an emperor over many a ruler. Seated on the back of the elephant, he was shining with the royal valour. He had over his head an umbrella decorated with the garland of *koraṇṭa* flowers. He was being fanned by the best white *cāmaras*. He had a great fame like that of Vaiśramaṇa, Emperor and Indra.

हयगयरहपवरजोहकलियाए चाउरंगिणी सेणाए समणुगम्म-माणमग्गे जेणेव पुण्णभद्दे चेइए तेणेव पहारित्थ गमणाए। तए णं तस्स कूणिअस्स रण्णो भंभसारपुत्तस्स पुरओ महंआसा आसधरा उभओ पासिं णागा णागधरा पिट्ठओ रहसंगेल्लि।

घोड़ा, हाथी, रथ और उत्तम योद्धा—इस प्रकार चतुरंगिणी सेना उसके पीछे-पीछे चल रही थी। राजा कूणिक ने जहाँ पूर्णभद्र चैत्य था, वहाँ जाने के लिये विचार किया, प्रस्थान किया। तदनन्तर भंभसार के पुत्र राजा कूणिक के आगे बड़े-बड़े घोड़े तथा घुड़सवार थे। दोनों ओर हाथी एवं हाथियों पर सवार—महावत थे। और उसके पीछे रथ समुदाय था।

He started moving with a great zeal towards the Purṇa-bhadra Caitya followed by a fourfold army consisting of infantry, cavalry, elephants and chariots. Immediately preceeding king Kūṇika, son of Bhambhasāra, were horses and cavalrymen, on the sides elephants and elephantsmen and to the rear, the chariots.

तए णं से कूणिए राया भंभसारपुत्ते अब्भुग्गयभिंगारे पग्गहिय-तालियंटे उच्छियसेअच्छत्ते पवीइअवालवीयणीए सव्विड्ढीए सव्व-

जुत्तीए सव्वबलेणं सव्वसमुदएणं सव्वादरेणं सव्वविभूईए सव्वविभूसाए सव्वसंभमेणं सव्वपुप्फगंधमल्लालंकारेणं सव्वतुडिअसद्दसण्णिणाएणं महया इड्ढीए महया जुत्तीए महया बलेणं महया समुदएणं महया वरतुडिअजमगसमगप्पवाइएणं संख-पणव-पडह-भेरि-झल्लरि-खरमुहि-हुडुक्क-मुख-मुरव-मुअंग-दुंदुभि - णिग्घोसणाइयरवेणं चंपाए णयरीए मज्झं मज्झेणं णिगच्छइ ।।३१।।

उसके वाद भंभसार का पुत्र राजा कूणिक चम्पा नगरी के वीचों बीच होता हुआ आगे वढ़ा। उसके आगे-आगे पानी से भरी हुई झारियाँ लिये पुरुष चल रहे थे। सेवकों के द्वारा दोनों ओर पंखे झले जा रहे थे। ऊपर श्वेत-छत्र तना हुआ था। चंवर ढुलाये जा रहे थे। वह सव प्रकार की द्युति अर्थात् आभा अथवा युक्ति—परस्पर उचित पदार्थों के संयोग, सव प्रकार का वल—सेना, सभी प्रकार का समुदाय—परिजन आदि, सर्व आदर—समादरपूर्ण प्रयत्न, सर्वविभूति—सव प्रकार के वैभव, सर्व विभूषा—तरह-तरह की वेषभूषा—वस्त्र, आभूषण आदि के द्वारा सज्जा, सर्व सम्भ्रम—भक्तिजन्य एवं स्नेहपूर्ण उत्सुकता, सर्वपुष्पगन्धमाल्यालंकार—सव प्रकार के रंग-विरंगे फूल, सुगन्धित पदार्थ, पुष्पों की मालाएँ, अलंकार अथवा फूलों की मालाओं से निर्मित आभूषण—आभरण, सर्वतूर्य शब्द सन्निपात—सव प्रकार के वाद्यों की ध्वनि-प्रतिध्वनि, महाऋद्धि—अपने विशिष्ट वैभव, महाद्युति—विशिष्ट आभा, महावल—विशिष्ट सेना, महा समुदय—अपने पारिवारिक प्रमुख जन-समुदाय से सुशोभित था। तथा शंख, पात्र-विशेष पर मढ़े हुए ढोल, पटह—नगाड़े, छोटे ढोल, भेरी, झालर, खरमुही—काहला, हुडुक्क—वाद्य-विशेष, मुरज—ढोलक, मृदंग, एवं दुन्दुभि, एक साथ विशेष रूप से वजाये जा रहे थे, या इन सव की ध्वनि गूंज रही थी ।।३१।।

The procession was moving through the heart of the city of Campā. He had just in his front a man carrying a watering-can. Some people were moving fans, some people firmly held white umbrellas. Thus he was attended by small fans, all

treasures, all useful objects, the whole army, the whole family, all endeavour, all decorations, all humility, all flowers, dresses, garlands and ornaments, all musical instruments, with a mighty display of fortune, mighty display of objects, mighty strength, mighty family and innumerable musical instruments all playing simultaneously. There was a tremendous roar from conches and many instruments made from leather like *dhol, nagāḍā, bherī, jhallarī, kharamukī, huḍukka, mūraja, mṛdaṅga* and *dundubhī.* 31

जनता द्वारा कूणिक का अभिनन्दन व कूणिक द्वारा भगवान् की पर्युपासना

The people greets Kūṇika and Kūṇika worships the Lord

तए णं कूणिअस्स रण्णो चंपानगरिं मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छ-माणस्स बहवे अत्थयत्थिया कामत्थिआ भोगत्थिया किब्बिसिआ करोडिआ लाभत्थिया कारवाहिया संखिआ चक्किया णंगलिया मुहमंगलिआ वद्धमाणा पुस्समाणवा खंडियगणा ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं पिआहिं मणुण्णाहिं मणामाहिं मणोभिरामाहिं हिययगमणिज्जाहिं वग्गूहिं जयविजय-मंगलसएहिं अणवरयं अभिणंदंता य अभिथुणंता य एवं वयासी—जय जय णंदा ! जय जय भद्दा ! भद्दं ते । अजियं जिणाहि जिअं (च) पालेहि । जिअमज्झे वसाहि ।

तब चम्पा नगरी के बीचों बीच से निकलते हुए कूणिक राजा को बहुत से अर्थार्थी या अभ्यर्थी—धनार्जन के अभिलाषी, कामार्थी—सुख अथवा सुन्दर रूप तथा मनोज्ञ शब्द के अभिलाषी, भोगार्थी—मनोज्ञ—सुखप्रद गन्ध, रस, स्पर्श आदि के प्राप्ति के अभिलाषी, लाभार्थी—मात्र भोजन आदि के अभिलाषी, किल्विषिक—भाण्ड आदि, कापालिक—खप्पर आदि को धारण करने वाले भिक्षु, कर बाधित—राज्य के कर आदि से कष्ट—व्यथा पाने वाले, शांखिक—शंख बजाने वाले, चाक्रिक —चक्र नामक शस्त्र के धारी या कुंभकार, लांगलिक—हल चलाने वाले कृषक या भट्ट विशेष, मुख-मांगलिक—खुशामदी

या मुख से मंगल वचन बोलने वाले, वर्धमान—औरों के स्कन्धों पर पुरुषों को आरोपित करने वाले, पुष्यमानव—मागध, भाट, चारण आदि स्तुतिगायक, खंडिकगण—छात्र समुदाय, इष्ट—वाञ्छित, कान्त- सुन्दर, कमनीय, प्रिय—प्रीतिकर, मनोज्ञ—मन को आकृष्ट करने वाला, मनाम—हृदय में आनन्द उत्पन्न करने वाली, मनोभिराम- मन को रमणीय लगने वाली, चित्त को प्रसन्न करने वाली, वाणी से तथा जय-विजय आदि सैंकड़ों मांगलिक शब्दों से राजा का अनवरत—निरन्तर अभिनन्दन करते हुए तथा स्तुति करते हुए इस प्रकार वोले—"जन-जन को आनन्द देने वाले, राजन् ! आप सदा जयशील हों ! जन-जन के कल्याणकारिन् राजन् ! आपकी जय हो, आपकी जय हो ! आपने जिन्हें नहीं जीता है, आप उन पर विजय प्राप्त करें। जिनको जीत लिया है, उनका पालन करें, जीते हुए व्यक्तियों के बीच में निवास करें।

As king Kūṇika passed through the heart of the city of Campā, he was incessantly hailed and welcomed with the shouts of "Victory unto thee" and with words covetous, pleasant, dear, pleasing, attractive and appealing by a vast crowd consisting of men covetous of wealth, covetous of beauty and sweet words, covetous of pleasant smell, taste and touch, covetous of food, by jesters, *kāpālikas, karapiḍitas*, conch-blowers, potters, oil-pressures, farmers, admirers, carriers, bards and students. They spoke as under : "Oh giver of affluence ! Victory be unto thee, victory be unto thee. Oh gentle ! Victory be unto thee, victory be unto thee. May good come to thee. May thee attain victory over those who are not yet defeated. May thou protect those who have yielded. May thou live among those who have been conquered.

इंदो इव देवाणं चमरो इव असुराणं धरणो इव नागाणं चंदो इव ताराणं भरहो इव मणुआणं बहूइं वासाइं बहूइं वाससआइं बहूइं वाससहस्साइं बहूइं वाससयसहस्साइं अणहसमग्गो हट्ठतुट्ठो परमाउं पालयाहि ।

"देवों में इन्द्र के समान, असुरों में चमर इन्द्र के समान, नागों में धरण इन्द्र के समान, ताराओं में चन्द्रमा के समान, मनुष्यों में चक्रवर्ती भरत के समान, आप बहुत—अनेक वर्षों तक, अनेक शत वर्षों तक, अनेक सहस्र वर्षों तक, अनेक शत-सहस्र वर्षों तक, अनेक लक्ष—लाखों वर्षों तक, अनघ-समग्र—सब प्रकार के विघ्न या दोष रहित अथवा, संपत्ति, परिवार आदि से सर्वथा सम्पन्न—प्रसन्न एवं परितुष्ट रहें तथा उत्कृष्ट आयु भोगें—प्राप्त करें।

"Like Indra among the gods (*devas*), like Camara among the Asuras, like Dharaṇendra among the Nāgas, like the moon among the stars, like emperor Bharata among human-beings, may thou live long for many years, for many centuries, for many thousand years, for hundreds of thousands of years, free from trouble, with the members of thy family, enjoying life happy and gay.

इट्ठजणसंपरिवुडो चंपाए णयरिए अण्णेसिं च बहूणं गामागर-णयर-खेड-कब्बड-मंडव-दोणमुह-पट्टण-आसम-निगम-संवाह-संनिवेसाणं आहेवच्चं पोरेवच्चं सामित्तं भट्टित्तं महत्तरगत्तं आणाईसरसेणावच्चं कारेमाणे पालेमाणे महयाऽऽहयणट्टगीयवाइयतंतीतलतालतुडियघणमुअंगपडुप्पवाइअरवेणं विउलाइं भोग-भोगाइं भुंजमाणे विहराहि—त्ति कट्टु जय जय सद्दं पउंजंति।

"आप अपने प्रियजनों से परिवृत्त—सहित चम्पा नगरी के तथा अन्य बहुत से ग्राम, आकर—नमक आदि के उत्पत्ति-स्थान, नगर—जिसमें कर नहीं लगता हो ऐसे शहर, खेट—धूल के परकोटे से युक्त गाँव, कर्वट—अत्यन्त ही सामान्य कस्बे, द्रोणमुख—जलमार्ग तथा स्थलमार्ग से युक्त निवासस्थान, मडंव—आस-पास गाँवों से रहित वस्ती, पत्तन—केवल जलमार्ग वाली या केवल स्थलमार्ग वाली बस्ती अथवा बन्दरगाह, बड़े नगर, आश्रम—तापसों के आवास, निगम—व्यापारिक नगर, संवाह—पर्वत

की तलहटी में बसे हुए गाँव, सन्निवेश—सेना एवं सार्थवाह आदि के ठहरने के स्थान या झोपड़ियों से युक्त, इन सभी का आधिपत्य, पौरावृत्य आगेवानी, भर्तृत्व—प्रभुत्व या पोषकता, स्वामित्व, महत्तरत्व—अधिनायकत्व, आज्ञेश्वरत्व—सेनापत्य—जिसे आज्ञा देने का अधिकार होता है, ऐसा सेनापतित्व—इन सभी का अधिकृत रूप में परिपालन करते हुए निरन्तर नृत्य, गीत, वाद्य, वीणा, करताल, तूर्य—तुरही, तथा घनमृदंग—बादल जैसी गर्जना—आवाज करने वाले मृदंग को कुशल-पुरुषों के द्वारा बजाये जाने से उठने वाली मधुर, सुन्दर ध्वनियों से आनन्दित होते हुए विपुल—अत्यधिक भोग भोगते हुए विचरें, सुखी रहें," यों कहकर उन्होंने जयघोष किया।

"Being surrounded by the near and dear ones, may thou reign over the city of Campā and many other villages, mines, towns whose levy is condoned, bad towns, *kheṭa*, *karbaṭa*, *maḍamba*, towns linked by land and water with other places, ports, hermitages, *nigamas*, towns at the foot of mountains, and over *sanniveśas*, may thou be lord over these, may thou be leader unto these, may thou be supporter of these, may thou be master of these, may thou be superior over these, may thou be commander over these, may thou be their strength and support, enjoying and amidst the delightful sound of dramatics and instruments, performed and played upon by master artists and so on", uttering these words, they shouted, "Victory unto thee."

तए णं से कूणिए राया भंभसारपुत्ते णयणमालासहस्सेहि पेच्छिज्जमाणे पेच्छिज्जमाणे हिअयमालासहस्सेहिं अभिणंदिज्जमाणे अभिणंदिज्जमाणे मणोरहमालासहस्सेहिं विच्छिप्पमाणे विच्छिप्पमाणे वयणमालासहस्सेहिं अभिथुव्वमाणे अभिथुव्वमाणे कंतिसोहग्ग-गुणेहिं पत्थिज्जमाणे पत्थिज्जमाणे वहूणं णरणारिसहस्साणं दाहिण-हत्थेणं अंजलिमालासहस्साइं पडिच्छमाणे पडिच्छमाणे मंजुमंजुणा

घोसेणं पडिवुज्झमाणे पडिपुज्झमाणे भवणपंतिसहस्साइं समइच्छमाणे समइच्छमाणे चंपाए णयरीए मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छइ ।

उसके बाद भंभसार के पुत्र राजा कूणिक का हजारों नर-नारी अपनी नेत्र-मालाओं से बार-बार दर्शन कर रहे थे। हजारों नर-नारी अपनी हृदय-मालाओं से उसका बार-बार अभिनन्दन कर रहे थे। हजारों नर-नारी अपनी शुभ मनोरथ-मालाओं से हम उसकी सन्निधि में रह पाएँ, इस प्रकार उत्सुकतापूर्ण मनोकामनाएँ लिये हुये थे। हजारों नर-नारी वचन मालाओं से उसका बार-बार अभिस्तवन—गुणों का संकीर्तन कर रहे थे। हजारों नर-नारी उसकी कान्ति—दैहिक-दीप्ति, उत्तम-सौभाग्य आदि सद्गुणों के कारण ये स्वामी हमें सदा-सर्वदा प्राप्त रहें—ऐसी बार-बार उत्कण्ठा—अभिलाषा करते थे। बहुत से हजारों नर-नारियों द्वारा अपने हाथों से उपस्थापित अंजलिमाला—प्रणामांजलियों को अपना दाहिना हाथ ऊँचा उठा कर बार-बार स्वीकार करता हुआ अत्यधिक कोमल, मधुर घोष—वाणी से उनकी कुशल वार्ता पूछता हुआ, भवनों की हजारों पंक्तियों को लांघता हुआ राजा कूणिक चम्पा नगरी के बीचों-बीच होता हुआ निकला।

Thus king Kūṇika, son of Bhambhasāra, being observed by thousands of eyes, being greeted by thousands of hearts, being coveted by thousands of desires, being sought by glow and fortune, being praised by thousands of words, and having accepted the obeisance from thousands of folded palms, from thousands and thousands of men and women and enquiring their welfare with sweet words, left behind innumerable rows of houses and crossed through the heart of the city of Campā.

णिगच्छित्ता जेणेव पुण्णभद्दे चेइए तेणेव उवागच्छइ । उवागच्छित्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूरसामंते छत्ताईए तित्थयराइसेसे पासइ । पासित्ता आभिसेक्कं हत्थिरयणं ठवेइ ।

ठवित्ता आभिसेक्काओ हत्थिरयणाओ पच्चोरुहइ। आभिसेक्काओ हत्थिरयणाओ पच्चोरुहित्ता अवहट्टु पंच रायककुहाइं तं जहा—खग्गं छत्तं उप्फेसं वाहणाओ वालवीअणं।

(चम्पा नगरी से) निकल कर, जहाँ पूर्णभद्र चैत्य था, वहाँ आया। आकर श्रमण भगवान् महावीर के न अधिक दूर, न अधिक निकट अर्थात् समुचित स्थान पर रुका। तीर्थंकर के छत्र, आभा-मण्डल आदि अतिशयों को देखा। देखकर अपनी सवारी के आभिषेक्य—प्रमुख हस्तिरत्न को ठहराया। ठहरा कर आभिषेक्य—हस्तिरत्न से नीचे उतरा। आभिषेक्य—प्रमुख उत्तम हाथी से उतर कर पाँच राज चिन्हों को अलग किये। जो इस प्रकार हैं: (१) खड्ग—तलवार, (२) छत्र, (३) मुकुट, (४) उपानह—जूते, (५) चंवर।

Having come out of the city of Campā, he came to the vicinity of the place where stood the temple named Purṇabhadra. Having arrived there, he saw, not from very far nor from too near, the supernaturals like the umbrella, etc., which go with a Tīrthaṅkara. There he stopped the royal elephant and alighted from it. Having come down to the ground, he removed from his person and attendance the five royal decorations which were sword, umbrella, crown, sandals and *cāmara*.

जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ। उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं पंचविहेणं अभिगमेणं अभिगच्छति तं जहा—सच्चित्ताणं दव्वाणं विउसरणयाए अच्चित्ताणं दव्वाणं अविउसरणयाए एगसाडियं उत्तरासंगकरणेणं चक्खुफासे अंजलिपग्गहेणं मणसो एगत्त-भावकरणेणं। समणं भगवं महावीरं त्तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ। त्तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेत्ता वंदति णमंसति। वंदित्ता णमंसित्ता तिविहाए

पज्जुवासणाए पज्जुवासइ। तं जहा--काइयाए वाइयाए माणसियाए। काइयाए ताव संकुइअग्गहत्थपाद सुस्सूसमाणे णमंसमाणे अभिमुहे विणएणं पंजलिउडे पज्जुवासइ। वाइयाए--जं जं भगवं वागरेइ--एवमेअं भंते! तहमेयं भंते! अवितहमेयं भंते! असंदिद्धमेअं भंते! इच्छिअमेअं भंते! पडिच्छिअमेअं भंते! इच्छियपडिच्छियमेअं भंते! से जहेयं तुब्भे वदह--अपडिकूलमाणे पज्जुवासति। माणसियाए महया संवेगं जणइत्ता तिव्वधम्माणुरागरत्तो पज्जुवासइ ॥३२॥

जहाँ श्रमण भगवान् महावीर थे, वहाँ आया। आकर पाँच प्रकार के अभिगम (धर्म-सभा के औपचारिक नियम) के अनुपालनपूर्वक राजा कूणिक श्रमण भगवान् महावीर के सम्मुख गया। वे पाँच अभिगम इस प्रकार हैं: (१) सचित्त—सजीव पदार्थों का व्युत्सर्जन—अलग करना, अर्थात् सचित्त द्रव्यों को छोड़ना। (२) अचित्त—अजीव वस्तुओं का अव्युत्सर्जन—अलग न करना, उन्हें नहीं छोड़ना। (३) एक शाटिक—अखण्ड अनसिले वस्त्र का उत्तरासंग—उत्तरीय वस्त्र की तरह या उत्तर—श्रेष्ठ, आसंग—लगाव, अर्थात् उस वस्त्र को कन्धे पर डाल कर धारण करना। (४) धर्म नायक के दृष्टिगोचर होते ही अंजलिप्रग्रहण—अंजलि बाँधे हाथ जोड़ना। (५) मन का एकत्व भाव करना, मन को एकाग्र करना। फिर श्रमण भगवान् महावीर को आदक्षिणा-प्रदक्षिणा की। तीन बार आदक्षिणा-प्रदक्षिणा कर वन्दना की, नमस्कार किया। वन्दना नमस्कार कर तीन प्रकार की पर्युपासना से पर्युपासना करने लगा। वह पर्युपासना इस प्रकार है—कायिक, वाचिक और मानसिक। कायिक पर्युपासना के रूप में हाथों और पैरों को संकुचित किये हुए, सुनने की इच्छा करते हुए, नमन करते हुए श्रमण भगवान् महावीर की ओर मुँह किये हुए, विनयपूर्वक हाथ जोड़े हुए स्थित रहा। वाचिक पर्युपासना के रूप में जो-जो भगवान् महावीर बोलते थे उसके लिये "यह ऐसा ही है, भन्ते—भगवन्! यही तथ्य है, हे भगवन्! यही सत्य है, स्वामिन्! यही सन्देहरहित है, प्रभो! यही इच्छित है, भन्ते! यही प्रतीच्छित—स्वीकृत है, भन्ते! यही इच्छित-वाञ्छित प्रतीच्छित है, प्रभो! जैसा कि आप यह कह रहे हैं।"—इस

प्रकार अनुकूल वचन बोलता रहा। मानसिक पर्युपासना के रूप में अपने में अत्यधिक संवेग—मुमुक्षु भाव या उत्साह उत्पन्न करता हुआ धर्म के अनुराग में तीव्रता से अनुरक्त होकर पर्युपासना करता रहा ॥३२॥

Then he came to the place where was seated Bhagavān Mahāvīra and then having observed the five rules (*abhigama*) which one is to observe at a place like this, he stood in the presence of Bhagavān Mahāvīra. These rules were discarding live objects, placing in due order non-live objects, covering the body with an untailored wrapper, folding arms in the presence of the spiritual master and having full concentration of the mind. Then he moved thrice round Bhagavān Mahāvīra and paid him homage and obeisance. Having paid his homage and obeisance, he worshipped him in three modes, viz. with his body, with his words and with his mind. With his body, like this—he contracted his hands and feet, while listening, he bowed, and standing before him, he worshipped with folded hands and with due humility. With his words, like this—When Bhagavān Mahāvīra said something, he would say, "*Bhante* ! So it is. *Bhante* ! What you say is the authority. *Bhante* ! What you say is the truth. *Bhante* ! What you say is beyond doubt. *Bhante* ! What you say is beneficial. *Bhante* ! What you say is accepted. *Bhante* ! What you say is desired and accepted." Thus he worshipped without contradicting the Lord. With his mind, like this—he worshipped with a sincere desire for liberation, with a deep devotion. 32

सुभद्रा महारानी का प्रस्थान

Departure of Queen Subhadrā

तए णं ताओ सुभद्दापमुहाओ देवीओ अंतो अंतेउरंसि ण्हायाओ जाव...पायच्छित्ताओ सव्वालंकार विभूसियाओ।

उसके बाद (प्रभु महावीर के आगमन की सूचना मिलने पर) सुभद्रा आदि प्रमुख देवियों—रानियों ने अन्तःपुर में स्नान किया।...यावत् प्रायश्चित्त–दुःस्वप्नादि दोष-निवारण के लिये चन्दन, कुंकुम, दधि, अक्षत आदि से मंगल विधान किया और वे रानियाँ सभी अलंकारों से विभूषित हुई।

Then having known about the arrival of Bhagavān Mahāvīra, the ladies of the harem, Subhadrā and others, took their bath, till performed atonements and dressed and decorated themselves in all manners.

बहूहिं खुज्जाहिं चेलाहिं वामणीहिं वडभीहिं बब्बरीहिं पयाउसीयाहिं जोणिआहिं पण्हविआहिं इसिगिणिआहिं वासिइणिआहिं लासियाहिं लउसियाहिं सिंहलीहिं दमीलीहिं आरबीहिं पुलंदीहिं पक्कणीहिं वहलीहिं मुरुंडीहिं सबरियाहिं पारसीहिं णाणादेसीविदेसपरिमंडिआहिं इंगियचिंतियपत्थियविजाणियाहिं सदेसणेवत्थग्गहियवेसाहिं चेडियाचक्कवालवरिसधरकंचुइज्जमहत्तरगवंदपरिक्खित्ताओ अंतेउराओ णिग्गच्छंति।

फिर बहुत सी देश-विदेश की दासियाँ, जिनमें अनेक कुबड़ी थीं, अनेक किरात देश की निवासिनी थी। अनेक बौनी थीं, अनेक दासियाँ ऐसी भी थीं, जिनकी कमर झुकी हुई थीं। उनमें—अनेक दासियाँ बर्बर देश की, वकुश देश की, अनेक यूनान देश की, अनेक पह्लव देश की, इसिन् देश की, अनेक चारुकिनिक देश की, लासक देश की, लकुश देश की, सिंहल देश की, अनेक द्रविड़ देश की, अनेक अरब देश की, अनेक पुलिन्द देश की, अनेक पक्कण देश की, अनेक बहल देश की, मुरूंड देश की, शबर देश की, पारस देश की,—इस प्रकार यों विभिन्न देशों की थीं, जो अपने-अपने देश की वेश-भूषा से परिमण्डित—सुसज्जित थीं। जो इंगित—मुख आदि के चिन्ह या चेष्टा, चिन्तित—सोची हुई बात एवं अभिलषित भाव को संकेत

अथवा चेष्टा मात्र से समझ लेने में विज्ञ थीं। जो अपने-अपने देश के रीति-रिवाज के अनुसार वेशभूषा आदि को धारण किये हुए थीं। उन चेटियों—दासियों के समूह से घिरी हुई, वर्षधरों—कृत नपुंसकों, कंचुकियों—अन्तःपुर के पहरेदारों एवं अन्तःपुर के प्रामाणिक रक्षकों के अधिकारियों से घिरी हुई अन्तःपुर से बाहर निकलीं।

Then being attended by many ladies, Kubjās, Cetikās, Vāmanis, Vaḍabhis in attendance from different lands, viz., Barbara, Payāusa, Joṇa, Panhava, Isigiṇa, Vāsiṇa, Lāsiya, Lausa, Siṁhala, Damila, Araba, Pulanda, Pakkaṇa, Bahala, Muruṇḍa, Sabara and Pārasa, who always understood their mistress from expressions, thoughts and desires, who had put on their native dresses, and who in turn were surrounded by eunuchs, harem-guards and their superiors, they came out of the palace.

अंतेउराओ णिग्गच्छित्ता जेणेव पाडिएक्कजाणाइं तेणेव उवागच्छंति। उवागच्छित्ता पाडिएक्कपाडिएक्काइं जत्ताभिमुहाइं जुत्ताइं जाणाइं दुरूहंति। दुरूहित्ता णिअगपरिआल सद्धिं संपरिवुडाओ चंपाए णयरीए मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छंति। णिग्गच्छित्ता जेणेव पुण्णभद्दे चेइए तेणेव उवागच्छंति।

अन्तःपुर से निकल कर सुभद्रा आदि रानियाँ जहाँ उनके लिये अलग-अलग रथ खड़े थे, वहाँ आईं। वहाँ आकर अपने लिये पृथक्-पृथक् अवस्थित यात्राभिमुख—गमन करने को उद्यत जुते हुए रथों पर सवार हुईं। सवार होकर अपने परिवार—दासियों आदि से घिरी हुई चम्पा नगरी के बीचों-बीच में से होकर निकलीं। निकल कर जहाँ पूर्णभद्र चैत्य था, वहाँ आईं।

They came to their respective vehicles and took their seats on the vehicles which were ready to start. The whole train

passed through the city of Campā, till they came to the place where stood the Purṇabhadra temple.

उवागच्छित्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूरसामंते छत्तादिए तित्थयरातिसेसे पासंति। पासित्ता पाडिएक्कपाडिएक्काइं जाणाइं ठवंति। ठवित्ता जाणेहिंतो पच्चोरुहंति।

वहाँ आकर श्रमण भगवान महावीर के न अधिक दूर, न अधिक निकट अर्थात् समुचित स्थान पर ठहर गईं। तीर्थंकरत्व सूचक छत्र, आभामण्डल आदि अतिशयों को देखा। देख कर अपने-अपने यानों—रथों को रुकवाया—ठहराया। रुकवा कर वे रथों से नीचे उतरीं।

Wherefrom, the supernaturals surrounding Bhagavān Mahāvīra were visible, they stopped their vehicles and alighted therefrom.

जाणेहिंतो पच्चोरुहित्ता बहूहिं खुज्जाहिं जाव•••परिक्खित्ताओ जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छंति। तेणेव उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं पंचविहेणं अभिगमेणं अभिगच्छंति तं जहा—सच्चित्ताण्णं दव्वाणं विउसरणयाए अच्चित्ताणं दव्वाणं अविउसरणयाए विणओणताए गायलट्ठीए चक्खुप्फासे अंजलिपग्गहेणं मणसो एगत्तकरणेणं। समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेंति वंदंति णमंसंति। वंदित्ता णमंसित्ता कूणियरायं पुरओ कट्टु ठिइयाओ चेव सपरिवाराओ अभिमुहाओ विणएणं पंजलिउडाओ पज्जुवासंति ॥३३॥

वे रथों से नीचे उतर कर अपनी बहुत सी कुब्जा, बौनी आदि दासियों के समूह से घिरी हुई बाहर निकलीं। जहाँ श्रमण भगवान महावीर थे, वे

वहाँ आईं। वहाँ आकर श्रमण प्रभु महावीर के सम्मुख जाने हेतु पाँच प्रकार के अभिगम—नियम ग्रहण किये। जो इस प्रकार हैं: (१) सचित्त—सजीव पदार्थों का व्युत्सर्जन, अलग करना। (२) अचित्त—अजीव पदार्थों का अव्युत्सर्जन—अलग न करना। (३) विनय से देह को नम्र करना। (४) धर्म नायक के चक्षुस्पर्श—दृष्टि पड़ते ही हाथ जोड़ना। (५) मन को एकाग्र करना। इस प्रकार से श्रमण भगवान् महावीर को तीन बार आदक्षिणा-प्रदक्षिणा की। वन्दना की। नमस्कार किया। वैसा कर—वन्दना-नमस्कार कर वे अपने पति राजा कूणिक को आगे कर परिवार सहित भगवान् महावीर के सम्मुख विनयपूर्वक—हाथ जोड़े हुए पर्युपासना—सान्निध्यलाभ लेने लगीं ॥३३॥

They being surrounded by their attendants came in the august presence of Bhagavān Mahāvīra and having fulfilled the conditions, they stood before him. They discarded live objects, they embressed non-live objects, they bent their bodies in humility, they folded their palms as soon as his eyes fell on them, and they engrossed their minds in concentration. Then they moved round Bhagavān Mahāvīra thrice and paid their homage and obeisance. With king Kūṇika at their fore, the whole family (including the ladies in attendance) turned their faces towards Bhagavān Mahāvīra and worshipped him with their hands folded in deep reverence. 33

भगवान महावीर की देशना

Sermon of Bhagavān Mahāvīra

तए णं समणे भगवं महावीरे कूणिअस्स भंभसारपुत्तस्स सुभद्दाप्पमुहाणं देवीणं तीसे अ महतिमहालियाए परिसाए इसी-परिसाए मुणिपरिसाए जइपरिसाए देवपरिसाए अणेगसयाए अणेग-

सयवंदाए अणेगसयवंदपरिवाराए ओहवले अइवले महव्वले अपरिमिअबलवीरियतेयमाहप्पकंतिजुत्ते सारयनवत्थणियमहुरगंभीरकोंचणिग्घोसदुंदुभिस्सरे उरेवित्थडाए कंठेऽवट्टियाए सिरे समाइण्णाए अगरलाए अमम्मणाए सव्वक्खरसण्णिवाइयाए पुण्णरत्ताए सव्वभासाणुगामिणीए सरस्सइए जोयणणीहारिणा सरेणं अद्धमागहाए भासाए भासति अरिहा धम्मं परिकहेइ ।

उसके बाद श्रमण भगवान् महावीर ने भंभसार के पुत्र राजा कूणिक, सुभद्रा आदि प्रमुख देवियों—रानियों एवं अति विशाल परिषद् को धर्म देशना दी। भगवान् महावीर के धर्मोपदेश सुनने को उपस्थित ऋषि—अतिशय ज्ञानी साधु परिषद्, मुनि—वाक्-संयमी या मौनी साधु परिषद्, यति—चारित्र के प्रति प्रयत्नशील श्रमण परिषद्, देव परिषद्, कई सैंकड़ों श्रोताओं के समूह, कई सैंकड़ों परिवारों के समूह उपस्थित थे। ओघवली—सदा एक समान रहने वाले वल के धारी, अतिवली—अत्यधिक वल युक्त, महावली—प्रशस्त वल सम्पन्न, अपरिमित—असीम वल—शारीरिक-शक्ति, वीर्य—आत्मजनित वल, तेज—महत्ता या माहात्म्य और कान्ति से युक्त, शरद्ऋतुकालीन नूतन मेघ मधुर, गम्भीर गर्जन, क्रौंच पक्षी के निर्घोष, एवं नगाड़े की ध्वनि के समान मधुर गम्भीर स्वर युक्त श्रमण भगवान् महावीर ने हृदय में विस्तृत होती हुई कण्ठ में अवस्थित—ठहरती हुई, तथा मस्तक में परिव्याप्त होती हुई, अलग-अलग स्व-स्व स्थानीय उच्चारण युक्त अक्षरों सहित, अस्पष्ट उच्चारण से रहित अथवा हकलाहट से रहित सुव्यक्त अक्षर सन्निपात—वर्ण संयोग—वर्णों की सुव्यवस्थित शृंखला लिये हुए, परिपूर्ण, स्वर कला से संगीतमय अर्थात् स्वर माधरी युक्त, और श्रोताओं की सभी भाषाओं में परिणत होने वाली सरस्वती के द्वारा एक योजन तक पहुँचने वाले स्वर में, अर्द्धमागधी भाषा में धर्म का पूर्ण रूप से कथन किया।

There on Bhagavān Mahāvīra, always the same in physical strength, with a body endowed with power, energy, glow and greatness, illustrious, with a voice like that of a *krauñca* bird or like the sound of the Autumn cloud or the heavenly trumpet delivered his sermon at full length to the great congregation attended

by king Kūṇika, the ladies of his harem, their attendants with their respective families, by *ṛṣis, munis, japis* and denigens of heavens,—sermon which spread through the heart, stayed in the throat, was held in the brain, in words received with different local sounds, free from indistinctness, in expressions clear and good, in a musical (sweet) voice, which could be turned into any language, in Ardhamāgadhī reaching a distance of a *yojana*.

तेसिं सव्वेसिं आरियमणारियाणं अगिलाए धम्ममाइक्खइ। साऽविय णं अद्धमागहा भासा तेसिं सव्वेसिं आरियमणारियाणं अप्पणो सभासाए परिणामेणं परिणमइ तं जहा—

उन सभी (उपस्थित) आर्य-अनार्य जनों को अग्लान भाव से (बिना परिश्रान्त हुए या तीर्थंकर नाम कर्म के उदय से अनायास—बिना थकावट के) धर्म का आख्यान कहा। भगवान् महावीर के द्वारा उद्गीर्ण वह अर्द्ध-मागधी भाषा भी उन सभी आर्यों और अनार्यों की अपनी-अपनी भाषा में परिणत हो जाती थी। भगवान् महावीर ने जो धर्मदेशना दी, वह इस प्रकार है—

Without feeling any exhaustion whatsoever, he delivered his sermon to that great assembly consisting of Aryans and non-Aryans. There was simultaneous translation of Ardhamāgadhī (the language of the sermon) into the languages of the listeners. Quoth he—

अत्थि लोए। अत्थि अलोए। एवं जीवा अजीवा बंधे मोक्खे पुण्णे पावे आसवे संवरे वेयणा णिज्जरा अरिहंता चक्कवट्टी बलदेवा वासुदेवा नरका णेरइया तिरिक्खजोणिआ तिरिक्ख-जोणिणीओ माया पिया रिसओ देवा देवलोआ सिद्धी सिद्धा परिणिव्वाणं परिणिव्वुया।

लोक का अस्तित्व है, अलोक का अस्तित्व है। इसी प्रकार जीव, अजीव, बन्ध, मोक्ष, पुण्य, पाप, आश्रव, संवर, वेदना, अर्हत्—अरिहन्त, चक्रवर्ती, बलदेव, वासुदेव, नरक, नैरयिक, तिर्यञ्चयोनिक, तिर्यञ्चयोनिका, माता, पिता, ऋषि, देव, देवलोक, सिद्धि, सिद्ध, परि-निर्वाण—कर्मावरणों के क्षीण होने से आत्मिक-स्वस्थता अर्थात् परमानन्द, परिनिर्वृत्त—परिनिर्वाण-युक्त व्यक्ति, इन सभी का अस्तित्व है।

There is the *loka* (universe), there is *aloka* (space). Likewise, there are souls and non-souls (matter), bondage and liberation, virtue and vice, influx, check and experience, total exhaustion of *karma*, Arhats, Cakravarties, Baladevas, Vāsudevas, hells and the infernals, animals, male as well as female, parents—mother and father, *ṛṣis*, divine beings, heavens, perfection, perfected beings, liberation and the liberated.

अत्थि पाणाइवाए मुसावाए अदिण्णादाणे मेहुणे परिग्गहे। अत्थि कोहे माणे माया लोभे जाव...मिच्छादंसणसल्ले।

प्राणातिपात—प्राणघात, हिंसा, मृषावाद—असत्य, अदत्तादान—चोरी, मैथुन और परिग्रह है, क्रोध, मान, माया, लोभ यावत् (प्रेम—अव्यक्त माया व लोभ जनित प्रिय या प्रीति रूप भाव, द्वेष—अप्रकट मान व क्रोध जनित अप्रिय अथवा अप्रीति रूप भाव, कलह—लड़ाई-झगड़ा, अभ्याख्यान—असत्य दोषारोपण, पैशुन्य—चुगली या किसी के होते-अनहोते दोषों—दुर्गुणों का प्रगटीकरण, परपरिवाद—निन्दा, रति-मोहनीय कर्म के उदय के परिणाम स्वरूप असंयम में रूचि दिखाना, अरति-मोहनीय कर्म के उदय के परिणाम स्वरूप संयम में अरुचि मानना, मायामृषा—विश्वासघात या छलपूर्वक झूठ बोलना) मिथ्यादर्शन शल्य है।

There are slaughter of life, false speech, acquisition without bestowal, sex behaviour and accumulation of property. There are anger, pride, attachment, greed, till the thorn derived from wrong faith;

अत्थि पाणाइवायवेरमणे मुसावायवेरमणे अदिण्णादाणवेरमणे मेहुणवेरमणे परिग्गहवेरमणे जाव ..मिच्छादंसणसल्लविवेगे ।

प्राणातिपात विरमण—हिंसा से विरत होना, मृपावाद विरमण—असत्य से विरत होना, अदत्तादान विरमण—चोरी से विरत होना, मैथुन विरमण—मैथुन से विरत होना, परिग्रह विरमण—परिग्रह से विरत होना, यावत् (क्रोध से विरत होना, मान से विरत होना, माया से विरत होना, लोभ से विरत होना, प्रेम से विरत होना, द्वेष से विरत होना, कलह से विरत होना, अभ्याख्यान से विरत होना, पैशुन्य से विरत होना, पर परिवाद से विरत होना, अरति-रति से विरत होना)—मिथ्यादर्शनशल्य विवेक—मिथ्या विश्वास रूप काँटे का त्याग करना और मिथ्या विश्वास रूप काँटे का यथार्थ ज्ञान होना ।

There are withdrawal from slaughter, from falsehood, from acquisition without bestowal, from sex behaviour and from accumulation of property, till there is consciousness about the thorn of wrong faith.

सव्वं अत्थिभावं अत्थित्ति वयति । सव्वं णत्थि भावं णत्थित्ति वयति ।

सभी अस्तित्व भाव अपने-अपने द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की अपेक्षा से अस्तित्व (धर्म) को लिये हुए है यह कहा है। और सभी नास्तित्व भाव पर द्रव्य, पर क्षेत्र, पर काल एवं पर भाव की अपेक्षा से नहीं है यह कहा है ।

I ordain, all that exists does exist. I propound, all that does not exist does not exist.

सुचिण्णा कम्मा सुचिण्णफला भवंति। दुचिण्णा कम्मा दुचिण्णफला भवंति। फुसइ पुण्णपावे। पच्चायंति जीवा, सफले कल्लाणपावए।

सुचीर्ण कर्म—सुन्दर रूप में—शुभ या प्रशस्त रूप में संपादित दान, शील, तप आदि हेतु रूप पुण्य कर्म उत्तम—सुखमय फल देने वाले हैं। तथा दुश्चीर्ण—अशुभ या अप्रशस्त रूप में संपादित—आचरित पापमय कर्म अशुभ—दुःखमय फल देने वाले हैं। जीव पुण्य-पाप का स्पर्श—वन्ध करता है जिससे जीवों का जन्म-मरण होता है। कल्याण—शुभ कर्म पुण्य, पाप—अशुभ कर्म फल युक्त हैं। वे निष्फल नहीं होते हैं।

Right practices yield beneficial results, wrong practices yield harmful results. Souls bind virtue and vice, pass from one existence to another, virtue and vice yield results.

धम्ममाइक्खइ—इणमेव णिग्गंथे पावयणे सच्चे अणुत्तरे केवलए संसुद्धे पडिपुण्णे णेआउण सल्लकत्तणे सिद्धिमग्गे मुत्तिमग्गे णिव्वाणमग्गे णिज्जामग्गे अवितहमविसंधि सव्वदुक्खप्पहीणमग्गे इहट्ठिआ जीवा सिज्झंति वुज्झंति मुच्चंति परिणिव्वायंति सव्वदुक्खणमंतं करंति। एगच्चा पुण एगे भयंतारो पुव्वकम्मावसेसेणं अण्णयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति।

भगवान् महावीर प्रकारान्तर से धर्म का आख्यान—प्रतिपादन करते हैं। यह निर्ग्रन्थ प्रवचन—जिन शासन या प्रत्येक संसारी जीव की अन्तर्वर्ती ग्रन्थियों को छुड़ाने वाला, आत्मानुशासनमय प्रवचन—उपदेश सत्य है। अनुत्तर—सर्वोत्तम, अलौकिक है। केवल—केवली सर्वज्ञ द्वारा भाषित या अद्वितीय है। प्रतिपूर्ण—प्रवचन गुणों से सर्वथा सर्वांग सम्पन्न है। संशुद्ध—सर्वथा निर्दोप या अत्यधिक शुद्ध, नैयायिक—प्रमाण से अवाधित है या न्याय-संगत है। शल्यकर्तन—माया, निदान, मिथ्यादर्शन आदि शल्यों—

कांटों का निवारक है। सिद्धिमार्ग—सिद्धावस्था प्राप्त करने का मार्ग—उपाय है। मुक्तिमार्ग—कर्म रहित अवस्था का हेतु है। निर्वाणमार्ग—सकल संताप रहित अवस्था प्राप्त कराने का मार्ग है। निर्याण मार्ग—पुनः नहीं लौटाने वाले अर्थात् जन्म-मृत्यु के चक्र में नहीं गिराने वाले गमन का पथ है। अवितथ—वास्तविक, सद् भूतार्थ, अविसन्धि—महाविदेह क्षेत्र की अपेक्षा से न कभी विच्छेद होता है और न कभी विच्छेद होगा, पूर्वापर विरोध से रहित सर्वदुःख प्रहीण मार्ग—समस्त दुःखों को प्रहीण—सर्वथा क्षीण करने का मार्ग है। ऐसे मोक्ष का यह मार्ग है। इस (प्रवचन) में स्थित जीव सिद्धि—सिद्धावस्था प्राप्त करते हैं, या महती सिद्धियों को प्राप्त करते हैं, केवल-ज्ञानी होते है, भवोपग्राही—जन्म-मृत्यु के चक्र में लाने वाले कर्मांश से रहित हो जाते हैं। परिनिर्वृत हो जाते हैं—कर्म कृत समस्त संताप से रहित परमानन्दमय हो जाते हैं। सभी दुःखों का अन्त कर देते हैं। एकार्चा—जिनके एक ही मनुष्य-भव धारण करना शेष रहा है ऐसे भदन्त—कल्याणान्वित या निर्ग्रन्थ प्रवचन के भक्त पूर्व कर्मों के अवशेष रहने से किन्हीं देवलोकों में देव के रूप में उत्पन्न होते हैं।

He elaborated the Law at length. These words of the *Nirgranthas* are true, unprecedented, supreme, complete, irrefutable and remover of all thorns. They are road to perfection, to liberation, to no-return, to ending all misery, real and relative to Mahāvideha. They have never failed, nor will they ever fail. They terminate all misery. Souls treading on this road are perfected, enlightened, liberated ; they enter into a state of perfect bliss ; they end all misery. Or, if they have to pass through one more human life, the beneficiaries are thereafter born, if they have still to exhaust some previously acquired *karma*, as divine beings in one of the heavens.

महड्ढिएसु जाव...महासुक्खेसु दूरंगइएसु चिरट्ठिईएसु ते णं तत्थ देवा भवंति महड्ढिए जाव...चिरट्ठिईआ हारविराइय-

वच्छा जाव..पभासमाणा कप्पोवगा गतिकल्लाणा आगमेसिभद्दा जाव...पडिरूवा।

वे देवलोक विपुल ऋद्धियों से परिपूर्ण, यावत् (अत्यन्त द्युति, अत्यन्त बल एवं अत्यन्त यशोमय) अत्यधिक सुखमय, दूर गति से युक्त तथा लम्बी स्थिति वाले होते हैं। वहाँ (देवलोक में) देव के रूप में वे जीव विपुल ऋद्धि से सम्पन्न...यावत् चिरस्थितिक—दीर्घ आयु वाले होते हैं। उनके वक्षःस्थल हारों से सुशोभित होते हैं।...यावत् वे अपनी दैहिक-प्रभा से दशों-दिशाओं को प्रभासित करते हैं—प्रभा फैलाते हैं। वे कल्पोत्पन्न देवलोक में देवशय्या से युवा रूप में उत्पन्न होते हैं। वे उत्तम देव गति के धारक, भविष्य काल में भद्र—कल्याण अथवा निर्वाण रूप अवस्था को प्राप्त करने वाले होते हैं।...यावत् वे प्रतिरूप असाधारण रूपवान् होते हैं।

These heavens give a great fortune, till great bliss, with access till the Anuttara-*vimānas,* and a long span of life. So such divine beings enjoy a great fortune till a long span of life. Their chests are bedecked with necklaces, till they spread the lustre of their bodies in all the ten directions. Born in a heaven, they have beneficial existence and are marked for future liberation, till as aforesaid. All this is the outcome of the words of the *Nirgranthas.*

तमाइक्खइ। एवं खलु चउहिं ठाणेहिं जीवा णेरइअत्ताए कम्मं पकरंति। णेरइअत्ताए कम्मं पकरेत्ता णेरइसु उववज्जंति तं जहा—महारंभयाए महापरिग्गहयाए पंचिंदियवहेणं कुणि-माहारेणं।

भगवान् महावीर ने प्रकारान्तर से धर्म का प्रतिपादन इस प्रकार किया। जीव चार स्थानों—कारणों से नैरयिक भव—नरक योनि का आयुष्य बन्ध

करता है। फलतः वे नैरयिक कर्म करके विभिन्न नरकों में उत्पन्न होते हैं। वे स्थान—कारण इस प्रकार हैं: (१) महारम्भ—घोर हिंसा के भाव और कर्म। (२) महापरिग्रह—अत्यधिक संग्रह के भाव अथवा वैसा ही आचरण। (३) पञ्चेन्द्रिय वध—मनुष्य, तिर्यञ्च, पशु-पक्षी आदि पाँच इन्द्रियों वाले प्राणियों की हिंसा अर्थात् उनके प्राणों का हनन करना। (४) मांस भक्षण—मांसाहार करना।

He added further: In this manner, on account of the following four reasons, a soul acquires *karma* giving life in a hell as an infernal being and is born in a hell: excessive slaughter of life, excessive accumulation, killing of a five organ being and taking meat.

एवं एएणं अभिलावेणं तिरिक्खजोणिएसु माइल्लयाए णिअडिल्लाए अलिअवयणेणं उक्कंचणयाए वंचणयाए। मणुस्सेसु पगतिभद्दयाए पगतिविणीतताए साणुक्कोसयाए अमच्छरियताए। देवेसु सरागसंजमेणं संजमासंजमेणं अकामणिज्जराए बालतवोकम्मेणं।

इस प्रकार इस अभिलाप—सूत्र पाठ से जीव तिर्यञ्च योनिकों में उत्पन्न होते हैं: (१) मायापूर्ण निकृति—छलपूर्ण जालसाजी से, (२) अलीक वचन—मिथ्यापूर्ण भाषण करने से, (३) उत्कचनता—झूठी प्रशंसा करने से अथवा किसी मूर्ख व्यक्ति को ठगने वाले धूर्त का समीपवर्ती चतुर पुरुष के संकोच से क्षण भर के लिये निश्चेष्ट रहना या अपनी धूर्तता को छिपाए हुए रखना, (४) वंचनता—ठगी अथवा प्रतारणा। जीव जिन स्थानों—कारणों से मनुष्य योनि मे उत्पन्न होते हैं, वे कारण इस प्रकार हैं: (१) प्रकृति भद्रता—स्वाभाविक सरलता—भलापन, जिससे किसी को हानि या भीति की आशंका न हो, (२) प्रकृति विनीतता—स्वाभाविक-विनम्रता, (३) सानुक्रोशता—सदयता या करुणाशीलता, (४) अमत्सर—ईर्ष्या का अभाव। जीव चार स्थानों—कारणों से देव योनि का आयुष्य

बन्ध करते हैं, फलतः वे देव रूप में उत्पन्न होते हैं : (१) सराग संयम—राग अथवा आसक्ति युक्त चारित्र का पालन करने से, (२) संयमासंयम—देश विरति—श्रावक धर्म का पालन करने से, (३) अकाम निर्जरा—विवशतावश या निरूद्देश्य कष्ट सहने से, (४) बालतप—अज्ञान युक्त अवस्था या मिथ्यात्व दशा में तपश्चर्या करने से।

And on account of the following reasons, a soul may be born in the world of animals, viz. practising hypnotism on others, deceiving others by changing one's dress / appearance, speaking false words, diverting one's attention when he is about to be robbed by feigning to be inactive / innocent for a short while, and by cunning. And on account of the following reasons, a soul may be born in the world of men, viz. natural simplicity, natural humility, kindness / compassion and absence of jealousy. And among the divine beings for practising restraint with some attachment, practising part restraint, undergoing pain / strain on account of helplessness and by practising the penance of an imprudent person. Such is the Law.

तमाइक्खइ—

जह णरगा गम्मंति जे णरगा जा य वेयणा णरए ।
सारीरमाणसाइं दुक्खाइं तिरिक्खजोणीए ।। १
माणुस्सं च अणिच्चं वाहिजरामरणवेयणापउरं ।
देवे अ देवलोए देविड्ढि देवसोक्खाइं ।। २
णरगं तिरिक्खजोणिं माणुसभावं च देवलोअं च ।
सिद्धे अ सिद्धवसहिं छज्जीवणियं परिकहेइ ।। ३
जह जीवा वज्झंति मुच्चंति जह य परिकिलिस्संति ।
जह दुक्खाणं अंतं करंति केई अपडिवद्धा ।। ४
अट्टदुहट्टियचित्ता जह जीवा दुक्खसागरमुविंति ।
जह वेरग्गमुवगया कम्मसमुग्गं विहाडंति ।। ५

जहा रागेण कडाणं कम्माणं पावगो फलविवागो ।
जह य परिहीणकम्मा सिद्धा सिद्धालयमुर्विति ॥ ६

उसके बाद जिस प्रकार नैरयिक नरक में जाते हैं, और वे वहाँ नैरयिकों जैसी वेदना पाते हैं भगवान् ने बतलाया । तिर्यञ्च योनि में जन्म लेने वाले जीव शारीरिक एवं मानसिक दुःख प्राप्त करते हैं । मनुष्य भव—जीवन अनित्य है । उसमें व्याधि, वृद्धावस्था—बुढ़ापा, मृत्यु तथा वेदना आदि प्रचुर—अत्यधिक कष्ट हैं । देवलोक में देव दैवी-ऋद्धि और दैवी-सुख प्राप्त करते हैं । भगवान् महावीर ने नरक, तिर्यञ्च-योनि, मनुष्य के भाव, देवलोक, सिद्ध, सिद्धावस्था और जीव निकाय का सम्पूर्ण रूप से कथन किया । जीव जैसे कर्म का बन्ध करते हैं, मुक्त होते हैं, और जिस प्रकार परिक्लेश पाते हैं एवं कई अप्रतिबद्ध—अनासक्त व्यक्ति जिस प्रकार दुःखों का अन्त करते हैं, पीड़ा, वेदना और आकुलतापूर्ण चित्तयुक्त जीव जिस प्रकार दुःख-सागर को प्राप्त करते हैं, और वैराग्य प्राप्त जीव जिस प्रकार कर्मदल को चूर—ध्वस्त कर देते हैं कहा । रागपूर्वक किये गये कर्मों का फल—विपाक जिस प्रकार पाप रूप या पापपूर्ण होता है और कर्मों से सर्वथा रहित होकर सिद्ध-जीव जिस प्रकार सिद्धालय—सिद्धावस्था प्राप्त करते हैं वह भी कहा ।

He continued :
Some souls go to hells, and as infernals,
They suffer there an immense pain.
Some go to the world of animals
And suffer physical and mental pain. 1

Some go to the world of human beings
And experience disease, old age and death.
Some are destined to reach heavenly abodes
To command the enormous treasure and happiness great. 2

So infernals and those in animal world,
Those in the world of men and the divine beings,
The perfected souls and those lodged at the crest,
Six forms of life are constituted by them. 3

The way in which the souls are bound,
The way in which they attain liberation,
The way in which they suffer an immense pain,
The way they end it through detachment. 4

With a wretched body and a wretched mind,
The way in which they attain the depth of the misery,
The way they regain detachment,
And smash the layers of *karma* great. 5

The way wrong deeds give results bad,
The way a soul, freed from *karma*, attains liberation. 6

तमेव धम्मं दुविहं आइक्खइ। तं जहा—अगारधम्मं अणगारधम्मं च।

भगवान् महावीर ने उसी धर्म को दो प्रकार का बतलाया है। जो इस प्रकार है: अगार धर्म—श्रावक धर्म और अनगार धर्म—श्रमण धर्म।

This way (religion) has two facets to observe, one for householder, another for the homeless monk. Given below is the way of a homeless monk—

अणगारधम्मो ताव इह खलु सव्वओ सव्वत्ताए मुंडे भवित्ता अगाराती अणगारियं पव्वयइ। सव्वाओ पाणाइवायाओ वेरमणं मुसावाय वेरमणं अदिण्णादाण वेरमणं मेहुण वेरमणं परिग्गह वेरमणं राईभोयणाउ वेरमणं। अयमाउसो! अणगारसामइए धम्मे पण्णत्ते। एअस्स धम्मस्स सिक्खाए उवट्ठिए निग्गंथे वा निग्गंथी वा विहरमाणे आणाए आराहए भवति।

अनगार धर्म—इस संसार में जो साधक सर्वतः—द्रव्य तथा भाव से सम्पूर्ण रूप से—सर्वात्म भाव से सावद्य कार्यों का त्याग करता हुआ मुण्डित होकर गृहवास से निकल कर अनगार दशा—मुनि अवस्था में प्रव्रजित होता है वह सम्पूर्णतः प्राणातिपात—हिंसा से विरत होता है, मृषावाद विरमण—असत्य से विरत होता है, अदत्तादान विरमण—चोरी से विरत होता है, मैथुन विरमण—मैथुन से विरत होता है, परिग्रह विरमण परिग्रह से विरत होता है, रात्रि भोजन विरमण—रात्रि भोजन से विरत होता है। भगवान् ने कहा—हे आयुष्मान्! यह अनगार सामायिक—श्रमणों के लिये सैद्धान्तिक अथवा समाचरणीय धर्म कहा गया है। इस धर्म की शिक्षा में—अभ्यास या आचरण में उपस्थित—प्रयत्नशील रहते हुए निर्ग्रन्थ—श्रमण या निर्ग्रन्थी श्रमणी विचरण करते हुए आज्ञा—अरिहन्त देशना के आराधक होते हैं।

One who in this world, in all respects, and with all sincerity, gets tonsured, gives up his home and enters into the life of a homeless monk desists from inflicting harm / slaughter on any form of life, from falsehood, from usurpation, from sex behaviour and from the accumulation of property. He desists from the intake of food at night. Such is the code or essential for a homeless monk. A tie-free man or woman planted on this path is a true follower,—such is the instruction.

अगारधम्मं दुवालसविहं आइक्खइ। तं जहा—पंच अणुव्वयाइं तिण्णि गुणवयाइं चत्तारि सिक्खावयाइं। पंच अणुव्वयाइं, तं जहा—थूलाओ पाणाइवायाओ वेरमणं थूलाओ मुसावायाओ वेरमणं थूलाओ अदिन्नादाणाओ वेरमणं सदारसंतोसे इच्छा-परिमाणे। तिण्णि गुणव्वयाइं तं जहा—अणत्थदंडवेरमणं दिसिव्वयं उवभोगपरिभोगपरिमाणं। चत्तारि सिक्खावयाइं तं जहा—सामाइअं देसावगासियं पोसहोववासे अतिहि-संयअस्स विभागे। अपच्छिमा मारणंतिआ संलेहणाजूसणाराहणा अयमाउसो! अगारसामइए धम्मे पण्णत्ते। अगार धम्मस्स सिक्खाए उवट्ठिए

समणोवासए समणोवासिआ वा विहरमाणे आणाइ आराहए भवति। ॥३४॥

अगार धर्म—श्रावक धर्म वारह प्रकार का वतलाया गया है जो इस प्रकार है: पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रत। पांच अणुव्रत इस प्रकार हैं: (१) स्थूल-प्राणातिपात विरमण—त्रस जीवों के प्राणों की संकल्पपूर्वक की जाने वाली हिंसा से निवृत्त-विरत होना, (२) स्थूल मृषावाद विरमण—स्थूल मृषावाद से विरत होना, (३) स्थूल अदत्तादान विरमण—स्थूल अदत्तादान (चोरी) से विरत होना, (४) स्वदार संतोष—अपनी परिणीता पत्नी तक संतोष—मैथुन की सीमा, (५) इच्छा परिमाण। तीन गुणव्रत इस प्रकार हैं: (१) अनर्थ दण्ड विरमण—आत्म-गुणों के लिये घातक या आत्मा के लिये अहितकर—निरर्थक प्रवृत्ति का परित्याग, (२) दिग्व्रत—पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, अग्नि, नैर्ऋत्य, वायु, ईशान ऊर्ध्व और अधः इन दशों दिशाओं में जाने के सम्वन्ध में सीमाकरण अथवा मर्यादा करना, (३) उपभोग-परिभोग परिमाण—उपभोग—जिन्हें अनेक वार भोगा जा सके, ऐसी वस्तुएँ, जैसे वस्त्र आदि, तथा परिभोग—जिन्हें एक ही वार भोगा जा सके, ऐसी वस्तुएँ, जैसे भोजन आदि, इनका परिमाण—सीमाकरण। चार शिक्षाव्रत इस प्रकार हैं: (१) सामायिक—समत्वभाव या समता की सम्पूर्ण साधना के लिये नियत समय (न्यूनतम एक मुहूर्त—अड़तालीस मिनट) में किया जाने वाला अभ्यास, (२) देशावकाशिक—नित्य प्रति अपनी प्रवृत्तियों में निवृत्ति भाव की अभिवृद्धि का अभ्यास, (३) पोषधोपवास—अध्यात्म साधना में अग्रसर होने के लिये आहार, अब्रह्मचर्य आदि का परित्याग, जिससे आत्मभाव का पोषण होता है, (४) अतिथि संविभाग—जिनके आने की कोई तिथि निश्चित नहीं है, ऐसे अनिमन्त्रित संयमी साधकों या साधर्मिक वन्धुओं को जीवनोपयोगी तथा संयमोपयोगी स्व-अधिकृत सामग्री का एक भाग समादरपूर्वक देना और अपने मन में ऐसी संविभाग की पवित्र भावना सदा वनाए रखना कि ऐसा पावन अवसर प्राप्त होता रहे। तितिक्षापूर्वक अन्तिम मरण रूप संलेखना—तपश्चर्या—आमरण अनशन की आराधना के द्वारा काया को कृश वनाने वाली विशिष्ट क्रिया, शरीर-त्याग, श्रावक की इस जीवन की साधना का पर्यवसान

है। जिसकी (सेवना व आराधना) एक गृही साधक भावना लिये रहता है। भगवान् ने कहा—हे आयुष्मान्! यह अगार-सामायिक गृही साधकों का आचरणीय धर्म है। इस धर्म की शिक्षा में—आचरण या अनुसरण में प्रयत्नशील होते हुए श्रमणोपासक—श्रावक, अथवा श्रमणोपासिका—श्राविका जीवन व्यतीत करते हुए आज्ञा—अरिहन्त-देशना के आराधक होते हैं ॥३४॥

The path for the householder contains twelve items which are five *aṇuvratas* (lesser vows), three *guṇavratas* (improving quality) and four *śikṣāvratas* (educative formulae). Five lesser vows are : to desist from a big slaughter / harm to life, to desist in general from false utterances, to desist in general from usurpation, to be contented in sex behaviour with one's own wife and to limit one's desires. Three items to improve quality are : to avoid inclinations harmful to the property of the soul, to restrict directions for the length of movement and to limit the use and continuous use of objects. Four educative practices are : *sāmāyika* or sitting in equanimity, restricting inclinations, *pauṣadha* (living for a while like a monk) and fasting, entertaining (worthy) guests. Finally to reduce body-weight through rigorous practices and to court death like the prudent—such is the path for the householder. In following the tenets of (this) religion, a householder man or woman really follows the order for a devotee,—such is the instruction. 34

सभा विसर्जन

Congregation ends

तए णं सा महतिमहालिया मणूसपरिसा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव...हिअया उट्ठाए उट्ठेति।

तब वह विशाल मनुष्य-परिषद्—सभा श्रमण भगवान् महावीर के समीप धर्म को सुनकर हृदय में धारण कर हृष्ट-तुष्ट—हर्षित, परितुष्ट हुई।... यावत् हर्षातिरेक से विकसित-हृदय होकर उठ खड़ी हुई।

Then that vast congregation of men, having heard the words from Bhagavān Mahāvīra about the path and having accepted them, became delighted and pleased, till their hearts were expanded with glee. The congregation was declared to be over.

उट्ठाए उट्ठित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ। करेत्ता वंदति णमंसति। वंदित्ता णमंसित्ता अत्थेगइआ मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइए, अत्थेगइआ पंचाणुव्वइयं सत्तसिक्खावइअं दुवालसविहं गिहिधम्मं पडिवण्णा। अवसेसा णं परिसा समणं भगवं महावीरं वंदति णमंसति। वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी—

उठकर श्रमण भगवान् महावीर को तीन बार आदक्षिणा-प्रदक्षिणा की। वैसा कर—आदक्षिणा-प्रदक्षिणा कर वन्दना—नमस्कार किया। वन्दना-नमस्कार कर, उनमें से कई मुण्डित होकर अगार से—गृहस्थ जीवन का त्याग कर अनगार—श्रमण के रूप में प्रव्रजित—दीक्षित हुए। उनमें से कइयों ने पाँच अणुव्रत तथा सात शिक्षाव्रत रूप बारह प्रकार का गृहिधर्म—श्रावकधर्म स्वीकार किया। अवशेष परिषद् ने श्रमण भगवान् महावीर को वन्दना की, नमस्कार किया। वन्दना-नमस्कार कर इस प्रकार कहा—

People moved round Bhagavān Mahāvīra three times and paid him their homage and obeisance. Having done so, some people renounced their homes, got tonsured and entered into the order of monks and some others courted the five lesser

vows and seven educative practices of a pious house-holder. The rest of the people attending the congregation paid their homage and obeisance to Bhagavān Mahāvira and submitted as follows—

सुअक्खाए ते भंते ! णिग्गंथे पावयणे एवं सुपण्णत्ते सुभासिए सुवीणीए सुभाविए अणुत्तरे ते भंते ! णिग्गंथे पावयणे । धम्मं णं आइक्खमाणा तुब्भे उवसमं आइक्खह । उवसमं आइक्खमाणा विवेगं आइक्खह । विवेगं आइक्खमाणा वेरमणं आइक्खह । वेरमणं आइक्खमाणा अकरणं पावाणं कम्माणं आइक्खह । णत्थि णं अण्णे केइ समणे वा माहणे वा जे एरिसं धम्म-माइक्खित्तए । किमंग पुण इत्तो उत्तरतरं ? एवं वंदित्ता जामेव दिसं पाउब्भूआ तमेव दिसं पडिगया ।।३५।।

"हे भगवन् ! आप द्वारा निर्ग्रन्थ-प्रवचन—जिन शासन या प्राणी की अन्तर्वर्ती ग्रन्थियों को छुड़ाने वाला आत्मानुशासनमय उपदेश सुआख्यात—सुन्दर रूप में कहा गया, सुप्रज्ञप्त—इसी प्रकार विशेषता युक्त या उत्तम रीति से समझाया गया, सुभाषित—हृदयस्पर्शी भाषा-शैली मे प्रतिपादित किया गया, सुविनीत—शिष्यों में प्रशस्त रूप में विनियोजित—सहज रूप में अंगीकृत, सुभावित—उत्तम या सुष्ठु भावों से युक्त, अनुत्तर—सर्वोत्तम, निर्ग्रन्थ-प्रवचन—अरिहन्त-देशना है । हे प्रभो ! आपने धर्म की व्याख्या करते हुए उपशम—क्रोध, मान, माया और लोभ रूप कषाय-निरोध का विवेचन किया । आपने उपशम की व्याख्या करते हुए विवेक—बाह्य परिग्रह या आभ्यन्तर ग्रन्थियों के त्याग को समझाया । विवेक की व्याख्या करते हुए आपने विरमण—विरति—आत्म-स्वरूप में लौटने की प्रक्रिया की विवेचना की । विरमण की व्याख्या करते हुए आपने पाप कर्म न करने का निरूपण किया । दूसरा कोई श्रमण या ब्राह्मण नहीं है जो ऐसे धर्म का उपदेश कर सके । तो फिर इससे श्रेष्ठ धर्म के उपदेश की तो बात ही कहाँ ?" इस प्रकार कहकर वह परिषद् जिस दिशा से आई थी, उसी दिशा की ओर लौट गई ।।३५।।

"*Bhante* ! You have expressed the tenets of the *Nirgranthas* in a nice way. You have explained them in an especially impressive way, in beautiful vocabulary, with due humility, in a manner well-thought and unprecedented. *Bhante* ! Verily do they remove all ties. While delineating the Law, you have spoken at length on the tranquilisation of passions. In explaining the tranquilisation of passions, you have analysed the awakened conscience. In analysing the awakened conscience, you have narrated the process of concentrating into one's own self. In narrating the process of concentration, you have emphasized on the need to prevent the degeneration of the soul into an inferior (sinful) state. *Bhante* ! There is no other *Śramaṇa* or *Māhaṇa* who can expound religion in such an exquisite manner, what to speak of excelling you." So saying, people went back in the direction from which they came. 35

कुणिक का गमन

Kūṇika departs

तए णं कूणिए राया भंभसारपुत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव...हियए उट्ठाए उट्ठेइ । उट्ठाए उट्ठित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेति । करेत्ता वंदिति णमंसति । वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी—सुअक्खाए ते भंते ! णिग्गंथे पावयणे जाव•••किमंग पुण एत्तो उत्तरतरं ? एवं वदित्ता जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगए ।।३६।।

उसके बाद भंभसार का पुत्र राजा कूणिक श्रमण भगवान् महावीर के समीप धर्म का श्रवण कर, हृदय में धारण कर हर्षित एवं परितुष्ट हुआ ।... यावत् हृदय आनन्दित हुआ । वह अपने स्थान से उठ खड़ा हुआ । उठ कर श्रमण भगवान् महावीर को तीन बार आदक्षिणा-प्रदक्षिणा की ।

वैसा कर—आदक्षिणा-प्रदक्षिणा कर वन्दना की, नमस्कार किया। वन्दना-नमस्कार कर, उन्होंने इस प्रकार कहा—"हे भगवन्! आप द्वारा सुआख्यात—सुन्दर रूप में प्रतिपादित किया गया निर्ग्रन्थ प्रवचन—अरिहन्त-देशना...यावत् इससे श्रेष्ठ धर्म के उपदेश की तो बात ही कहाँ है ?" इस प्रकार कहकर, वह जिस दिशा से आया था, उसी दिशा की ओर लौट गया ।। ३६ ।।

Thereafter, king Kūṇika, son of Bhambhasāra, having heard the Law from Sramaṇa Bhagavān Mahāvīra, was highly pleased, till his heart expanded with glee. He rose from his seat. Having done so, he moved thrice round Bhagavān Mahāvīra and paid his homage and obeisance and spoke the following words: "*Bhante*! You have expressed the tenets of the *Nirgranthas* in a nice way, till what to speak of excelling you." So saying he departed in the direction from which he came. 36

रानियों का गमन

The Queens depart

तए णं ताओ सुभद्दापमुहाओ देवीओ समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव...हिअयाओ उट्ठाए उट्ठित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेंति। करेत्ता वंदंति णमंसंति। वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी—सुअक्खाए ते भंते! णिग्गंथे पावयणे जाव...किमंग पुण इत्तो उत्तरतरं? एवं वंदित्ता जामेव दिसिं पाउब्भूआओ तामेव दिसिं पडिगयाओ। समोसरणं सम्मत्तं ।।३७।।

उसके पश्चात् सुभद्रा आदि प्रमुख देवियों—रानियों ने श्रमण भगवान् महावीर के निकट धर्म का श्रवण कर, हृदय में धारण कर हर्षित

एवं परितुष्ट हुई। हर्षातिरेक से विकसित हृदय हुई। अपने स्थान से उठ खड़ी हुई। वैसा कर—उठ कर श्रमण भगवान् महावीर को तीन बार आदक्षिणा-प्रदक्षिणा की। वैसा कर—आदक्षिणा-प्रदक्षिणा कर भगवान् को वन्दना की, नमस्कार किया। वन्दन-नमन कर वे इस प्रकार बोलीं—"हे भगवन्! आप द्वारा निर्ग्रन्थ-प्रवचन—धर्मोपदेश, सुआख्यात—सुन्दर रूप में प्रतिपादित किया गया है...यावत् इससे श्रेष्ठ धर्मोपदेश की तो बात ही कहाँ है?" इस प्रकार कहकर, वे जिस दिशा से आई थीं उसी दिशा की ओर लौट—चली गईं ॥३७॥

Then Queen Subhadrā and other ladies of the harem, having heard the Law from Sramaṇa Bhagavān Mahāvīra, were highly pleased, till their hearts expanded with glee. They rose from their seats. Having done so, they moved thrice round Bhagavān Mahāvīra and paid their homage and spoke the following words: "*Bhante*! You have expressed the tenets of the *Nirgranthas* in a nice way, till what to speak of excelling you." So saying they departed in the direction from which they came. 37

औपपातिक पृच्छा

On Rebirth in fresh Species

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदभूई नामं अणगारे गोयमसगोत्तेणं सत्तुस्सेहे समचउरंससंठाणसंठिए वइरोसहनारायसंघयणे कणगपुलकनिग्घसपम्हगोरे उग्गतवे दित्ततवे तत्ततवे महातवे घोरतवे उराले घोरे घोरगुणे घोरतवस्सी घोरबंभचेरवासी उच्छूढसरीरे संखित्त-विउलतेअलेस्से समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूरसामंते उड्ढंजाणू अहोसिरे झाणकोट्ठोवगए संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति।

उस काल (वर्तमान अवसर्पिणी) उस समय (चतुर्थ आरे के अन्त) में श्रमण भगवान् महावीर के ज्येष्ठ अन्तेवासी—शिष्य गौतम-गोत्रीय इन्द्रभूति नामक अनगार—श्रमण, जिनकी देह की ऊँचाई सात हाथ की थी, जिनकी आकृति समचौरस संस्थान-संस्थित थी, अर्थात् जिनके शरीर के चारों अंश सुसंगत—परस्पर समानुपाती, सन्तुलित थे, वे वज्र-ऋषभ-नाराच-संहनन—सुदृढ़ अस्थि-बन्धनों से—विशिष्ट दैहिक रचना से युक्त थे, कसौटी पर अंकित स्वर्ण-रेखा के सदृश आभा लिये हुए, कमल के सदृश गौर वर्ण के थे, वे उग्र—कठोर तपस्वी, कर्म-वन को भस्मसात् करने में अग्नि के समान दीप्त—प्रज्ज्वलित तप करने वाले थे, तप्ततप—जिनके शरीर पर तपश्चरण की अति तीव्र झलक व्याप्त थी अर्थात् जो कठोर तथा विपुल तपश्चर्या में संलग्न थे, जो उराल—प्रबल अध्यात्म-साधना में सुदृढ़ थे, घोर-गुण—अतीव उत्तम गुण जिनको धारण करने में अद्भुत क्षमता चाहिये, ऐसे विशिष्ट गुणों के धारक थे, जो घोर तपस्वी—कठोर या प्रबल तपस्वी थे, जो घोर ब्रह्मचर्यवासी—कठोर ब्रह्मचर्य के पालक थे, जो उत्क्षिप्त शरीर—शरीर के सार-सम्भाल अथवा दैहिक सजावट से रहित थे, जो अपने शरीर के भीतर विशाल तेजोलेश्या समेटे हुए थे, (इस प्रकार के गौतम स्वामी) श्रमण भगवान् महावीर से न अधिक दूर और न अधिक निकट अर्थात् समुचित स्थान पर अवस्थित हो, ऊर्ध्वजानु—घुटने ऊँचे किये हुए, अधोशिर—मस्तक नीचे किये हुए, ध्यान रूपी कोष्ठ में प्रविष्ट हुए अर्थात् ध्यान की मुद्रा में, संयम तथा तप से अपनी आत्मा को भावित—अनुप्राणित करते हुए विचरणशील—अवस्थित थे।

In that period, at that time, Śramaṇa Bhagavān Mahāvīra had as his senior-most disciple, a homeless monk, named Indrabhūti who belonged to the Gautama line. He was seven cubits in height. His body-structure was a graceful square, well-balanced in all respects. The joints of his bones were very strong. The glow of his body was akin to a golden line drawn on a black stone and complexion as white as that of a lotus. He was a hard penancer, a burning penancer, a purified penancer, a great penancer, a tremendous penancer, conqueror of hardships-senses-passions, holder of highest virtues, a great sage, Brahmacārī of the

highest order, careless of his physical frame, centred within his body but capable to burn things over distant regions with his superhuman capacity, sat neither near nor far from Bhagavān Mahāvīra, with his thighs erect and face cast low, (in *utkaṭuka* posture), fully concentrated within self in meditation, enriching his soul by restraint and penance.

तए णं से भगवं गोअमे जायसड्ढे जायसंसए जायकोऊहल्ले उप्पण्णसड्ढे उप्पण्णसंसए उप्पण्णकोऊहल्ले संजायसड्ढे संजायसंसए संजायकोऊहल्ले समुप्पण्णसड्ढे समुप्पण्णसंसए समुप्पण्णकोऊहल्ले उट्ठाए उट्ठेइ ।

उसके बाद उन गौतम स्वामी के मन में श्रद्धापूर्वक इच्छा उत्पन्न हुई, संशय—अनिर्धारित अर्थ में शंका—जिज्ञासा उद्‌बुद्ध हुई, कुतूहल की प्रवृत्ति पैदा हुई। पुनः उनके अन्तर्मन में श्रद्धा का भाव उभरा, संशय समुत्पन्न हुआ और कुतूहल पैदा हुआ। पुनः उनके मन में श्रद्धा का भाव उमड़ा, संशय पैदा हुआ एवं कुतूहल उत्पन्न हुआ। पुनः उनके मन में श्रद्धापूर्वक इच्छा जागृत हुई, संशय उत्पन्न हुआ तथा कुतूहल की प्रवृत्ति उभरी। अतः वे उठकर खड़े हुए।

Afterwards Gautama had a feeling of desire, doubt and curiosity, had a genesis of desire, doubt and curiosity, had the acquisition of desire, doubt and curiosity, had the personification of a desire, doubt and curiosity in him, and he stood up.

उट्ठाए उट्ठित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छति । तेणेव उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेति । तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेत्ता वंदति णमंसति। वंदित्ता णमंसित्ता णच्चासण्णे णाइदूरे सुस्सूसमाणे णमंसमाणे अभिमुहे विणएणं पंजलिउडे पज्जुवासमाणे एवं वयासी :

वे उठकर, खड़े होकर, जहाँ श्रमण भगवान् महावीर विराजमान थे, वहाँ आए। आकर श्रमण भगवान् महावीर को तीन बार आदक्षिणा-प्रदक्षिणा की। वैसा कर—आदक्षिणा-प्रदक्षिणा कर भगवान् को वन्दना की, नमस्कार किया। वन्दना कर, नमस्कार कर, भगवान् के न अधिक समीप, न अधिक दूर, शुश्रूषा—सुनने की उत्कण्ठा रखते हुए, नमस्कार करते हुए विनयपूर्वक, सम्मुख होकर हाथ जोड़े हुए, उनकी पर्युपासना—अभ्यर्थना या सान्निध्यलाभ प्राप्त करते हुए इस प्रकार बोले—

Then he came where Bhagavān Mahāvira was, thrice moved round him and paid his homage and obeisance. Then standing neither near nor very far from him, with full attention and face turned towards him, with folded hands, while worshiping, he made the following submission :

कर्मबन्धन

Bondage of Karma

गौतम : जीवे णं भंते ! असंजए अविरए अप्पडिहयपच्चक्खायपावकम्मे सकिरिए असंवुडे एगंतदंडे एगंतबाले एगंतसुत्ते पावकम्मं अण्हाति ?

महावीर : हंता अण्हाति ॥१॥

गौतम : हे भगवन् ! वह जीव जो असंयत है, जिसने संयम की साधना और आराधना नहीं की है, जो अविरत है—प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान आदि से विरत नहीं है, जिसने प्रत्याख्यान के द्वारा अर्थात् सम्यक् श्रद्धापूर्वक पापकर्मों का त्याग नहीं किया है—उन्हें हल्का नहीं किया है, जो सक्रिय—मानसिक, वाचिक एवं कायिक क्रियाओं से युक्त है, जो क्रियाएँ करता है, जो असंवृत्त है—सम्यक्त्व, व्रत, अप्रमाद आदि संवर से रहित है, या जिसने इन्द्रियों के विषयों का निरोध या संवरण

नहीं किया है, जो एकान्तदण्ड से युक्त है—जो अपने आपको एवं दूसरों को पापकर्म द्वारा एकान्ततः दण्डित करता है, जो एकान्त बाल है—सर्वथा अज्ञानी है अर्थात् मिथ्यादृष्टि है, जो एकान्त सुप्त है—मिथ्यात्व की निद्रा में सर्वथा रूप से सोया है, क्या वह (जीव) पाप कर्म से लिप्त होता है अर्थात् पाप कर्म का वन्ध करता है ?

महावीर: हाँ गौतम ! वह पापकर्म का वन्ध करता है ॥१॥

Gautama : *Bhante* ! Does a living being get entangled in sinful *karma* in case he has not practised restraint, he has done harm to living organisms, he has not reduced the intensity of sinful *karma* by renunciation and stopped the inflow of sinful *karma* through complete renunciation, he has not desisted from physical and other activities, he has not restrained his senses, he chastises self and other by sinful deeds, he has wrong outlook in all respects and he is wholly asleep under the spell of falsehood ?

Mahāvīra : Yes, he does. 1

गौतम : जीवे णं भंते ! असंजअ-अविरअ-अप्पडिहयपच्च-क्खायपावकम्मे सकिरिए असंवुडे एगंतदंडे एगंतबाले एगंतसुत्ते मोहणिज्जं पावकम्मं अण्हाति ?

महावीर : हंता अण्हाति ॥२॥

गौतम : हे भगवन् ! वह जीव, जो असंयत है—जिसने संयम की आराधना नहीं की है, जो अविरत है—हिंसा, मृषावाद आदि से विरत नहीं है, जिसने प्रत्याख्यान के द्वारा अर्थात् सम्यक श्रद्धापूर्वक पाप-कर्मों को प्रतिहत—त्याग नहीं किया, हल्का नहीं किया, जो सक्रिय है—कायिक, वाचिक और मानसिक क्रियाओं से युक्त है—क्रियाएँ करता है, जो असंवृत्त—सम्यक्त्व, व्रत, अप्रमाद आदि संवर से रहित है या जिसने

इन्द्रियों के विषयों का निरोध नहीं किया है, जो एकान्त दण्डयुक्त है—जो अपने को एवं दूसरों को पापकर्मों के द्वारा सर्वथा दण्डित करता है, जो एकान्त बाल है—सर्वथा मिथ्या दृष्टि है, जो एकान्त सुप्त है—मिथ्यात्व की निद्रा में सोया पड़ा है, क्या वह (आत्मा) मोहनीय-पापकर्म से लिप्त होता है अर्थात मोहनीय कर्म का बन्ध करता है ?

महावीर : हाँ गौतम ! वह मोहनीय कर्म का बन्ध करता है ॥२॥

Gautama : *Bhante* ! One who has never practised restraint, has caused harm to living organisms, has not reduced the intensity of sinful *karma* by renunciation and stopped the inflow of sinful *karma* through complete renunciation, has not desisted from sinful and other activities, has not restrained his senses, chastises self and others by sinful deeds, has wrong outlook in all respects and is wholly asleep under the spell of falsehood, does he acquire *karma* causing delusion ?

Mahāvīra : Yes, he does. 2.

गौतम : जीवे णं भंते ! मोहणिज्जं कम्मं वेदेमाणे किं मोहणिज्जं कम्मं बंधइ ? वेअणिज्जं कम्मं बंधइ ?

महावीर : गोयमा ! मोहणिज्जंपि कम्मं बंधइ वेअणिज्जंपि कम्मं बंधति । णण्णत्थ चरिममोहणिज्जं कम्मं वेदेमाणे वेअणिज्जं कम्मं बंधइ णो मोहणिज्जं कम्मं बंधइ ॥३॥

गौतम : हे भगवन् ! क्या जीव मोहनीय कर्म का वेदन—अनुभव करता हुआ मोहनीय कर्म बाँधता है ? अर्थात उसका बन्ध करता है ? क्या वेदनीय कर्म का बन्ध करता है ?

महावीर : गौतम ! वह मोहनीय कर्म का बन्ध करता है, वेदनीय कर्म का भी बन्ध करता है । किन्तु (सूक्ष्म संपराय नामक दशवें गुणस्थान

में) चरम मोहनीय कर्म का वेदन—अनुभव करता हुआ जीव वेदनीय कर्म का ही बन्ध करता है, मोहनीय (वस्तुतत्त्व के श्रद्धान और चारित्र में भ्रान्ति पैदा कराने में कारण रूप) कर्म का बन्ध नहीं करता है ॥३॥

Gautama : *Bhante*! Does a living being experiencing *karma* causing delusion bind more *karma* causing delusion, also *karma* giving experience ?

Mahāvīra : Gautama! Verily he does bind *karma* causing delusion, also *karma* giving experience. But when he is having *karma* causing delusion in an extreme form, he may acquire *karma* giving experience, but not one causing delusion. 3

असंयत एकान्त सुप्तका उपपात

Rebirth of the Unrestrained

गौतम : जीवे णं भंते ! असंजए अविरए अप्पडिहयपच्चक्खायपावकम्मे सकिरिए असंवुडे एगंतदंडे एगंतवाले एगंतसुत्ते ओसण्णतसपाणघाती कालमासे कालं किच्चा णिरइएसु उववज्जंति ?

महावीर : हंता उववज्जंति ॥४॥

गौतम : हे भगवन् ! जो जीव असंयत है—जिसने संयम की आराधना नहीं की है, जो अविरत है—हिंसा, मृषावाद आदि से विरत नहीं है, जिसने सम्यक् श्रद्धापूर्वक पापकर्मों को प्रतिहत नहीं किया है, त्याग नहीं किया है, हल्का नहीं किया है, जो सक्रिय है—(मिथ्यात्वपूर्वक) मानसिक वाचिक एवं कायिक क्रियाओं में संलग्न है, असंवृत है—सम्यक्त्व, व्रत, अप्रमाद आदि संवर से रहित है, अर्थात् आश्रव का निरोध नहीं किया है, जो एकान्तदण्ड से युक्त है—पापपूर्ण प्रवृत्तियों के द्वारा अपने आपको तथा दूसरों को सर्वथा दण्डित करता है, जो

एकान्त बाल है—सर्वथा मिथ्यादृष्टि है, और एकान्त सुप्त है—मिथ्यात्व की निद्रा में बिल्कुल सोया हुआ है, त्रस—द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय आदि स्पन्दनशील, हिलने-डुलने वाले प्राणी या जिनको त्रास का वेदन करते हुए अनुभव किया जा सके, वैसे जीवों का बहुलता से घात करता है, त्रस जीवों के प्राणों की हिंसा में लगा रहता है, क्या वह (जीव) मृत्यु-समय आने पर मरकर नैरयिकों में उत्पन्न होता है ?

महावीर : हाँ गौतम ! ऐसा होता है ॥४॥

Gautama : *Bhante* ! Is a living being who has never practised restraint, till who is wholly asleep under the spell of falsehood and who is a killer of innumerable mobile beings, is he, having died at a certain moment of the eternal time, born among the infernal beings ?

Mahāvira : Yes, he does. 4

गौतम : जीवे णं भंते ! असंजए अविरए अप्पडिहयपच्चक्खायपावकम्मे इओ चुए पेच्चा देवे सिआ ?

महावीर : गोयमा ! अत्थेगइआ देवे सिया अत्थेगइआ णो देवे सिया ।

गौतम : हे भगवन् ! जिन्होंने संयम नहीं साधा है, जो अविरत हैं—हिंसा, असत्य आदि से विरत नहीं हुए हैं, जिन्होंने प्रत्याख्यान के द्वारा पापकर्मों का त्याग कर उन्हें नहीं मिटाया है, वे यहाँ से च्युत होकर—मरकर अगले जन्म में क्या देव होते हैं ? क्या देव योनि में जन्म लेते हैं ?

महावीर : गौतम ! कई देव होते हैं, कई देव नहीं होते हैं ।

Gautama : *Bhante* ! Is a living being who has never practised restraint; till has not desisted from sinful and other

activities, born, after being dead at a certain moment of the eternal time, among the celestial beings ?

Mahāvīra : Gautama ! In some cases, he is born among the celestial beings, but in some other cases, he is not so born.

गौतम : से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—अत्थेगइआ देवे सिआ अत्थेगइआ णो देवे सिआ ?

महावीर : गोयमा ! जे इमे जीवा गामागर-णयर-णिगम-रायहाणि-खेड-कव्वड-मडंव-दोणमुह-पट्टणासम-संबाह-सण्णिवेसेसु अकामतण्हाए अकामछुहाए अकामबंभचेरवासेणं अकामअण्हाण-कसीयायवदंसमसगसेअजल्लमल्लपंकपरितावेणं अप्पतरो वा भुज्जतरो वा कालं अप्पाणं परिकिलेसंति । अप्पतरो वा भुज्जतरो वा कालं अप्पाणं परिकिलेसित्ता कालमासे कालं किच्चा अण्णतरेसु वाण-मंतरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति । तहिं तेसिं गती तहिं तेसिं ठिती तहिं तेसिं उववाए पण्णत्ते ।

गौतम : हे प्रभो ! आप किस अभिप्राय (कारण) से इस प्रकार कहते हैं कि कई देव होते हैं और कई देव नहीं होते हैं ?

महावीर : गौतम ! जो ये जीव मोक्ष-प्राप्ति की अभिलाषा के विना या कर्म-क्षय के लक्ष्य के विना ग्राम, आकर—नमक आदि के उत्पत्ति स्थान, नगर—जिनमें कर नहीं लगता हो ऐसे शहर, खेट—धूल के परकोटों से युक्त गाँव, कर्वट—अति सामान्य कस्बे, द्रोणमुख—स्थल मार्ग अथवा जल मार्ग से युक्त स्थान, मडंब—आस-पास गाँव रहित बस्ती, पत्तन—बड़े नगर, जहाँ जल मार्ग अथवा स्थल मार्ग से जाना संभव हो या बन्दरगाह. आश्रम—तापसों के आवास, निगम—व्यापारिक नगर, संवाह—पर्वत की तलहटी में बसे हुए गाँव, सन्निवेश—झोपड़ियों से युक्त बस्ती या सार्थवाह तथा सेना आदि के ठहरने के स्थान में तृषा—प्यास, क्षुधा—भूख, ब्रह्मचर्य के पालन से,

अस्नान, शीत, आतप, डांस-मच्छर, स्वेद—पसीना, जल्ल—रज, मल्ल—मैल, जो सूख कर कठोर बन गया, पंक—पसीने से गीला बना हुआ मैल, इन सभी परितापों से अपने आपको कम या अधिक क्लेश देते हैं, कुछ समय तक अपने आप को क्लेशित कर मृत्यु का समय आने पर शरीर का परित्याग करके वे वाण-व्यन्तर देवलोकों में से किसी देवलोक में देव के रूप में उत्पन्न होते हैं। वहाँ उनकी गति—जाना, वहाँ उनकी स्थिति—रहना और वहाँ उनका उपपात—देवरूप से उत्पन्न होना, कहा गया है।

Gautama : *Bhante* ! Why do you say that in some cases he is born among the celestial beings, but in some other cases, he is not so born ?

Mahāvira : Gautama ! When living beings residing in villages, mines, towns, etc. etc., who are not actuated by a desire to uproot (exhaust) *karma*, but who torture self by stopping the intake of food and drink, by practising celibacy, by hardship arising out of non-bath, cold, heat, mosquito, sweat, dust, dirt and mud, for short or for long, who are thus tortured, such ones, dying at a certain point in eternal time, are born in one of the heavens occupied by the Vāṇavyantara gods as celestial beings. They are said to go to these heavens, reside there as so many celestial beings.

गौतम : तेसि णं भंते ! देवाणं केवइअं कालं ठिई पण्णत्ता ?

महावीर : गोअमा ! दसवाससहस्साइं ठिई पण्णत्ता।

गौतम : अत्थि णं भंते ! तेसिं देवाणं इड्ढी वा जुई वा जसे ति वा बले ति वा वीरिए इ वा पुरिसक्कारपरिक्कमे इ वा ?

महावीर : हंता अत्थि।

गौतम : ते णं भंते ! देवा परलोगस्साराहगा ?

महावीर : णो तिणट्ठे समट्ठे ॥५॥

गौतम : हे भगवन् ! उन देवों की स्थिति—आयुष्य कितने काल की बतलाई गई है ?

महावीर : गौतम ! वहाँ उन देवों की स्थिति—आयुष्य दस हजार वर्ष की बतलाई गई है।

गौतम : हे भगवन् ! क्या उन देवों की ऋद्धि—परिवार आदि संपत्ति, द्युति—शरीर, आभूषण आदि की दीप्ति, यश—ख्याति, कीर्ति, बल—शरीर जनित शक्ति, वीर्य—जीव निष्पन्न प्राणमयी शक्ति, पुरुषाकार—पुरुषार्थ, पौरुष की अनुभूति तथा पराक्रम ये सभी अपनी-अपनी विशेषता के साथ होते हैं ?

महावीर : हाँ गौतम ! ऐसा होता है।

गौतम : हे प्रभो ! क्या वे देव परलोक के आराधक होते हैं ?

महावीर : गौतम ! यह आशय संगत नहीं है अर्थात् वे (देव) परलोक के आराधक नहीं हैं ॥५॥

Gautama : *Bhante* ! Of these celestial beings, of what length is their life-span ?

Mahāvīra : Ten thousand years.

Gautama : *Bhante* ! Do they have fortune, glow, fame, strength, vigour, vitality and prowess ?

Mahāvīra : Yes, they have.

Gautama : *Bhante* ! Do they covet the next birth ?

Mahāvīra : No, they do not. 5

वंदी आदि का उपपात

Rebirth of the Prisoners

से जे इमे गामागर-णयर-णिगम-रायहाणि-खेड-कब्बड-मडंब-दोणमुह-पट्टणासम-संबाह-सण्णिवेसेसु मणुआ भवंति, तं जहा—अंडुबद्धका णिअलबद्धका हडिबद्धका चारगबद्धका हत्थच्छिन्नका पाय-

च्छिन्नका कण्णच्छिण्णका णक्कच्छिण्णका उट्ठच्छिन्नका जिब्भच्छिन्नका सीसच्छिन्नका मुखच्छिन्नका मज्झच्छिन्नका वेकच्छच्छिन्नका हियउप्पाडियगा णयणुप्पाडियगा दसणुप्पाडियगा वसणुप्पाडियगा गेवच्छिण्णका तंडुलच्छिण्णका कागणिमंसक्खाइयया ओलंविया लंबिअया घंसिअया घोलिअया फाडिअया पीलिअया सूलाइअया सूलभिण्णका खारवत्तिया वज्झवत्तिया सीहपुच्छियया दवग्गिदड्ढगा पंकोसण्णका पंके खुत्तका वलयमयका वसट्टमयका णियाणमयका अंतोसल्लमयका गिरिपडिअका तरुपडिका मरुपडियका गिरिपक्खंदोलिया तरुपक्खंदोलिया मरुपक्खंदोलिया जलपवेसिका जलणपवेसिका विसभक्खितका सत्थोवाडितका वेहाणसिआ गिद्धपिट्ठका कंतारमतका दुभिक्खमतका असंकिलिट्ठपरिणामा ते कालमासे कालं किच्चा अण्णतरेसु वाणमंतरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति। तहिं तेसिं गती तहिं तेसिं ठिती तहिं तेसिं उववाए पण्णत्ते।

जो ये जीव ग्राम, आकर—नमक आदि के उत्पत्ति स्थान, नगर—जिनमें कर नहीं लगता हो, ऐसे शहर, खेट—धूल के परकोटों से युक्त गाँव, कर्वट—अति सामान्य कस्बे, द्रोणमुख—स्थल मार्ग एवं जल मार्ग से युक्त स्थान, मडंब—आस-पास गांव रहित वस्ती, पत्तन—वड़े नगर, जहाँ स्थल मार्ग या जल मार्ग से जाना संभव हो या वन्दरगाह, आश्रम—तापसों के आवास, निगम—व्यापारिक नगर, संवाह—पर्वत की तलहटी में वसे हुए गाँव, सन्निवेश—सार्थवाह, सेना आदि के—ठहरने के स्थान में मनुष्य होते हैं अर्थात् मनुष्य के रूप में जन्म ग्रहण करते हैं, जिनके किसी अपराध के कारण लोहे या काठ के बन्धन-विशेष से हाथ-पैर जकड़े हुए हैं, बाँध दिये जाते हैं, जिनको बेड़ियों से जकड़ दिये जाते हैं, जिनके पैर काठ के खोड़े में फँसे हुए होते हैं, डाल दिये जाते हैं, जो अन्धकारमय कारागार में वन्द कर दिये जाते हैं, जिनके हाथ विदीर्ण कर दिये जाते हैं, जिनके पैर काट दिये जाते हैं, जिनके कान काट दिये जाते हैं, जिनके नाक काट दिये जाते हैं, जिनके होठ छेद दिय जाते हैं, जिनकी जिह्वाएँ काट दी जाती हैं, जिनके मस्तक छेद दिये जाते हैं,

जिनके मुख छेद दिये जाते हैं और जिनके वायें स्कन्ध—कन्वे से लेकर दाहिनी कांख तक के शरीर-भाग मस्तक सहित चीर दिये जाते हैं, जिनके हृदय—कलेजे उखाड़ दिये जाते हैं, जिनके नेत्र निकाल लिये जाते हैं, जिनके दांत तोड़ दिये जाते हैं, जिनके अण्डकोश उखाड़ दिये जाते हैं, जिनकी गर्दन तोड़ दी जाती है, चावल के दाने के समान जिनके शरीर के टुकड़े-टुकड़े कर दिये जाते हैं, जिनके शरीर का कोमल मांस उखाड़-उखाड़ कर उन्हींको खिलाया गया हो, जो रस्सी से बांध कर खड्डे, कुएँ आदि में लटकाये जाते हैं, वृक्ष की शाखा में हाथ बांधकर लटकाये जाते हैं, चन्दन के समान पत्थर आदि पर घिस दिये जाते हैं, दधिघट—पात्र स्थित दही के समान जो घोलित—मथ दिये जाते हैं, काठ के समान कुल्हाड़े से फाड़ दिये जाते हैं, जो इक्षु—गन्ने के समान कोल्हू में पेल दिये जाते हैं, जो शूली पर चढ़ाये जाते हैं, अर्थात् शूली में पिरो दिये जाते हैं, जो शूली से छिन्न-भिन्न—बींध दिये जाते हैं अर्थात् जिनके शरीर से लेकर मस्तक में से शूली निकाल दी जाती है, जिन पर खार डाल दिया जाता है, या जिन्हें खार के बर्तन में डाल दिये जाते हैं, जिनको गीले चमड़े से बाँध दिये जाते हैं, जिन्हें सिंह-पुच्छ-से कर दिये जाते हैं, जो दावाग्नि में जल जाते हैं, जो कीचड़ में डूब जाते हैं, कीचड़ में फँस जाते हैं, जो संयम के मार्ग से भ्रष्ट होकर या भूख-प्यास आदि से पीड़ित होकर—परिषहों से घबरा कर मरते हैं, जो विषय-वासना के सेवन में परतन्त्रता से पीड़ित या दुःखित होकर मरते हैं या हरिण के समान शब्द, गन्ध, रस आदि विषयों में लीन बन कर मरते हैं, जो सांसारिक इच्छा-पूर्ति के संकल्प के साथ अज्ञानपूर्वक तपश्चर्या करके मरते हैं, जो अन्तःशल्य—भावशल्य अर्थात् कलुषित भावों के कांटे को निकाले बिना ही भाले आदि से अपने आपको बेधकर मरते हैं, जो पर्वत से गिरकर अथवा अपने पर बड़ा पत्थर गिराकर मरते हैं, जो वृक्ष से गिरकर मरते हैं या वृक्ष के गिरने से मर जाते हैं, निर्जल प्रदेश में मर जाते हैं या मरुस्थल के किसी स्थान अर्थात् बड़े टीबे आदि से गिरकर मरते हैं, जो पर्वत से छलांग लगाकर मर जाते हैं, वृक्ष से झंपापात—छलांग कर मरते हैं, मरुभूमि की रेती में गिरकर मर जाते हैं, जल में प्रवेश कर के मर जाते हैं, अग्नि में प्रवेश कर के मर जाते हैं, विष-पान कर के मर जाते हैं, शस्त्रों के द्वारा अपने आप को चीर कर मरते हैं, जो वृक्ष की डाली आदि से लटक कर या अपने गले में फाँसी लगा

कर मरते हैं, जो किसी के मृत कलेवर—मनुष्य, हाथी, ऊंट, गधे आदि के शरीर में प्रवेश करके गीधों (पक्षियों) की चोंचों से विदारित होकर मरते हैं, जो जंगल में खोकर मरते हैं, दुर्भिक्ष में भूख, प्यास आदि से मरते हैं, यदि उन व्यक्तियों के परिणाम संक्लिष्ट—आर्त्तध्यान एवं रौद्र ध्यान से युक्त न हों तो उस प्रकार काल के समय मृत्यु प्राप्त कर वे वाण-व्यन्तर देवलोकों में से किसी देवलोक में देव रूप में उत्पन्न होते हैं। वहां उस देवलोक के अनुरूप उनकी गति, वहां उनकी स्थिति तथा वहां उनकी उपपात—उत्पत्ति होती है, ऐसा बतलाया गया है।

Such beings who reside in villages, mines, cities, etc., etc., who have their hands and feet tied with *anduka* made from iron/wood, who are in fetters, who are trapped, who are in dark cells, with hands, feet, ears, noses, lips, tongue, crest, mouth, waist/belly, or the place (shoulder) wherefrom hangs the sacred thread / who have been pierced like a sacred thread, the flesh of whose heart has been cut, whose eyes have been taken out of the socket, whose teeth have been removed, whose testacles have been cut, whose throat has been pierced, whose flesh has been cut to the size of a grain of rice, who have been fed with their own flesh or those who have been tied with a rope and let down into a ditch, who have been tied to the branch of a tree by their hands, who have been dragged on the ground, who have been churned, who have been pierced by an axe, who have been crushed through a machine, who have been placed on the lance or who have just been pierced by the lance on which they were placed, or on whom alkali has been spread or who have been hurled into alkali, who have been wrapped in raw hide or whose male organ (penis) has been removed, or those who have died in fire, who have been drowned in mud, who have been bogged in mud, who have slipped from restraint, who have died from some hardship like hunger, who have died from pain of dependence in enjoyment of objects, who

have died by being misguided by sound like a deer, who have died on sheer ignorance, who have died without repentence, who have died by jumping from a mountain or crushed by a rock, who have died by falling from a tree or by the falling of a tree, who have died for coming to an arid region, who have died by plunging from a mountain or from a tree, or who have died in the sand of a desert, or those who have died by entering into water, by walking into the fire, by administering poison, by piercing one's person with some weapon, by tying a rope round one's throat, by jumping into the sky from the branch of some tree, by entering into some carcass and thereafter being pecked by vultures, by dying in a forest or during a famine, if such people are not in misery at the time of death, then, by dying at some point in the eternal time, they are born in one or an other of the heavens occupied by the Vāṇavyantaras. Their entry in these heavens, their length of stay and their genesis have been stated.

गौतम : तेसि णं भंते ! देवाणं केवइअं कालं ठिती पण्णत्ता ?

महावीर : गोअमा ! वारसवारससहस्साइं ठिती पण्णत्ता ।

गौतम : अत्थि णं भंते ! तेसिं देवाणं इड्ढी वा जुई वा जसे ति वा बले ति वा वीरिए इ वा पुरिसक्कारपरिक्कमे इ वा ?

महावीर : हंता अत्थि ।

गौतम : ते णं भंते ! देवा परलोगस्साराहगा ?

महावीर : णो तिणट्ठे समट्ठे ॥ ६ ॥

गौतम : हे भगवन् ! वहाँ उन देवों की कितनी स्थिति होती है ?

महावीर : गौतम ! वहाँ उन देवों की स्थिति बारह हजार वर्ष की बतलाई गई है।

गौतम : हे प्रभो ! क्या उन देवों के वहाँ ऋद्धि—परिवार आदि संपत्ति, द्युति—कान्ति, यश—ख्याति, कीर्ति, बल—शारीरिक-प्राण, वीर्य—आत्मजनित प्राणमयी शक्ति, पुरुषाकार—पुरुषार्थ या पौरुष की अनुभूति, पराक्रम ये सब होते हैं या नहीं ?

महावीर : हाँ, गौतम ! ऐसा होता है।

गौतम : हे प्रभो ! क्या वे देव देवलोक के आराधक होते हैं ?

महावीर : गौतम ! यह आशय संगत नहीं है—ऐसा नहीं होता है अर्थात् वे देव परलोक के आराधक नहीं होते हैं ॥६॥

Gautama : *Bhante* ! How long is their stay there ?

Mahāvīra : Gautama ! Twelve thousand years.

Gautama : *Bhante* ! Do these celestial beings possess fortune, glow, fame, strength, vigour, vitality and prowess ?

Mahāvīra : Yes, they do.

Gautama : *Bhante* ! Do they propitiate the next birth ?

Mahāvīra : No, they do not. 6.

भद्र प्रकृतिवालों का उपपात

Rebirth of human beings who are gentle

से जे इमे गामागर-णयर-णिगम-रायहाणि-खेड-कब्बड-मडंब-दोणमुह-पट्टणासम-संबाह-संनिवेसेसु मणुआ भवंति । तं जहा—पगइभद्दगा पगइउवसंता पगइपतणुकोह-माण-माया-लोहा मिउ-मद्दव-संपण्णा अल्लीणा विणीआ अम्मापिउ-सुस्सूसका अम्मापिईणं अणतिक्कमणिज्जवयणा अप्पिच्छा अप्पारंभा अप्पपरिग्गहा अप्पेणं आरंभेणं अप्पेणं समारंभेणं अप्पेणं आरंभसमारंभेणं वित्तिं कप्पेमाणा

बहूइं वासाइं आउअं पालंति। पालित्ता कालमासे कालं किच्चा अण्णतरेसु वाणमंतरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति। तहिं तेसिं गती तहिं तेसिं ठिती तहिं तेसिं उववाए पण्णत्ते।

जो ये जीव ग्राम, आकर, नगर, खेट, कर्बट, द्रोणमुख, मडंब, पत्तन, आश्रम, निगम, संवाह, सन्निवेश में मनुष्य के रूप में जन्म लेते हैं, इस प्रकार हैं: प्रकृतिभद्र—जो स्वभावतः सौम्य व्यवहारशील अर्थात् परोपकार परायण, प्रकृति उपशान्त—स्वभाव से शान्त, प्रकृति प्रतनु—क्रोध, मान, माया तथा लोभ इनकी उग्रता से रहित, हल्कापन लिये हुए, मृदुमार्दवसम्पन्न—अत्यधिक कोमल स्वभाव-युक्त अर्थात् अहंकार रहित, आलीन—गुरुजनों के आश्रित, आज्ञा पालक, विनीत—विनयशील, माता-पिता की सेवा करने वाले एवं उनकी आज्ञा का उल्लंघन नहीं करने वाले, अल्पेच्छा—बहुत कम इच्छा वाले, अल्पारम्भ—कम से कम हिंसा करने वाले, अल्प परिग्रह—धन, धान्य आदि परिग्रह के स्वल्प-परिमाण से संतुष्ट, अल्पारम्भ-अल्पसमारम्भ—जीवों के द्रव्य-प्राणों की हिंसा तथा जीव-परितापन की न्यूनता द्वारा आजीविका चलाने वाले, बहुत वर्षों का आयुष्य भोगते हैं। आयुष्य भोग कर अर्थात् पूरा कर मृत्यु काल के आने पर शरीर त्याग करके वाण-व्यन्तर देवलोकों में से किसी देवलोक में देव के रूप में उत्पन्न होते हैं। वहाँ उन देवों की गति, वहाँ उन देवों की स्थिति, वहाँ उन देवों का उपपात—उत्पत्ति होती है, ऐसा बतलाया गया है।

Those human beings who live in villages, mines, towns, etc., etc., who are gentle by nature, who are tranquil by nature, who have little anger, pride, attachment and greed, who are tender, sheltered with their elders, polite, serving their parents, who never violate the words of their parents, with little hankering, little endeavour, little property, little slaughter, little torture, little slaughter-torture for the earning of their livelihood, if people live like this for many years, such ones, after death at some point in eternal time, are born in one of the heavens meant for the Vāṇavyantaras.

गौतम : तेसि णं भंते ! देवाणं केवइअं कालं ठिती पण्णत्ता ?

महावीर : गोयमा ! चउद्दसवाससहस्सा ॥७॥

गौतम : हे भगवन् ! उन देवों की स्थिति—आयु कितने समय की बतलाई गई है ?

महावीर : इन देवों की स्थिति—आयुष्य-परिमाण चौदह हजार वर्ष का होता है ॥७॥

Gautama : *Bhante* ! How long is the span of their stay there ?

Mahāvīra : Gautama ! Fourteen thousand years. 7.

गतपतिका (प्रोषितभर्तृका) आदि का उपपात

Rebirth of women whose men have gone abroad and of others

से जाओ इमाओ गामागर-णयर-णिगम-रायहाणि-खेड-कब्बड-मडंब-दोणमुह-पट्टणासम-संबाह-संनिवेसेसु इत्थियाओ भवंति । तं जहा—अंतो अंतेउरियाओ गयपइआओ मयपइआओ बालविहवाओ छड्डितल्लिताओ माइरक्खिआओ पिअरक्खिआओ भायरक्खिआओ कुलघररक्खिआओ ससुरकुलरक्खिआओ परूढ-णह-मंसुकेस-कक्ख-रोमाओ ववगयपुप्फगंधमल्लालंकाराओ अण्हाणगसेअजल्लमलपंकपरिताविआओ ववगयखीरदहिणवणीअसप्पितेल्लगुललोणमहुमज्जमंसपरिचत्तकयाहाराओ अप्पिच्छाओ अप्पारंभाओ अप्पपरिग्गहाओ अप्पेणं आरंभेणं अप्पेणं समारंभेणं अप्पेणं आरंभसमारंभेणं वित्तिं कप्पेमाणिओ अकामबंभचेरवासेणं तमेव पइसेज्जं णाइक्कमइ । ताओ णं इत्थिआओ एयारूवेणं विहारेणं विहरमाणीओ बहुइं वासाइं सेसं तं चेव जाव...चउसट्ठिं वाससहस्साइं ठिई पण्णत्ता ॥८॥

जो ये जीव ग्राम, आकर, नगर, खेट, कर्बट, द्रोणमुख, मडंव, पत्तन, आश्रम, निगम, संवाह, तथा सन्निवेश में स्त्री के रूप में उत्पन्न होते हैं, इस प्रकार हैं : जो अन्तःपुर के भीतर निवास करती हैं, जिनके पति परदेश चले गये हों, जिनके पति मर गये हैं, जो बाल्यावस्था में विधवा हो गई हों, जो पतियों के द्वारा परित्यक्त कर दी गई हैं, माता द्वारा जिनका पालन-पोषण एवं संरक्षण होता है, जो पिता द्वारा संरक्षित हों, जो भाइयों द्वारा रक्षित हों, जो कुलगृह—पीहर के अभिभावकों के द्वारा रक्षित हों, जो श्वसुर-कुल के अभिभावकों द्वारा रक्षित हों, जो पति या पिता आदि के मित्रों, अपने हितैषियों—मामा, नाना, काका आदि सम्बन्धियों, अपने सगोत्रीय—देवर, जेठ आदि पारिवारिक जनों के द्वारा संरक्षित हों, विशेष-परिष्कार तथा विशिष्ट संस्कार के अभाव में जिनके नख, केश, काँख के बाल बढ़ गये हों, जो पुष्प, सुगन्धित पदार्थ, और मालाएँ धारण नहीं करती हों, जो अस्नान—स्नान का अभाव, स्वेद—पसीने, जल्ल—रज, मल्ल—सूख कर शरीर पर जमे हुए मैल, पंक—पसीने से गीले हुए मैल से पीड़ित या दुःखित रहती हों, जो दूध, दही, मक्खन, घृत, तैल, गुड़, नमक, मधु, मद्य, तथा मांस—इन सब से रहित आहार करती हों, जिनकी इच्छाएँ बहुत ही कम हों, जिनके धन, धान्य आदि परिग्रह बहुत ही कम हों, अल्पारम्भ-अल्प-समारम्भ—जो बहुत कम जीव-हिंसा तथा जीव-परितापन के द्वारा अपनी आजीविका चलाती हों, अकाम—मोक्ष की इच्छा अथवा लक्ष्य के विना जो ब्रह्मचर्य का परिपालन करती हों, पति-शय्या का उल्लंघन नहीं करती हों अर्थात् उपपति स्वीकार नहीं करती हों—इस प्रकार के आचरण द्वारा अपना जीवन यापन करती हों, अवशेष वर्णन पिछले सूत्र के समान हैं। अर्थात् वे स्त्रियाँ बहुत वर्षों का आयुष्य भोगते हुए, आयुष्य पूर्ण कर, मृत्युकाल आने पर शरीर का त्याग कर वाण-व्यन्तर देवलोको में से किसी देवलोक में देव के रूप में उत्पन्न होती हैं। प्राप्त देवलोक के अनुरूप उनकी अपनी विशेष गति, स्थिति तथा उपपात—उत्पत्ति होती है। वहाँ इनकी स्थिति—आयुष्य परिमाण चौसठ हजार वर्षों की होती है, ऐसा बतलाया गया हैं ॥८॥

Women living in villages, mines, towns, etc., etc., residing in the harem, whose men have gone out of the country, who have become widows in rather young age, who have been

abandoned by their men, who are sheltered by their mothers, fathers or brothers, who are protected by the parental families or by the fathers-in-law's families, who have their nails, hairs and hairs of the armpits overgrown, who keep aside from flowers, essence, garlands and ornaments, who bear the hardship of non-bath, sweat, dust, dirt and mud, whose food does not contain milk, curd, butter, *ghī*, oil, jaggery and salt, and also honey, alcohol and meat, whose desires are few, who do little harm, whose accumulation is little, who commit little slaughter, who inflict little torture, who earn their livelihood from simple calling, women who live contented like this (with their men whom they had once acquired, but never coveting the company of another),—till the length of their stay is sixtyfour thousand years. 8

द्विद्रव्यभोजी आदिका उपपात

Rebirth of men taking two food items and so on

से जे इमे गामागर-णयर-णिगम-रायहाणि-खेड-कब्बड-मडंब-दोणमुह-पट्टणासम-संबाह-संनिवेसेसु मणुआ भवंति। तं जहा—दगबिइया दगतइया दगसत्तमा दगएक्कारसमा गोअमा गोव्वइआ गिहिधम्मा धम्मचिंतका अविरुद्धविरुद्धवुड्ढसावकप्पभिअओ तेसिं मणुआणं णो कप्पइ इमाओ नव रसविगईओ आहारित्तए। तं जहा—खीरं दहिं णवणीयं सप्पिं तेल्लं फाणियं महुं मज्जं मंसं। णण्णत्थ एक्काए सरसवविगइए। ते णं मणुआ अप्पिच्छा तं चेव सव्वं। णवरं चउरासीइ-वाससहस्साइं ठिई पण्णत्ता ॥९॥

जो ये जीव ग्राम, आकर, नगर, खेट, कर्वट, द्रोणमुख, मडंब, पत्तन, आश्रम, निगम, संवाह, सन्निवेश में मनुष्य के रूप में जन्म लेते हैं, इस

प्रकार हैं : उदक-द्वितीय—एक भात / खाद्य पदार्थ एवं दूसरा जल ऐसे दो द्रव्य का आहार के रूप में सेवन करने वाले, उदक-तृतीय—भात आदि दो द्रव्य तथा तीसरे जल का सेवन करने वाले, उदक-सप्तम—भात आदि छः पदार्थ तथा सातवां जल इन सातों द्रव्यों का आहार रूप में सेवन करने वाले, उदक-एकादश—भात आदि दश द्रव्य और ग्यारहवें जल का सेवन करने वाले, गौतम—विशेष रूप से प्रशिक्षित ठिगने बैल के द्वारा तरह-तरह के मनोरंजक प्रदर्शन प्रस्तुत कर भिक्षा मांगने वाले, गोव्रतिक—गो-सेवा से सम्बन्धित व्रत स्वीकार करने वाले, गृहधर्मी—गृहस्थ धर्म अर्थात् अतिथि-सेवा, दान आदि से सम्बन्धित गृहस्थ धर्म को ही कल्याणप्रद मानने वाले, धर्मचिन्तक, धर्म शास्त्र के पाठक—कथावाचक, अविरुद्ध—विनयाश्रित भक्ति-मार्गी, विरुद्ध—आत्मा, लोक, आदि को अस्वीकार कर बाह्य एवं आभ्यन्तर इन दोनों दृष्टियों से क्रिया-विरोधी, वृद्ध—तापस, श्रावक—धर्म शास्त्र का श्रवण करने वाला, श्रोता ब्राह्मण आदि, उन मनुष्यों ने जो, दूध, दही, मक्खन, घृत, तेल, गुड़, मधु, मद्य, तथा मांस नव विकृतियां अकल्प्य—अग्राह्य मानते हैं, इनमें से सरसों के तेल के अतिरिक्त किसी भी विषय का सेवन नहीं करते, वे मनुष्य बहुत कम इच्छाएँ—आकांक्षाएँ वाले होते हैं।...ऐसे मनुष्य पूर्व वर्णन के अनुरूप मृत्युकाल आने पर देह त्याग कर बाण-व्यन्तर देव होते हैं। वहाँ उन देवों की स्थिति—आयुष्य-परिमाण चौरासी हजार वर्ष का बतलाया गया है ॥९॥

Those living in the villages, mines, towns, etc., etc., whose intake consists of two items including water or three items including water, or seven items including water or eleven items including water, or those who earn their livelihood by using the oxen, who observe vows about cattle, who are sincere householders, who have devotion with humility, who believe in inactivity (a*kiriyāvādī*) and who are *bṛddha-śrāvakas* (or who are *tāpasas* and *brāhmaṇas*), for such men the following items with a distorted taste, viz., milk, curd, butter, ghī, oil, jaggery, honey, wine and meat are prohibited, the only exception being mustard oil. Such men have few desires, the rest as before, the stay is stated to be sixty four thousand years. 9

वानप्रस्थ तापसों का उपपात

Rebirth of forest-dwelling Tāpasa Monks

से जे इमे गंगाकूलगा वाणपत्था तावसा भवंति। तं जहा—होत्तिया पोत्तिया कोत्तिया जण्णई सड्ढई थालई हुंपउट्ठा दंतुक्खलिया उम्मज्जका सम्मज्जका निम्मज्जका संपक्खाला। दक्खिणकूलका उत्तरकूलका संखधमका कूलधमका मिगलुद्धका हत्थितावसा उद्दंडका दिसापोक्खिणो वाकवासिणो अंबुवासिणो विलवासिणो जलवासिणो वेलवासिणो रुक्खमूलिआ अंबुभक्खिणो वाउभक्खिणो सेवालभक्खिणो मूलाहारा कंदाहारा तयाहारा पत्ताहारा पुप्फाहारा बीयाहारा परिसडिय-कंद-मूल-तय-पत्त-पुप्फ-फलाहारा जलाभिसेअ-कढिणगायभूया आयावणाहिं पंचग्गितावेहिं इंगालसोल्लियं कंडुसोल्लियं कंठसोल्लियंपिव अप्पाणं करेमाणा बहूइं वासाइं परियायं पाउणंति। बहूइं वासाइं परियायं पाउणित्ता कालमासे कालं किच्चा उक्कोसेणं जोईसएसु देवेसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति पलिओवमं वाससयसहस्समब्भहिअं ठिई।

जो ये जीव गंगा के किनारे रहनेवाले वानप्रस्थ—वनवासी तापस कई प्रकार के होते हैं, इस प्रकार हैं: श्रद्धा करने वाले, पात्र रखने वाले, कुण्डी धारण करने वाले, फलाहार करने वाले, जल में एक बार डुबकी लगाकर स्नान करने वाले, जल में बार-बार डुबकी लगाकर नहाने वाले, जल में कुछ देर तक डूब कर स्नान करने वाले, मिट्टी आदि के द्वारा शरीर के अवयवों को रगड़ कर स्नान करने वाले, दक्षिण कूलक—गंगा नदी के दक्षिणी तट पर ही रहने वाले, उत्तर कूलक—गंगा नदी के उत्तरी किनारे पर निवास करने वाले, शंखध्मायक—किनारे पर शंख बजा कर भोजन करने वाले, कूलध्मायक—किनारे पर खड़े होकर शब्द करके भोजन करने वाले, मृगलुब्धक—व्याधों की तरह हिरणों का

मांस खाकर जीवन चलाने वाले, हस्थितापस—हाथी का वध कर, उसका मांस खाकर बहुत काल व्यतीत करने वाले, उद्दण्डक—दण्ड को ऊँचा रख कर घूमने वाले, दिशाप्रोक्षी—दिशाओं में पानी छीड़क कर फूल, फल आदि एकत्र करने वाले, वल्कलधारी—वृक्ष की छाल को वस्त्रों की तरह धारण करने वाले, चेलधारी—वस्त्र धारण करने वाले, वृक्षमूलक—वृक्षों के जड़ में निवास करने वाले, अम्बभक्षी—जलाहार करने वाले, वायुभक्षी—हवा का आहार करने वाले, शैवालभक्षी—काँई, सेवार का आहार करने वाले, मूलाहारी—मूल का आहार करने वाले, कन्दाहारी—कन्द का आहार करने वाले, त्वचाहारी—वृक्ष की त्वचा/छाल का आहार करने वाले, पत्राहारी—वृक्षों के पत्तों का आहार करने वाले, पुष्पाहारी—फूलों का आहार करने वाले, बीजाहारी—बीजों का आहार करने वाले, सड़े हुए या अपने आप गिरे हुए, पृथक् हुए कन्द, मूल, छाल, पत्ते, फूल तथा फल का आहार करने वाले, पंचाग्नि की आतापना—अपने चारों ओर अग्नि जला कर एवं पाँचवें सूर्य की आतापना के द्वारा अपने शरीर को अंगारों से पका हुआ सा, भाड़ में भुना हुआ सा, करते हुए या बनाते हुए बहुत वर्षों तक वानप्रस्थ पर्याय का पालन करने वाले, बहुत वर्षों तक वानप्रस्थ पर्याय—अवस्था का पालन कर मृत्यु-काल आने पर शरीर का त्याग कर वे उत्कृष्ट ज्योतिष्क देवों में देव के रूप में उत्पन्न होते हैं। वहाँ उनकी स्थिति एक लाख वर्ष अधिक एक पल्योपम प्रमाण बतलाई गई है।

Those who are forest-dwelling Tāpasa Monks living on the bank of the Gaṅgā, such as, the *hotṛkas*, the clad ones, those who lie on the ground, those who perform sacrifice, those who are respectful, those who keep vessels or *kuṇḍikā-holders*, those who subsist on fruit, those who bathe by taking a dip in water, those who repeat the dips, those who remain under water for some time, those who clean their limbs by rubbing clay, those who live to the south of the Gaṅgā, those who live to the north of the Gaṅgā, those who take food after blowing a conch, those who take food on the bank of the river after making a sound, those who entice a deer, those who live long by subsisting on the carcass of an elephant, those who move about by holding high their stuff, those who sprinkle

water in all directions before collecting fruits and flowers, those who are clad in bark, those who live under water, those who live in caves and cravices, those who make use of cloth, those who live inside water, those who remain at the root of the tree, those who subsist on water, on air, on moss, on root, on trunk, on bark, on leaf, on flower, on seed, on trunk-root-bark-leaf-flower or fruit which is rotten, or has dropped by itself or which is discarded, those who do not take food without bath, those who do not take food till their body is purified by bath, those who expose themselves to five fires and thus make themselves roasted on fire or duly fried, such men, after living for many years and after having attained that stage, die at a certain point in eternal time, to be born among the Jyotiṣka gods as divine persons. The span of their life is a hundred thousand years added to a *palyopama*.

गोतम : आराहगा ?
महावीर : णो इणट्ठे समट्ठे ॥१०॥

गोतम : क्या वे परलोक के आराधक होते हैं ?
महावीर : यह आशय संगत नहीं है, अर्थात् ऐसा नहीं होता है ॥१०॥

Gautama : Bhante ! Do they propitiate the next birth ?
Mahāvira : No, this is not correct. 10

प्रव्रजित श्रमण कान्दर्पिक आदि का उपपात

Rebirth of Initiated Monks, Kāndarpikas and others

से जे इमे जाव...सन्निवेसेसु पव्वइया समणा भवंति । तं जहा—कंदप्पिया कुक्कुइया मोहरिया गीयरइप्पिया नच्चणसीला ।

ते णं एएणं विहारेणं विहरमाणा बहूइं वासाइं सामण्ण-परियायं पाउणंति। बहूइं वासाइं सामण्णपरियायं पाउणित्ता तस्स ठाणस्स अणालोइअ अप्पडिक्कंता कालमासे कालं किच्चा उक्कोसेणं सोहम्मे कप्पे कंदप्पिएसु देवेसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति। तहिं तेसिं गती तहिं तेसिं ठिती...सेसं तं चेव। णवरं पलिओवमं वाससहस्समब्भहियं ठिती ॥११॥

जो ये जीव ग्राम, आकर, नगर, खेट, कर्बट, द्रोणमुख, मडंव, पत्तन, आश्रम, निगम, संवाह, तथा सन्निवेश में मनुष्य के रूप में उत्पन्न होते हैं और जो प्रव्रजित—दीक्षित होकर अनेक रूप में श्रमण होते हैं, जो इस प्रकार हैं: कान्दर्पिक—नानाविध हँसी-मजाक या हास-परिहास करने वाले, कौकुचिक—आँख, मुँह, हाथ, पैर आदि से भाँड़ के समान कुत्सित चेष्टाएँ करते हुए स्वयं हँस कर दूसरों को हँसाने वाले, मौखरिक—असम्बद्ध बोलने वाले, गीतरतिप्रिय—गीतप्रिय व्यक्तियों को चाहने वाले या गान-युक्त क्रीडा में रुचिशील, नर्तनशील—नाचने की प्रकृति वाले, जो अपने-अपने जीवन-क्रम के अनुरूप आचार का पालन करते हुए बहुत वर्षों तक श्रामण्य-पर्याय का पालन करते हैं, बहुत वर्षों तक श्रमण-जीवन का पालन कर अन्तिम समय में उस स्थान—अतिचार दोष सेवन की आलोचना, प्रतिक्रमण नहीं करते हैं अर्थात् गुरुजन के समक्ष आलोचना कर दोषों से निवृत्त नहीं होते हैं, वे मृत्युकाल आने पर शरीर-त्याग कर उत्कृष्ट सौधर्म कल्प में—प्रथम देवलोक में कान्दर्पिक—हास्य क्रीड़ा प्रधान देवों में देव के रूप में उत्पन्न होते हैं। वहाँ उनकी गति, वहाँ उनकी स्थिति—आयुष्य परिमाण, अवशेष वर्णन पूर्व की तरह जानना चाहिये। उनकी स्थिति एक लाख वर्ष अधिक एक पल्योपम की होती है ॥११॥

Those who are born as men in villages, etc., etc., and are initiated into the orders of monks of jesters, fools, talkers, song-lovers, or dancers, such ones who live for many years in their respective orders and then without due confession (*pratikramaṇa*) pass away, are born, on death at some point in eternal time, as the

denizens of the first heaven, the Saudharma Kalpa, among the Kāndarpika gods, the rest as before. The span of their stay there is a hundred thousand years added to a *palyopama*. 11

परिव्राजकों का उपपात

Rebirth of Parivrājaka Monks

से जे इमे जाव...सन्निवेसेसु परिव्वायगा भवंति । तं जहा—संखा जोई कविला भिउच्चा हंसा परमहंसा बहुउदया कुडिव्वया कण्हपरिव्वायगा । तत्थ खलु इमे अट्ठ माहण परिव्वायगा भवंति । तंजहा :

कण्हे अ करकंडे य अंबडे य परासरे ।
कण्हे दीवायणे चेव देवगुत्ते अ णारए ।।

तत्थ खलु इमे अट्ठ खत्तियपरिव्वायया भवंति । तं जहा—

सीलई ससिहारे (य) णग्गई भग्गई तिअ ।
विदेहे रायाराया रायारामे बलेति अ ।।

ते णं परिव्वायगा रिउव्वेद-जजुव्वेद-सामवेय-अहव्वणवेय-इतिहासपंचमाणं णिग्घंटुछट्ठाणं संगोवंगाणं सरहस्साणं चउण्हं वेयाणं सारगा पारगा धारगा वारगा सडंगवी सट्ठितंतविसारया संखाणे सिक्खाकप्पे वागरणे छंदे णिरुत्ते जोतिसामयणे अण्णेसु य बंभण्णएसु अ सत्थेसु सुपरिणिट्ठिया यावि हुत्था ।

जो ये जीव ग्राम, आकर, नगर, खेट, कर्बट, द्रोणमुख, मडंब, पत्तन, आश्रम, निगम, संवाह तथा सन्निवेश में अनेक प्रकार के परिव्राजक होते हैं जो इस प्रकार हैं: सांख्य—पुरुष, प्रकृति, बुद्धि, अहंकार, पंच-

तन्मात्राएँ, एकादश इन्द्रिय, पंच महाभूत इन पच्चीस तत्त्वों में श्रद्धाशील, योगी—हठ योग के अनुष्ठाता, कापिल—कपिल महर्षि को अपनी परम्परा का प्रथम प्रवर्तक मानने वाले, निरीश्वरवादी—सांख्यमत के अनुयायी, भार्गव—भृगु ऋषि-परम्परा के अनुसर्ता, हंस—चार प्रकार के परिव्राजक यति, परमहंस—पर्वत की गुफा, आश्रम, देवकुल आदि में निवास करने वाले और भिक्षार्थ ग्राम में प्रवेश करने वाले परिव्राजक, बहूदक तथा कुटीचर संज्ञक चार प्रकार के यति एवं कृष्ण परिव्राजक—नारायण में भक्तिशील विशिष्ट परिव्राजक, आदि, उन परिव्राजकों में ये आठ ब्राह्मण-परिव्राजक—ब्राह्मण जाति में से दीक्षित परिव्राजक होते हैं, जो इस प्रकार हैं: (१) कृष्ण, (२) करकण्ड, (३) अम्बड़, (४) पाराशर, (५) कृष्ण, (६) द्वैपायन, (७) देवगुप्त, (८) नारद, उन में ये आठ क्षत्रिय-परिव्राजक—क्षत्रिय जाति में से प्रव्रजित अर्थात् दीक्षित परिव्राजक होते हैं, जो इस प्रकार हैं: (१) शीलधी, (२) शशिधर, (३) नग्नक, (४) भग्नक, (५) विदेह, (६) राजराज, (७) राजराम, (८) बल, जो ग्राम में एक रात तथा नगर में पांच रात प्रवास करते थे, उपलब्ध भोगों को स्वीकार करते थे, वे बहूदक कहे जाते थे, जो गृह में वास करते हुए क्रोध, मान, माया, लोभ, मोह तथा अहंकार का त्याग किये रहते थे, उन्हें कुटीचर कहा जाता था, वे परिव्राजक ऋक्, यजु, साम, अथर्वण इन चारों वेदों, पांचवें इतिहास—पुराण और छठे निघण्टु—नाम कोश के अध्येता थे, उन्हें चारों वेदों का सांगोपांग रहस्य बोधपूर्वक परिज्ञान था, वे चारों वेदों के सारक—अध्यापन के द्वारा सम्प्रवर्तक, अथवा स्मारक—औरों को याद कराने वाले, पारग—चारों वेदों के पारगामी, धारक—चारों वेदों को स्मृति में बनाये रखने में सक्षम तथा वेदों के छहों अंगों के विशिष्ट ज्ञाता थे, वे षष्टितन्त्र में विशारद—निपुण थे, संख्यान—गणित विद्या, शिक्षा—ध्वनि विज्ञान—वेद मन्त्रों के उच्चारण के विशिष्ट ज्ञान, कल्प—तथाविध आचार निरूपक शास्त्र या याज्ञिक कर्म काण्ड विधि, व्याकरण—शब्द शास्त्र, छन्द—पिंगल शास्त्र, निरुक्त—वैदिक शब्दों के व्युत्पत्ति मूलक व्याख्या ग्रन्थ, ज्योतिष शास्त्र, तथा अन्य ब्राह्मणों के लिये हितावह शास्त्र या वैदिक कर्मकाण्ड के मुख्य-मुख्य विषय में विद्वानों के विचारों के संकल्पात्मक ग्रन्थ—इन सब में पूर्ण रूप से सुपरिनिष्ठित—अत्यधिक परिपक्व ज्ञानयुक्त थे अर्थात् विशिष्ट पारगामी थे।

And then the Parivrājakas who live in a hamlet etc. of their own, such as the followers of Sāṅkhya, Yoga, Kapila, Bhārgava and many others living in mountain caves, hermitages, temples, etc., ,and visiting the villages for begging alms, the Paramahaṅsas (living on the bank of the rivers or at places visited by others and having discarded their robes), the Bahūdakas (living one night in some village and upto five nights in some township), the Kuṭīcaras (who remain in the household but ever apart from anger, greed and attachment and reject pride) and the Kṛṣṇa Parivrājakas (devotees of Nārāyaṇa) including eight types of Brāhmaṇas, such as Kṛṣṇa, Karakaṇḍa, Amvaḍa, Pārāśara, Kṛṣṇa, Dvīpāyana, Devagupta and Nārada, and eight types of Kṣatriya Parivrājakas. viz., Silai, Sasihara, Naggai, Bhaggai, Videha, Rāyārāya, Rāyārāma and Bala, who are versed in the four *Vedas*, the *Ṛk*, the *Sāma*, the *Yajur* and the *Atharva*, the fifth history (*Purāṇa*) and Geneology, of which they know the essence, of which they have reached the end, and of which they are upholders, who are experts in *Śikṣā*, *Kalpa*, *Vyākaraṇa*, *Chanda*, *Nirukta* and *Jyotiṣa*, the six-fold *Aṅgas*, the *Saṣṭitantra* or *Tantra*, of Kapila, *Gaṇita* or knowledge of Numerals, the commentaries of the *Vedas* known as the *Brāhmaṇas*, in which they are saturated.

ते णं परिव्वायगा दाणधम्मं च सोअधम्मं च तित्थाभिसेअं च आघवेमाणा पण्णवेमाणा परूवेमाणा विहरंति। जण्णं अम्हे किंचि असुई भवति तण्णं उदएण य मट्टिआए अ पक्खालिअं सुई भवति। एवं खलु अम्हे चोक्खा चोक्खायारा सुई सुइसमायारा भवेत्ता अभिसेअजलपूअप्पाणो अविग्घेण सग्गं गमिस्सामो। तेसि णं परिव्वायगाणं णो कप्पइ अगडं वा तलायं वा णइं वा वाविं वा पुक्खरिणीं वा दीहियं वा गुंजालिअं वा सरं वा सागरं वा ओगाहित्तए। णण्णत्थ अद्धाणगमणे।

वे परिव्राजक दान धर्म, शौच धर्म, शारीरिक शुद्धि तथा स्वच्छतामूलक आचार और तीर्थाभिषेक—तीर्थ स्थान का जन समुदाय में कथन करते हुए, विशेष रूप से समझाते हुए और युक्तिपूर्वक सिद्ध करते हुए विचरण करते हैं। उनका मन्तव्य है कि, हमारे मतानुसार जो कुछ भी अशुचि होती हैं अर्थात् अपवित्र प्रतीत हो जाता हैं उसे मिट्टी लगा कर, जल से धो लेने पर पवित्र हो जाता है। इस प्रकार हम स्वच्छ—निर्मल शरीर तथा वेश युक्त और स्वच्छाचार—शुद्ध आचार युक्त हैं, शुचि—पवित्र, शुच्याचार—निर्मल आचार युक्त हैं, अभिषेक—स्नान द्वारा जल से अपनी आत्मा को पवित्र कर निर्विघ्नतया स्वर्ग जायेंगें। उन परिव्राजकों के लिये मार्ग में चलते समय के अतिरिक्त अवट—कुएँ, तालाव, नदी, वापी—बावड़ी/चतुष्कोण जलाशय, पुष्करिणी—कमल युक्त गोलाकार बावड़ी, दीर्घिका—सारणी/विशाल सरोवर, गुंजालिका—वक्राकार से बना हुआ तालाव, सर—जलाशय तथा सागर में प्रवेश करने का कल्प या कल्प्य नहीं है अर्थात् वे मार्ग में चलते समय के सिवाय इनमें प्रविष्ट नहीं होते हैं। ऐसी उनकी मर्यादा है, व्रत है।

Who live on by making offers, by practising purity and taking holy dips, who impart these to others, who propound these saying: "In this manner, we purify our body, our clothes, our practices and hence our soul. By taking ablution with water, we shall go to heaven without difficulty", who, if it is not on their way, do not go to a well, tank, river, pond (with lotus in or with constructed embankment), preserved tank, *guñjālikā*, sea or ocean.

णो कप्पइ सगडं वा जाव...संदमाणिअं वा दुरुहित्ता णं गच्छित्तए। तेसि णं परिव्वायगाणं णो कप्पइ आसं वा हत्थिं वा उट्टं वा गोणिं वा महिसं वा खरं वा दुरुहित्ता णं गमित्तए। तेसि णं परिव्वायगाणं णो कप्पइ नडपेच्छा इ वा जाव मागहपेच्छा इ वा पिच्छित्तए। तेसिं परिव्वायगाणं णो कप्पइ हरिआणं लेसणया वा घट्टणया वा थंभणया वा लूसणया वा उप्पाडणया वा करित्तए।

उन परिव्राजकों को शकट—गाड़ी, स्यन्दमानिका—पुरुष प्रमाण पालकी पर चढ़ कर जाना नहीं कल्पता है। वैसा करना उनके लिये वर्जित है। उन परिव्राजकों को घोड़े, हाथी, ऊँट, बैल, भैंस और गधे पर सवार होकर जाना नहीं कल्पता है अर्थात् वैसा करना उनके लिये अकल्पनीय है। उन परिव्राजकों को नाटक दिखाने वालों के नाटक, तथा स्तुति-गायकों के प्रशस्तिमूलक कार्य-कलापों को देखना, सुनना नहीं कल्पता है। उनके लिये निषिद्ध है। उन परिव्राजकों के लिये वनस्पति का संस्पर्श करना, उन्हें परस्पर मसलना—घिसना, हाथ-पैर आदि द्वारा अवरुद्ध करना, शाखाओं, प्रशाखाओं एवं पत्तों आदि को ऊँचा करना, मोड़ना, उखाड़ना अकल्पनीय है, ऐसा करना उनके लिये सर्वथा वर्जित है।

Who do not take for a ride any type of vehicle, from ordinary carriage, till *syandamānikā*, who do not witness any recreational programme, from *Naṭaprekṣā*, till *Magadhaprekṣā*, who do not unite plants, nor rub, collect, raise or uproot.

तेसिं परिव्वायगाणं णो कप्पइ इत्थिकहा इ वा भत्तकहा इ वा देसकहा इ वा रायकहा इ वा चोरकहा इ वा अणत्थदंडं करित्तए। तेसि णं परिव्वायगाणं णो कप्पइ अयपायाइं वा तउअपायाणि वा तंबपायाणि वा जसदपायाणि वा सीसगपायाणि वा रुप्पपायाणि वा सुवण्णपायाणि वा अण्णयराणि वहुमुल्लाणि वा धारित्तए। णण्णत्थ लाउपाएण वा दारुपाएण वा मट्टिआपाएण वा।

उन परिव्राजकों के लिये स्त्री कथा, भक्त—भोजन कथा, देश कथा, राज कथा, चोर कथा, जनपद कथा जो अपने लिये तथा औरों के लिये निरर्थक एवं हानिप्रद है ऐसी कथाएँ करना नहीं कल्पता है, उनके लिये यह वर्जित है। उन परिव्राजकों के लिये तूंबे, काठ—लकड़ी एवं मिट्टी के पात्रों के अतिरिक्त लोहे, त्रपुक—रांगे, तांबे, जसद, शीशे, चांदी अथवा

स्वर्ण के पात्र या अन्य बहुमूल्य धातुओं के पात्र धारण करना कल्पनीय नहीं है, अर्थात् पूर्वोक्त पात्र रखना उनके लिये निषिद्ध है।

Who do not indulge in any unnecessary gossip about women, meal, country, king or thieves, who do not keep, apart from gourd, wooden and earthen pots, any other made from iron, bell-metal, lead, zinc, silver, gold, or any other which carries high value.

तेसि णं परिव्वायगाणं णो कप्पइ अयबंधणाणि वा तउअ-बंधणाणि वा तंबबंधणाणि जाव...बहुमुल्लाणि धारित्तए। तेसि णं परिव्वायगाणं णो कप्पइ णाणाविहवण्णरागरत्ताइं वत्थाइं धारित्तए णण्णत्थ एक्काए धाउरत्ताए। तेसि णं परिव्वायगाणं णो कप्पइ हारं वा अद्धहारं वा एकावलिं वा मुत्तावलिं वा कणगावलिं वा रयणावलिं वा मुरविं वा कंठमुरविं वा पालंबं वा तिसरयं वा कडिसुत्तं वा दसमुद्दिआणंतकं वा कडयाणि वा तुडियाणि वा अंगयाणि वा केऊराणि वा कुंडलाणि वा मउडं वा चूलामणिं वा पिणद्धित्तए णण्णत्थ एकेणं तंविएणं पवित्तएणं।

उन परिव्राजकों को लोहे (शीशे, चाँदी, सोने आदि) के अथवा दूसरे बहुमूल्यवान् द्रव्य से बंधे—इन सभी से या किसी भी प्रकार से बंधे हुए पात्र धारण करना कल्प्य नहीं है। उनके लिये यह वर्जित है। उन परिव्राजकों को एक धातु से—गेरूए रंग से रंगे हुए गेरूए वस्त्रों के अतिरिक्त दूसरे—तरह-तरह के रंगों से रंगे हुए वस्त्रों को धारण किये रहना नहीं कल्पता है। उन परिव्राजकों को ताँबे के एक पवित्रक—अंगूठी के सिवाय हार, अर्धहार, एकावली, मुक्तावली, कनकावली, रत्नावली, मुखी-हार—हार विशेष, कण्ठमुखी—कंठला / कण्ठ का आभरण विशेष, प्रालम्ब—लम्बी माला, त्रिसरक—तीन लड़ों का हार, कटिसूत्र—करधनी, दशमुद्रिकाएँ—अंगुठियाँ, कटक—कड़े, त्रुटित—तोड़े, अंगद, केयूर—बाजूबन्द,

कुण्डल—कान का भूषण-विशेष, मुकुट एवं चूड़ामणि—रत्नों से निर्मित शिरो-भूषण—शीर्ष पुष्प धारण करना नहीं कल्पता ह। ऐसा करना उनके लिये वर्जित है।

Who do not use any pot with a chain of iron, bell-metal, copper, till any other which carries high value, who do not wear any cloth of any colour except saffron, who do not take, except a copper ring, any other necklace, *ardhahāra*, *ekāvalī*, *muktāvali*, *kanakāvali*, *ratnāvalī*, *murabī*, *kaṇṭha-murabī*, *prālamba*, *trisaraka*, *kaṭisūtra*, ten rings, *kaṭaka*, *truṭita*, *aṅgada*, *keyūra*, *kuṇḍala*, crown or *cūḍāmaṇi* (ornaments decorating the body from head to foot.)

तेसि णं परिव्वायगाणं णो कप्पइ गंथिमवेढिमपूरिमसंघातिमे चउव्विहे मल्ले धारित्तए णण्णत्थ एगेणं कण्णपूरेणं। तेसि णं परिव्वायगाणं णो कप्पइ अगलुएण वा चंदणेण वा कुंकुमेण वा गायं अणुलिंपित्तए णण्णत्थ एक्काए गंगामट्टिआए। तेसि णं कप्पइ मागहए पत्थए जलस्स पडिगाहित्तए। सेऽविय वहमाणे णो चेव णं अवहमाणे। सेऽविय थिमिओदए णो चेव णं कद्दमोदए। सेऽविय बहुपसण्णे णो चेव णं अवहुपसण्णे। सेऽविय परिपूए णो चेव णं अपरिपूए। सेऽविय णं दिण्णे नो चेव णं अदिण्णे। सेऽविय पिवित्तए णो चेव णं हत्थपायचरु-चमसपक्खालणट्ठाए सिणाइत्तए वा।

उन परिव्राजकों को एक कर्णपूर—फूलों से बने कर्ण भूषण के अतिरिक्त गूंथ कर बनाई गई मालाएँ, लपेटने से बनाई गई मालाएँ, फूलों को एक-दूसरे से संयुक्त कर बनाई गई मालाएँ अथवा संहित कर—परस्पर एक-दूसरे में उलझा कर बनाई गई मालाएँ—इन चार प्रकार की मालाओं को धारण किये रहना नहीं कल्पता है, ऐसा करना उनके लिये वर्जित है। उन परिव्राजकों को एकमात्र गंगा की मिट्टी के सिवाय अगरु, चन्दन

अथवा कुंकुम-केशर से शरीर को लिप्त करना नहीं कल्पता है। वैसा करना उनके लिये वर्जित है। उन परिव्राजकों के लिये मगध देश के तोल के अनुसार एक प्रस्थक जल ग्रहण करना कल्पता है। वह भी वहता हुआ हो, एक स्थान पर बँधा हुआ नहीं हो अर्थात् प्रवहमान केवल एक प्रस्थक-परिमाण पानी उनके लिये कल्पनीय है, तालाव, जलाशय आदि का वन्द जल नहीं। वह जल भी यदि निर्मल भूमि का हो, तभी ग्राह्य है, यदि वह जल कीचड़युक्त हो तो वह ग्रहण करने योग्य नहीं है। जल अति स्वच्छ—गन्दा नहीं होने के साथ-साथ वह वहुत प्रसन्न—साफ एवं अतीव निर्मल हो, तभी ग्राह्य है, अन्यथा नहीं, वह परिपूत—वस्त्र से छाना हुआ हो तो उनके ग्राह्य है, विना छाना हुआ नहीं, कोई दाता के द्वारा उन्हें दे तभी ग्राह्य है विना दिया हुआ नहीं। वह जल भी केवल पीने को ही ग्राह्य है, किन्तु हाथ, पैर, भोजन का पात्र, काठ की कुड़छी या चम्मच धोने के लिये या नहाने के लिये नहीं।

Who do not place on their body, except one on the ears made from flowers, any other ornament made from threaded flowers, or flowers wrapped together or flowers threaded in a thin stick or flowers whose stalks are entangled with one another, who do not rub their bodies, except with the Gaṅgā clay, with any other, *agaru*, sandal or *kumkum*, who do not drink water more than a *Māgadha prasthaka* (a weight), that too from a flowing stream, not a stagnant pool, with a pure soil underneath, not with moss, absolutely clean, not dirty, passed through cloth, not otherwise, offered by some one, not usurped, just to drink, not to wash one's hands, feet, vessels, etc. not to bathe.

तेसि णं परिव्वायगाणं कप्पइ मागहए अद्धाढए जलस्स पडिग्गाहित्तए। सेऽविय वहमाणे णो चेव णं अवहमाणे। जाव...णो चेव णं अदिण्णे। सेऽविय हत्थपायचरुचमस-पक्खालणट्ठयाए णो चेव णं पिवित्तए सिणाइत्तए वा।

उन परिव्राजकों के लिये मगध देश के तोल के अनुसार आधा आढक जल लेना कल्पता है। वह जल भी वहता हुआ हो, एक स्थान पर बन्द या बंधा हुआ नहीं अर्थात् वहती हुई नदी का आधा आढक परिमाण जल लेना उनके लिये कल्पनीय है।...यावत् बिना दिया हुआ (जल) ग्राह्य नहीं है अर्थात् पीने के लिये कल्प्य नहीं है। वह जल भी केवल हाथ, पैर, भोजन का पात्र, चम्मच या काठ की कुड़छी, धोने के लिये ग्राह्य है, पीने के लिये अथवा नहाने के लिये नहीं।

Who are allowed to take half a *Māgadha āḍhaka* water, that too from a flow, not a pool, till not ungiven, to wash one's hands, feet, vessels, etc., but not to drink nor to bathe.

ते णं परिव्वायगा एयारूवेणं विहारेणं विहरमाणा बहूइं वासाइं परियायं पाउणंति। बहूइ वासाइं परियायं पाउणित्ता कालमासे कालं किच्चा उक्कोसेणं बंभलोए कप्पे देवत्ताए उववत्तारो भवंति। तहिं तेसिं गई तहिं तेसिं ठिई दस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। सेसं तं चेव ॥१२॥ सू० ३८ ॥

वे परिव्राजक इस प्रकार की चर्या अथवा आचार द्वारा विचरण करते हुए बहुत वर्षों तक पर्याय—परिव्राजक धर्म का पालन करते हैं। परिव्राजक-पर्याय का पालन कर मृत्यु काल आने पर शरीर त्यागकर उत्कृष्ट ब्रह्मलोक कल्प में—पांचवें स्वर्ग में देव रूप से उत्पन्न होते हैं। प्राप्त देवलोक के अनुरूप उनकी गति और स्थिति होती है। वहाँ उनकी स्थिति—आयुष्य परिमाण दस सागरोपम है, ऐसा बतलाया गया है। अवशेष वर्णन पूर्ववत् जानना चाहिये ॥ १२ ॥ सू० ३८ ॥

The Parivrājakas living like this, fully bearing this state for many a year, at a certain point in the eternal time are born again in Brahmaloka as celestial beings. Their

span of stay there is as long as ten *sāgaropamas*. The rest as before. 12, Sū. 38

अम्बड़ परिव्राजक के सात सौ शिष्य

Seven Hundred Disciples of Ambaḍa Parivrājaka

तेणं कालेणं तेणं समएणं अम्मडस्स परिव्वायगस्स सत्त अंतेवासिसयाइं गिम्हकालसमयंसि जेट्ठामूलमासंसि गंगाए महानईए उभओकूलेणं कंपिल्लपुराओ णयराओ पुरिमतालं णयरं संपट्ठिया विहाराए ।

उस काल (वर्तमान अवसर्पिणी काल) उस समय (चतुर्थ आरे में जब प्रभु महावीर सदेह विद्यमान थे) एक बार जब ग्रीष्म काल था, ज्येष्ठ के महीने में अम्बड़ परिव्राजक के सात सौ अन्तेवासी—शिष्य गंगा महानदी के दो किनारों से काम्पिल्यपुर नामक नगर से पुरिमताल नामक नगर को जाने के लिये रवाना हुए ।

In that period at that time, in the month of Jaiṣṭha during summer, seven hundred disciples of Ambaḍa started from Kampilyapura to reach Purimatāla walking on both the banks of the Gaṅgā.

तए णं तेसिं परिव्वायगाणं तीसे अगामियाए छिण्णोवायाए दीहमद्धाए अडवीए कंचि देसंतरमणुपत्ताणं से पुव्वग्गहिए उदए अणुपुव्वेणं परिभुंजमाणे झीणे ।

उसके बाद वे परिव्राजक एक ऐसे निर्जन वन में पहुँच गये, जहाँ कोई गाँव नहीं था, न व्यापारियों के काफिले थे, न गोकुल—गायों के समूह थे, और न गोवृन्द की निगरानी करने वाले गोपालकों का आगमन था, जिसके

मार्ग लम्बे एवं बड़े ही विकट थे। वे अटवी का कुछ भाग पार कर पाये थे कि चलते समय पहले ग्रहण किया हुआ जल बार-बार पीते-पीते क्रमशः समाप्त हो गया।

Then the said Parivrājakas reached a certain part of a long forest, which had no village and where neither roving merchants nor wandering cattle halted to take rest. Being taken again and again at the outset, the water supply was exhausted.

तए णं ते परिव्वायगा झीणोदगा समाणा तण्हाए पारब्भमाणा पारब्भमाणा उदगदातारमपस्समाणा अण्णमण्णं सद्दावेंति। सद्दावित्ता एवं वयासी—एवं खलु देवाणुप्पिया! अम्हं इमीसे अगामिआए जाव...अडवीए कंचि देसंतरमणुपत्ताणं से उदय जाव...झीणे तं सेयं खलु देवाणुप्पिया! अम्हं इमीसे अगामियाए जाव...अडवीए उदगदातारस्स सव्वओ समंता मग्गणगवेसणं करित्तए।

तब वे परिव्राजक, जिनके पास का पानी समाप्त हो गया था, वे प्यास से व्याकुल हो गये थे। कोई जलदाता दिखाई नहीं दिया। वे एक दूसरे को सम्बोधित कर कहने लगे—अर्थात् वे परस्पर बातें करने लगे पुकार कर इस प्रकार कहने लगे—हे देवानुप्रियों! हम ऐसे ग्राम रहित जंग के किसी भाग में आ पहुँचे हैं, हम कुछ ही भाग पार कर पाये थे कि हमारे पास जो पानी था, वह पीते-पीते क्रमशः समाप्त हो गया, अतएव हे देवानुप्रियों! हमारे लिये यही श्रेयस्कर है कि हम इस ग्राम रहित निर्जन वन में एक साथ चारों दिशाओं में चारों ओर पानी देने वाले की मार्गणा-गवेषणा—खोज करें। इस प्रकार उन्होंने परस्पर एक-दूसरे से चर्चा कर यह निश्चय किया। यह निश्चय कर उन्होंने उस ग्राम रहित वन में सभी दिशाओं में चारों ओर एक साथ जलदाता की मार्गणा-गवेषणा—खोज की।

Their water supply being exhausted, and their being none within visibility who could replenish their supply, they called one another and spoke as follows : "Oh beloved of the gods ! We have reached a certain part of this forest which has no village nor any halting station for roving merchants or wandering cattle, our water supply is exhausted. So, oh beloved of the gods ! It is advisable that we in this village-less forest launch a search for some donor who may offer us water." Thus they heard from one another the same words repeated, and having heard, they launched a search for a donor of water in that village-less forest.

त्तिकट्टु अण्णमण्णस्स अंतिए एअमट्ठं पडिसुणंति । पडिसुणित्ता तीसे अगामियाए जाव...अडवीए उदगदातारस्स सव्वओ समंता मग्गणगवेषणं करेइ । करित्ता उदगदातारमलभमाणा दोच्चंपि अण्णमण्णं सद्दावेंति । सद्दावेत्ता एवं वयासी—इह णं देवाणुप्पिया ! उदगदातारो णत्थि । तं णो खलु कप्पइ अम्हं अदिण्णं गिण्हित्तए । अदिण्णं सातिज्जित्तए । तं मा णं अम्हे इयाणिं आवइकालंमि अदिण्णं गिण्हामो अदिण्णं सादिज्जामो । मा णं अम्हं तवलोवे भविस्सइ । तं सेयं खलु अम्हं देवाणुप्पिया ! तिदंडयं कुंडियाओ य कंचणियाओ य करोडियाओ य भिसियाओ य छण्णालए य अंकुसए य केसरियाओ य पवित्तए य गणेत्तियाओ य छत्तए य वाहणाओ य पाउयाओ य धाउरत्ताओ य एगंते एडित्ता गंगं महाणइं ओगाहित्ता वालुअसंथारए संथरित्ता संलेहणाझोसियाणं भत्तपाणपडियाइक्खियाणं पाओवगयाणं कालं अणवकंखमाणाणं विहरित्तए ।

वैसा कर—खोज करने पर भी जलदाता नहीं मिला । वे फिर परस्पर एक दूसरे को सम्बोधित कर इस प्रकार कहने लगे—देवानुप्रियों ! यहाँ कोई जलदाता नहीं है, विना दिया हुआ लेना, सेवन करना हमारे लिये कल्पनीय नहीं है—ग्राह्य नहीं है और न अदत्त—विना दिया हुआ भोगने का ही है । इसलिये

हम इस समय—आपत्ति काल में भी अदत्त का ग्रहण नहीं करें, सेवन न करें तो हमारे व्रत का लोप—भंग नहीं होगा। अतः हे देवानुप्रियों! हमारे लिये श्रेयस्कर है कि हम त्रिदण्ड—तीन दण्डों अथवा वृक्ष की शाखाओं को एक साथ मिला कर या बांध कर बनाया गया एक दण्ड, कमंडलु, काञ्चनिकाएँ—रुद्राक्ष की मालाएँ, करोटिकाएँ—मिट्टी के पात्र-विशेष, वृषिकाएँ—बैठने की पटड़िया, षन्नालिकाएँ—त्रिकाष्टिकाएँ, अंकुशक—देवार्चन के लिये वृक्ष के पत्तों को खींचने का साधन, केशरिकाएँ—सफाई करने, पोंछने आदि के उपयोग में लेने योग्य वस्त्र-खण्ड, पवित्रिकाएँ—तांबे की अंगूठिकाएँ—अंगूठियां, गणेत्रिकाएँ—हस्ताभरण-विशेष-हाथों में धारण करने हेतु रुद्राक्ष की मालाएँ, छत्र—छातें, पादुकाएं—काठ की खडाऊएँ, धातुरक्त गेरूए—रंग की धोतियां, एकान्त में छोड़ कर गंगा महानदी को पार कर के बालू का संस्तारक बिछौना तैयार कर संलेखनापूर्वक—शरीर एवं कषायों को—विराधक संस्कारों को क्षीण करते हुए, आहार-पानी का त्यागकर, कटे हुए वृक्ष के समान निश्चेष्टावस्था स्वीकार कर मृत्यु की आकांक्षा—इच्छा न करते हुए शान्तचित्त से संस्थित रहें।

When they did not find anyone who could replenish their water supply, again they started talking among themselves which was as follows: "Oh beloved of the gods! There is no one here who could give us water. Our code does not permit us to accept water which is not offered nor to use such water. Under these circumstances, even in this difficult time, let us not accept water, let us not use water. Then our vow will remain untransgressed. Oh beloved of the gods! It is advisable, therefore, that we discard at some lonely place our triple staff, water pot, *rudrākṣa* garland, earthen bowls, wooden seat, *ṣannālaka*, angle to pull down leaves to worship with, duster, copper ring, bangle, umbrella, sandals and our saffron cloth, cross through the Gaṅgā or enter into the river, make use of sand as our bed, reduce our consciousness of body and other objects, give up our food and drink, and stay with a tranquil mind, tree-like, devoid of movement, not desiring for death."

त्तिकट्टु अण्णमण्णस्स अंतिए एअमट्ठं पडिसुणंति। पडिसुणित्ता तिदंडए य जाव...एगंते एडेइ। एडित्ता गंगं महाणइं ओगाहेंति। ओगाहित्ता वेलुआसंथारयं दुरुहिंति वा। दुरुहित्ता पुरत्थाभिमुहा संपलियंकनिसन्ना करयल जाव...कट्टु एवं वयासी—

इस प्रकार यह बात एक-दूसरे से कर्णोपकर्ण से सुनी। ऐसा सुन कर—उन्होंने ऐसा तय कर त्रिदण्ड...यावत् आदि अपने उपकरण एकान्त में छोड़—डाल दिये। वैसा कर गंगा-महानदी में प्रवेश किया। फिर बालू का संस्तार—बिछौना तैयार किया। संस्तारक तैयार कर वे उस पर अवस्थित हुए। अवस्थित होकर पूर्व दिशा की ओर अभिमुख हो, पद्मासन में बैठे। बैठ कर दोनों हाथ जोड़ कर इस प्रकार बोले—

By the words of the mouth, this decision reached everybody. Having heard this, they discarded the triple staff, etc. Having done so, they entered into the great river Gaṅgā. They prepared their bed out of sand. They sat on it. They sat in the *padmāsana* posture with their faces turned towards the east and submitted as follows with folded hands—

णमोऽत्थु णं अरहंताणं जाव...संपत्ताणं। णमोऽत्थु णं समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव...संपाविउकामस्स णमोऽत्थु णं अम्मडस्स परिव्वायगस्स अम्हं धम्मायरियस्स धम्मोवदेसगस्स।

अर्हत्—देव, इन्द्र आदि द्वारा पूजित या कर्म-शत्रुओं के नाशक...यावत् सिद्धावस्था नामक स्थिति प्राप्त किये हुए—सिद्धों को नमस्कार हो। श्रमण—घोर तप, अध्यात्म साधना रूप श्रम में निरत, भगवान्—आध्यात्मिक ऐश्वर्य सम्पन्न, महावीर—उपद्रवों एवं विघ्नों के बीच साधना-मार्ग पर वीरतापूर्वक अविचल भाव से गतिशील, श्रमण भगवान्

महावीर को, जो सिद्धावस्था प्राप्त करने में समुद्यत हैं, हमारा नमस्कार हो, हमारे धर्माचार्य, धर्मोपदेशक अम्बड़ परिव्राजक को हमारा नमस्कार हो।

"Bow we to the Victors / Arihantas, till the Liberated Souls. Bow we to Sramaṇa Bhagavān Mahāvīra who is about to be liberated. Bow we to Parivrājaka Ambaḍa, our spiritual master, spiritual guide.

पुव्विं णं अम्हे अम्मडस्स परिव्वायगस्स अंतिए थूलगपाणाइ—वाए पच्चक्खाए जावज्जीवाए मुसावाए अदिण्णादाणे पच्चक्खाए जावज्जीवाए। सव्वे मेहुणे पच्चक्खाए जावज्जीवाए। थूलए परिग्गहे पच्चक्खाए जावज्जीवाए।

पहले हमने अम्बड़ परिव्राजक के निकट—उनके साक्ष्य से स्थूल प्राणातिपात—स्थूल हिंसा, असत्य, चोरी का जीवन भर प्रत्याख्यान—त्याग किया था। अब सब प्रकार के अब्रह्मचर्य का जीवन भर के लिये परित्याग करते हैं तथा स्थूल परिग्रह का जीवन भर के लिए त्याग करते हैं।

"Earlier, we had renounced for good to our spiritual master, Amvaḍa, injury to living beings in general, falsehood in general, usurpation in general, but now we renounce for good all sex behaviour in general, accumulation in general.

इयाणिं अम्हे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए सव्वं पाणाइवायं पच्चक्खामो जावज्जीवाए। एवं जाव···सव्वं परिग्गहं पच्चक्खामो जावज्जीवाए। सव्वं कोहं माणं मायं लोहं पेज्जं दोसं कलहं अब्भक्खाणं पेसुण्णं परपरिवायं अरइरइं मायामोसं मिच्छादंसणसल्लं अकरणिज्जं जोगं पच्चक्खामो जावज्जीवाए।

सव्वं असणं पाणं खाइमं साइमं चउव्विहंपि आहारं पच्चक्खामो जावज्जीवाए ।

हम इस समय श्रमण भगवान् महावीर के साक्ष्य से सब प्रकार की हिंसा का जीवन भर के लिये त्याग करते हैं। इसी प्रकार...यावत् सब प्रकार के परिग्रह का जीवन भर के लिये त्याग करते हैं। सब प्रकार के क्रोध, मान, माया, लोभ, प्रेम—अव्यक्त माया या रोचक भाव, द्वेष—अप्रगट मान या अप्रीति रूप भाव, कलह—लड़ाई-झगड़ा, अभ्याख्यान—मिथ्यापूर्ण दोषारोपण, पैशुन्य—चुगली, होते-अनहोते दोषों का प्रगटीकरण, पर-परिवाद—निन्दा, रति—असंयम में रुचि दिखाना, अरति—संयम में अरुचि रखना, मायामृषा—छलपूर्वक झूठ बोलना, मिथ्या दर्शन शल्य—मिथ्याविश्वास रूप कांटा, अकरणीय योग—नहीं करने योग्य मन, वचन एवं शरीर की प्रवृत्ति का जीवन भर के लिये त्याग करते हैं। अशन—भोज्य पदार्थ, पान—पानी, खादिम—फल, मेवा आदि पदार्थ, स्वादिम—पान, सुपारी, मुखवास का पदार्थ—इन चार प्रकार के आहार का जीवन भर के लिये त्याग करते हैं।

"Now to Śramaṇa Bhagavān Mahāvīra we renounce injury to life in all respects, till all accumulation, all types of anger, pride, attachment, greed, malice, infight,...till the thorn of wrong faith, we renounce all activities not worth perpetrating we renounce all food, drink, dainties and delicacies, and that for good.

जंपि य इमं सरीरं इट्ठं कंतं पियं मणुण्णं मणामं थेज्जं वेसासियं संमतं बहुमतं अणुमतं भंडकरंडगसमाणं मा णं सीयं मा णं उण्हं मा णं खुहा मा णं पिवासा मा णं वाला मा णं चोरा मा णं दंसा मा णं मसगा मा णं वातियपित्तियसंनिवाइयविविहा रोगातंका परीसहोवसग्गा फुसंतु—त्ति कट्टु एयंपि णं चरिमेहिं ऊसासणीसासेहिं वोसिरामि ।

यह जो शरीर इष्ट—वल्लभ, कान्त—सुन्दर, प्रिय—प्यारा, मनोज्ञ—सुन्दर, मनोम—मन में बसा रहने वाला, प्रेय—अतिशय प्रीति के योग्य, प्रेज्य—विशेष पूजनीय, वैश्वासिक—विश्वसनीय, सम्मत—अभिमत, बहुमत—बहुत माना हुआ, अनुमत, आभूषणों की पेटी के सदृश प्रीतिकर है, कहीं इसे सर्दी न लग जाए, इसे गर्मी न लग जाए, यह भूखा न रह जाए, कहीं यह प्यासा न रह जाए, कहीं इसे सांप न डस ले, कहीं यह चोरों से पीड़ित न हो जाए, इसे डांस न काटें—कष्ट न पहुँचाए, मच्छर न काटें, वात, पित्त (कफ), सन्निपात आदि जनित विविध रोगों से आतङ्कित न हो जाए, इसे परीषह—क्षुधा, पिपासा आदि कष्ट, उपसर्ग देव, मानव कृत संकट सहना न पड़े, जिसके लिये प्रत्येक समय ऐसा ध्यान रखा जाता है, उस शरीर का हम अन्तिम उच्छ्वास—निःश्वास तक व्युत्सर्जन कर देते हैं अर्थात् हम उससे अपनी ममता हटाते हैं।

"And this our body which is covetable, delicate, beautiful, worth loving, worthy of confidence, respected by self, respected by many, dear as a casket of ornaments, this our body for which we have been ever-vigilant, lest it should be exposed to cold weather, to hot weather, it should suffer from hunger, from thirst, it should be troubled by the reptiles, it should be robbed by thieves, it should be bitten by the drones and mosquitos, it should be the victim of diseases, or it should be made to bear hardships and troubles inflicted by the gods, this our body we throw out by breathing the final breath."

त्ति कट्टु संलेहणाझूसणाझूसिया भत्तपाणपडियाइक्खिया पाओवयगा कालं अणवकंखमाणा विहरंति। तए णं ते परिव्वायगा बहूइं भत्ताइं अणसणाए छेदेंति। छेदित्ता आलोइअ पडिक्कंता समाहिपत्ता कालमासे कालं किच्चा बंभलोए कप्पे देवत्ताए उववणा। तहिं तेसिं गई....दस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। परलोगस्स आराहगा। सेसं तं चेव ॥१३॥ सू० ३९॥

इस प्रकार संलेखना के द्वारा जिनके शरीर और कषाय ये दोनों ही कृश हो रहे थे, उन परिव्राजकों ने आहार तथा पानी का त्याग कर दिया। कटे हुऐ वृक्ष जैसी निश्चेष्टावस्था स्वीकार कर मृत्यु की कामना न करते हुए शान्तभाव से वे अवस्थित रहे। तब उन परिव्राजकों ने बहुत से भक्त—चारों प्रकार के आहार (अशन, पान, खादिम और स्वादिम) अनशन से छिन्न किए अर्थात् अनशन द्वारा चारों प्रकार के आहारों से सम्बन्ध विच्छेद कर दिया या बहुत से भोजन-काल अनशन—अनाहार द्वारा व्यतीत किए। वैसा कर दोषों की आलोचना की अर्थात् दोषों का निरीक्षण एवं परीक्षण किया। उनसे प्रतिक्रान्त—परावृत हुए अर्थात् उन दोषों से हटे। समाधि—शान्ति, चित्त-विशुद्धि दशा प्राप्त की। मृत्यु-समय आने पर शरीर त्याग कर ब्रह्मलोक कल्प में देव के रूप में उत्पन्न हुए। प्राप्त देवलोक के अनुरूप उनकी गति बतलाई गई है। उनकी स्थिति—आयुष्य-परिमाण दश सागरोपम का बतलाया गया है। वे परलोक के आराधक हैं। अवशेष वर्णन पूर्ववत जानना चाहिये॥ १३॥ सू० ३९॥

So saying, they gave up their consciousness of the physical existence, all sorts of food and drink and became motionless like a tree without coveting for death. The said Parivrājakas thus passed many a meal-time without food, and then having kept carefully apart from lapses and being in a totally tranquil state of mind, they passed away at certain point in the eternal time, to be born as celestial beings in Brahmaloka, with a span of stay as long as ten *sāgaropamas*, with propitiation of life thereafter, the rest as before. 13, Su. 39

अम्बड़ परिव्राजक

Amvaḍa Parivrājaka

गौतम: बहूजणे णं भंते! अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ एवं भासइ एवं पण्णवेइ एवं परूवेइ—एवं खलु अम्मडे परिव्वायए

कंपिल्लपुरे णयरे घरसते आहारमाहरेइ ; घरसए वसहिं उवेइ । से कहमेयं भंते ! एवं ?

महावीर : गोयमा ! जण्णं से बहुजणो अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ जाव...एवं परूवेइ—एवं खलु अम्मडे परिव्वायए कंपिल्लपुरे जाव...घरसए वसहि उवेइ सच्चे णं एसमट्ठे । अहं पि णं गोयमा ! एवमाइक्खामि जाव...एवं परूवेमि—एवं खलु अम्मडे परिव्वायए जाव...वसहिं उवेइ ।

गौतम : हे भगवन् ! बहुत से व्यक्ति परस्पर एक-दूसरे से इस प्रकार कहते हैं, विशेष रूप से बोलते हैं, बतलाते हैं कि अम्बड़ परिव्राजक काम्पिल्यपुर नगर में सौ घरों में आहार करता है। वह सौ घरों में निवास करता है। अर्थात् वह एक ही समय में सौ घरों में आहार करता हुआ एवं सौ घरों में निवास करता हुआ देखा जाता है। तो क्या भगवन् ! यह बात ऐसी ही है ?

महावीर : गौतम ! बहुत से मनुष्य परस्पर में एक-दूसरे से जो इस प्रकार कहते हैं, बोलते हैं, ज्ञापित करते हैं—बतलाते हैं कि अम्बड़ परिव्राजक काम्पिल्यपुर में सौ घरों में आहार करता है, सौ घरों में निवास करता है—यह बात सत्य है। गौतम ! मैं भी ऐसा ही कहता हूँ, प्ररूपित करता हूँ।

Gautama : *Bhante* ! Many say like this, assert this, propound this, establish this that Amvaḍa Parivrājaka takes his food from a hundred households in Kampilyapura and lives in a hundred homes. So, *Bhante* ! How is it ?

Mahāvīra : Gautama ! What many people say about Amvaḍa's living in a hundred homes, etc, is correct. I too say like this, till establish this, till in a hundred homes.

गौतम : से केणट्ठे णं भंते ! एवं वुच्चइ—अम्मडे परिव्वायए जाव...वसहिं उवेइ ?

महावीर : गोयमा ! अम्मडस्स णं परिव्वायस्स पगइ-भद्दयाए जाव...विणीययाए छट्ठंछट्ठेणं अनिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं उड्ढं बाहाओ पगिज्झिय पगिज्झिय सूराभिमुहस्स आतावणभूमीए आतावेमाणस्स सुभेणं परिणामेणं पसत्थेहिं अज्झवसाणेहिं पसत्थाहिं लेसाहिं विसुज्झमाणीहिं अन्नया कयाइं तदावरणिज्जाण कम्माणं खओवसमेणं ईहावूहामग्गणगवेसणं करेमाणस्स वीरियलद्धीए वेउव्वियलद्धीए ओहिणाणलद्धीए समुप्पण्णाए। तए णं से अम्मडे परिव्वायए ताए वीरियलद्धीए वेउव्वियलद्धीए ओहिणाणलद्धीए समुप्पण्णाए जणविम्हावणहेउं कंपिल्लपुरे घरसए जाव...वसहि उवेइ। से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—अम्मडे परिव्वायए कंपिल्लपुरे णयरे घरसए जाव...वसहिं उवेइ।

गौतम : भगवन् ! किस कारण से इस प्रकार कहा जाता है कि अम्बड़ परिव्राजक...यावत् सौ घरों में निवास करता है ?

महावीर : गौतम ! अम्बड़ परिव्राजक प्रकृति भद्र—स्वभावतः सौम्य, व्यवहारशील अर्थात् परोपकार परायण...यावत् विनीत—विनयशील है। उसने निरन्तर बेले-बेले का—दो-दो दिनों का उपवास रूप तपश्चर्या करते हुए, अपनी दोनों भुजाएँ ऊँची उठाये, सूरज के सामने मुँह किये आतापना-भूमि में आतापना लेते हुए तप के अनुष्ठान में संलग्न है। फलतः शुभ परिणाम—पुण्यात्मक-परिणति तथा प्रशस्त अध्यवसाय—उत्तम संकल्प, विशुद्ध—निर्मल होती हुई प्रशस्त लेश्याओं के द्वारा अर्थात् आत्मपरिणामों के कारण, उसके वीर्य लब्धि, वैक्रिय लब्धि तथा अवधिज्ञान लब्धि के आवरक कर्मों का क्षयोपशम हुआ। ईहा—यह क्या है ?—इस प्रकार जिज्ञासात्मक मति या सत्य अर्थ के आलोचन में अभिमुख बुद्धि, अपोह—यह इसी प्रकार है, ऐसी निश्चयात्मक मति, मार्गणा—अन्वय, धर्मोन्मुख चिन्तन—वस्तुगत धर्म का आलोचन, ऐसा

चिन्तन, गवेषण—व्यतिरेक धर्मोन्मुख चिन्तन—पदार्थ में जो धर्म नहीं है, उनके आलोचन रूप बुद्धि—ऐसा चिन्तन करते हुए उसको (अम्बड़ परिव्राजक को) किसी दिन वीर्य-लब्धि—शक्ति विशेष, वैक्रिय-लब्धि—भिन्न-भिन्न रूप बनाने का सामर्थ्य, तथा अवधिज्ञान रूपी पदार्थों को सीधे आत्मा द्वारा जानने की विशेष योग्यता प्राप्त हो गई है। इसलिये जन-विस्मापन हेतु—मनुष्यों को आश्चर्य-चकित करने के लिये, इनके द्वारा वह काम्पिल्यपुर में एक ही समय में सौ घरो में आहार करता है, सौ घरों में निवास करता है। गौतम! यही वस्तुस्थिति है। अतएव अम्बड़ परिव्राजक के सम्बन्ध में—सौ घरों में आहार करने एवं सौ घरों में निवास करने की बात कही जाती है।

Gautama : *Bhante* ! Why do you say so ?

Mahāvīra : Gautama ! Because of his inherent humility, till politeness, because of his incessant fasting missing six meals at a time, because of his hard penance with hands raised skyward and face turned towards the sun from an elevated ground, Amvaḍa has auspicious outcome, wholesome perseverance and purified tinges by dint of which he is able to exhaust and tranquilise his *karma* enshrounding extra-sensory knowledge, to acquire knowledge to enquire and knowledge to stabilise, knowledge about the nature of things and about non-nature of things, and this gives him power to act with valour and to transform and with them, extra-sensory knowledge. Having acquired these powers plus extra sensory knowledge, Amvaḍa, in order to stupefy people, takes food from a hundred homes, till resides in a hundred homes. Hence I say, till in a hundred homes.

गौतम : पहू णं भंते ! अम्मडे परिव्वायए देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए ?

महावीर—णो इणट्ठे समट्ठे, गोयमा ! अम्मडे णं परिव्वायए समणोवासए अभिगयजीवाजीवे जाव...अप्पाणं भावेमाणे

विहरइ णवरं ऊसियफलिहे अवंगुदुवारे चियत्तंतेउरघरदारपवेसी ण वुच्चइ।

गौतम : हे भगवन्! अम्वड़ परिव्राजक देवानुप्रिय—आपके पास मुण्डित होकर—दीक्षित होकर आगार अवस्था—गृहवास से निकल कर, अनगार अवस्था श्रमण जीवन प्राप्त करने में समर्थ है या नहीं ?

महावीर : गौतम! ऐसा संभव नहीं है। अर्थात वह श्रमण धर्म में दीक्षित नहीं होगा। अम्वड़ परिव्राजक श्रमणोपासक—श्रावक है। उसने जीव, अजीव आदि पदार्थों के स्वरूप को समझ लिया है।... यावत् वह अपनी आत्मा को (संयम तथा तप से) भावित—अनुप्राणित करता हुआ विचरण करता है। उच्छ्रित-स्फटिक—जिसके घर के किवाड़ों में आगल नहीं लगी हुई है, अप्रावृत-द्वार—जिसके घर का दरवाजा खुला रहता हो, त्यक्तान्तःपुर-गृहद्वार-प्रवेश—सभ्य जनों के आवागमन के कारण घर के भीतरी भाग में उनका प्रवेश जिसे प्रिय लगता हो—ये तीन विशेषण अम्वड़ परिव्राजक के लिये प्रयोज्य नहीं है—लागू नहीं होते हैं। क्योंकि अम्बड़ परिव्राजक संन्यासी के वेष में श्रमणोपासक हुआ। गृही से नहीं, वह स्वयं भिक्षुक था। उसके घर नहीं था।

Gautama : *Bhante*! Is it possible for Amvaḍa Parivrājaka to get himself tonsured by thy hand, give up his home and join the order of monks ?

Mahāvīra : No, it is not. But, Gautama, Amvaḍa Parivrājaka will be a worshipper of the Śramaṇa path and live on enriching himself with the knowledge of soul and matter, and be without a home, etc. (applicable to a householder follower).

अम्मडस्स णं परिव्वायगस्स थूलए पाणाइवाए पच्चक्खाए जावज्जीवाए जाव...परिग्गहे णवरं सव्वे मेहुणे पच्चक्खाए जावज्जीवाए।

अम्वड़ परिव्राजक ने जीवन भर के लिये स्थूल प्राणातिपात—त्रस जीव की संकल्पपूर्वक की जाने वाली हिंसा...यावत् स्थूल परिग्रह का प्रत्याख्यान किया तथा जीवन भर के लिये सभी प्रकार के अब्रह्मचर्य का प्रत्याख्यान किया।

Amvaḍa is renounced of slaughter in general, falsehood in general, usurpation in general, sex in general and accumulation of property in general, speciality being that he is renounced of sex for life (being already a monk).

अम्मडस्स णं णो कप्पइ अक्खसोतप्पमाणमेत्तंपि जलं सयराहं उत्तरित्तए णण्णत्थ अद्धाण-गमणेणं। अम्मडस्स णं णो कप्पइ सगडं एवं चेव भाणियव्वं जाव...णण्णत्थ एगाए गंगामट्टियाए।

अम्वड़ परिव्राजक को मार्ग गमन के सिवाय गाड़ी की धुरी-प्रमाण पानी में भी अकस्मात् उतरना नहीं कल्पता है। अम्वड़ को गाड़ी आदि यानों पर सवार होना नहीं कल्पता है।...यहाँ से लेकर महानदी गंगा की मिट्टी के लेप तक का समग्र वर्णन पूर्व वर्णन के अनुरूप समझ लेना चाहिये।

Going his own way apart, Amvaḍa does even not put his steps into water no deeper than a wheel's frame. He will not use even an ordinary vehicle, to be repeated till except for the Gaṅgā clay.

अम्मडस्स णं परिव्वायगस्स णो कप्पइ आहाकम्मिए वा उद्देसिए वा मीसजाए इ वा अज्झोअरए इ वा पूइकम्मे इ वा कीयगडे इ वा पामिच्चे इ वा अणिसिट्ठे इ वा अभिहडे इ वा

ठइत्तए इ वा रइत्तए इ वा कंतारभत्ते इ वा दुब्भिक्खत्ते इ वा पाहुणगभत्ते इ वा गिलाणभत्ते इ वा वद्दलियाभत्ते इ वा भोत्तए वा पाइत्तए वा। अम्मडस्स णं परिव्वायगस्स णो कप्पइ मूल-भोयणे वा जाव...बीयभोयणे वा भोत्तए वा पाइत्तए वा।

अम्वड़ परिव्राजक को आधाकर्मिक—अपने लिये बनाया हुआ भोजन, औद्देशिक—साधु के निमित्त बनाया गया भोजन, मिश्रजात—साधु और गृहस्थ इन दोनों के उद्देश्य से तैयार किया गया भोजन, अध्यवपूर—गृहस्थ के बनते हुए भोजन में साधु के लिये अधिक मात्रा में निष्पादित भोजन, पूतिकर्म—आधा कर्मी आहार के अंश से मिश्रित भोजन, क्रीतकृत—साधु के निमित्त खरीद कर लिया गया, प्रामित्य—उधार लिया गया, अनिसृष्ट—घर के मुखिया या गृहस्वामी को बिना पूछे दिया जाने वाला, अभ्याहृत—साधु के सम्मुख लाकर दिया जाता भोजन, स्थापित—अपने लिये अलग रखा हुआ भोजन, रचित—एक विशेष प्रकार का उद्दिष्ट—अपने लिये संस्कारित किया हुआ भोजन, कान्तार भक्त—जंगल पार करने के लिये घर से अपने पाथेय (भाता) के रूप में लिया हुआ भोजन, दुर्भिक्ष भक्त—दुर्भिक्ष के समय भिक्षुओं तथा अकाल पीड़ितों के निमित्त बनाया हुआ भोजन, ग्लानभक्त—रोगी के लिये बनाया हुआ भोजन या स्वयं रोग-ग्रस्त होते हुए आरोग्य हेतु दान रूप में दिया गया भोजन, वार्दलिक भक्त—दुर्दिन—बादल आदि से घिरे दिन में दरिद्र जनों के लिये बनाया गया भोजन, प्राघूर्णक भक्त—पाहुनों के लिये तैयार किया गया भोजन (अम्वड़ परिव्राजक को) खाना-पीना नहीं कल्पता है। इसी प्रकार अम्बड़ परिव्राजक को मूलमय भोजन (कन्द फल हरे तृण), बीजमय भोजन—खाना पीना नहीं कल्पता है। ऐसा करना उसके लिये कल्पनीय नहीं है।

Amvaḍa does not accept food prepared by householder for self, prepared for a monk, prepared for householder and a monk, increased while cooking to make an offer to a monk, mixed with food prepared for self, purchased, borrowed, offered without the knowledge and permission of the master of the household, brought from elsewhere after the arrival of

the monk, kept aside for self, especially prepared for self, prepared for intake while crossing through a forest, prepared for beggars, prepared for famine stricken, prepared for some relative to come, prepared for a patient and prepared for the poor during a cloudy day. Amvaḍa does not eat roots, till seeds, nor enjoy, nor desire to get.

अम्मडस्स णं परिव्वायगस्स चउव्विहे अणत्थदंडे पच्चक्खाए जावज्जीवाए । तं जहा अवज्झाणायरिए पमायायरिए हिंसप्पयाणे पावकम्मोवएसे ।

अम्बड़ परिव्राजक ने जीवन भर के लिये चार प्रकार के अनर्थदण्ड—बिना प्रयोजन की जाने वाली हिंसा और अशुभ कार्यों का परित्याग किया। जो इस प्रकार है : (१) अपध्यानाचरित—इसका अर्थ है दुश्चिन्तन, यह चिन्तन दो प्रकार का है—आर्तध्यान तथा रौद्र ध्यान। (२) प्रमादाचरित—अपने धर्म, कर्तव्य तथा दायित्व के प्रति जागरूक न रहना 'प्रमाद' है, दूसरों की निन्दा करना, अश्लील बातें करना, गप्पें मारना ये सभी प्रमादाचरित में आते हैं। (३) हिंस्रप्रदान—हिंसा के कार्यों में सहयोग करना, चोर, डाकू आदि को हथियार देना, उन्हें आश्रय देना। (४) पाप कर्मोपदेश—दूसरों को पाप कार्य में प्रवृत्त करने हेतु प्रेरणा, परामर्श या उपदेश देना।

For good Amvaḍa has given up four types of activities leading to unnecessary harm, viz., wrong concentration of the mind, to fall a victim to delusion, to give to another a weapon to cause harm / slaughter and to counsel others to indulge in activities acquiring sin.

अम्मडस्स कप्पइ मागहए अद्धाढए जलस्स पडिग्गाहित्तए। सेऽविय वहमाणए नो चेव णं अवहमाणए जाव····सेऽविय पूए नो चेव णं अपरिपूए। सेऽविय सावज्जंत्तिकाऊं णो चेव णं अणवज्जे। सेऽविय जीवा इतिकट्टु णो चेव णं अजीवा।

सेऽविय दिण्णे णो चेव णं अदिण्णे। सेऽविय दंतहत्थपाय-चरुचमसपक्खालणट्ठयाए पिवित्तए वा णो चेव णं सिणाइत्तए।

अम्वड़ को मागध मान—मगध देश के तोल के अनुसार आधा आढक जल लेना कल्पता है। उसके लिये कल्पनीय है। वह जल भी प्रवहमान बहता हुआ हो, किन्तु न वहता हुआ न हो...यावत्, वह परिपूत—वस्त्र से छना हुआ हो तो कल्पनीय है, अनछना नहीं। वह भी सावद्य—अवद्य—पाप सहित समझ कर, निरवद्य—पाप रहित समझ कर नहं। सावद्य भी—वह उसे भी सजीव—जीव युक्त समझ कर ही लेता है, अजीव—जीवरहित समझ कर नहीं। वैसा जल भी दत्त—दिया हुआ ही कल्पता है, अदत्त—न दिया हुआ नहीं। वह भी हाथ, पैर, भोजन का पात्र, काठ की कुड़छी धोने के लिये अथवा पीने के लिये ही कल्पता है, स्नान के लिये नहीं।

Amvaḍa accepts water no more than half a Māgadha Āḍhaka, from a flow, not a pool, till passed through a piece of cloth, not otherwise, pure, not impure, which has life, but not non-life, that too offered, not unoffered, to wash and clean teeth, hands, feet, bowls, etc., and to drink, but not to bathe.

अम्मडस्स कप्पइ मागहए य आढए जलस्स पडिग्गाहित्तए। सेऽविय वहमाणे जाव...दिन्ने नो चेव णं अदिण्णे। सेऽविय सिणाइत्तए णो चेव णं हत्थपायचरुचमसपक्खालणट्ठयाए पिवित्तए वा। अम्मडस्स णो कप्पइ अन्नउत्थिया वा अण्णउत्थियदेवयाणि वा अण्णउत्थियपरिग्गहियाणि वा चेइयाइं वंदित्तए वा णमंसित्तए वा जाव...पज्जुवासित्तए वा णण्णत्थ अरिहंते वा अरिहंतचेइयाइं वा।

अम्वड़ को मगध देश के तोल के अनुसार केवल एक आढ़क जल लेना कल्पता है। वह भी प्रवहमान—वहता हुआ...यावत्, दिया हुआ कल्पता है,

न दिया हुआ नहीं। वैसा जल भी नहाने के लिये कल्पता है। हाथ, पैर, चरू—भोजन का पात्र, चमस—चम्मच धोने के लिये अथवा पीने के लिये नहीं। अम्बड़ को अर्हन्तों और अर्हत् चैत्यों के अतिरिक्त अन्ययूथिक—निर्ग्रन्थ धर्म संघ के सिवाय, अन्य संघ से सम्बन्धित पुरुष, उनके देव, उन के द्वारा परिगृहीत—स्वीकृत चैत्यों को वन्दन करना, नमन करना..यावत् उनकी पर्युपासना—अभ्यर्थना—सान्निध्य लाभ लेना नहीं कल्पता है।

Amvaḍa accepts water as much as one Māgadha Āḍhaka that too flowing, till offered, to bathe, but not to wash, clean teeth, hands, feet, etc., nor to drink. Amvaḍa does not court the company of the heretics nor worships their gods or their images, but worships only the *Arihantas* and their images.

गौतम : अम्मडे णं भंते ! परिव्वायए कालमासे कालं किच्चा कहिं गच्छिहिति ? कहिं उववज्जिहिति ?

महावीर : गोयमा ! अम्मडे णं परिव्वायए उच्चावएहिं सीलव्वयगुणवेरमणपच्चक्खाणपोसहोववासेहिं अप्पाणं भावेमाणे बहूइं वासाइं समणोवासयपरियायं पाउणिहिति। पाउणिहित्ता मासियाए संलेहणाए अप्पाणं झूसित्ता सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा बंभलोए कप्पे देवत्ताए उववज्जिहिति। तत्थ णं अत्थेगइयाणं देवाणं दस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। तत्थ णं अम्मडस्सवि देवस्स दस सागरोवमाइं ठिई।

गौतम : हे भगवन् ! अम्वड़ परिव्राजक मृत्यु—काल आने पर काल कर—देह त्याग कर कहाँ जायेगा ? कहाँ उत्पन्न होगा ?

महावीर : गौतम ! अम्बड़ परिव्राजक उच्चावच—उत्कृष्ट-अनुत्कृष्ट अर्थात् विशेष-सामान्य शीलव्रत, गुणव्रत, विरमण—रागादि से

विरति के प्रकार, प्रत्याख्यान—परित्याग, पोषधोपवास—अध्यात्म साधना में अग्रसर होने के लिये यथाविधि आहार, मैथुन आदि का त्याग द्वारा अपनी आत्मा को भावित—अनुप्राणित करता हुआ—आत्मोन्मुख रहता हुआ बहुत वर्षों तक श्रमणोपासक पर्याय—श्रावक धर्म का पालन करेगा। वैसा कर—पालन कर एक मास की संलेखना के द्वारा आत्मा में लीन हो कर तथा साठ भोजन—एक महीने का अनशन सम्पन्न कर आलोचना—दोषों का स्मरण कर, प्रतिक्रमण—दोषों से पीछे हटता हुआ, समाधि—शान्ति, चित्त-विशुद्धि की प्राप्ति करता हुआ, मृत्युकाल आने पर देह-त्याग करेगा। देह त्याग कर वह ब्रह्मलोक कल्प में देव रूप से उत्पन्न होगा। वहाँ अनेक देवों की आयु—स्थिति दस सागरोपम प्रमाण बतलाई गई है। तो वहाँ पर अम्बड देव की भी स्थिति—आयुष्य-परिमाण दस सागरोपम प्रमाण होगा।

Gautama : *Bhante* ! Amvaḍa Parivrājaka, when he passes away, where will he go, where will he be reborn ?

Mahāvīra : Gautama ! Amvaḍa Parivrājaka will live like a monk in the Śramaṇa order for many many years, practising vows, controls and restraints, desisting from attachment, etc., renouncing, practising *pratikramaṇa* and fasts. Then he will undertake a fast for a month, wholly concentrate in self, pass through sixty meal-time without intake, recall his lapses, recede from them, be in complete trance, and pass away at a certain point in eternal time and be born as a celestial being in Brahmaloka Kalpa. There, in that heaven, many a god live as long as ten *sāgaropamas*, and Amvaḍa will have a similar length of stay.

गौतम : से णं भंते ! अम्मडे देवे ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता कहिं गच्छिहिति ? कहिं उववज्जिहिति ?

महावीर : गोयमा ! महाविदेहे वासे जाइं कुलाइं भवंति अड्ढाइं दित्ताइं वित्ताइं विच्छिण्णविउलभवणसयणासण-जाणवाहणाइं बहुधणजायरूवरययाइं आओगपओगसंपउत्ताइं

विच्छड्डियपउरभत्तपाणाइं बहुदासीदासगोमहिसगवेलगप्पभूयाइं बहुजणस्स अपरिभूयाइं। तहप्पगारेसु कुलेसु पुमत्ताए पच्चयाहिति।

गौतम : भगवन् ! अम्बड़ देव उस देव लोक से आयु-क्षय, भव-क्षय, और स्थिति-क्षय होने पर च्यवन कर कहाँ जायेगा ? वह कहाँ उत्पन्न होगा ?

महावीर : गौतम ! महाविदेह क्षेत्र में जो कुल हैं, वे धनाढ्य—समृद्ध, दीप्त—दीप्तिमान्, प्रभावशाली अथवा स्वाभिमानी, सम्पन्न, अनेकों भवन, शयन—ओढ़ने-बिछाने के वस्त्र, आसन—बैठने के उपकरण, यान—माल ढोने को गाड़ियाँ, वाहन—सवारियाँ आदि विपुल साधन-सामग्री से युक्त हैं। उनके यहाँ सोना, चाँदी, सिक्के आदि की कमी नहीं है, अर्थात् वे प्रचुर धन के स्वामी होते हैं। वे व्यावसायिक दृष्टि से धन के सम्यग् विनियोग तथा प्रयोग में संलग्न हैं, अर्थात् वे नीतिपूर्वक द्रव्य के उपार्जन में निरत होते हैं। उनके यहाँ भोजन कर लेने के बाद भी अन्य बहुत से नौकर, नौकरानियों का भी गुजारा हो सके, इतना प्रचुर खाने-पीने के पदार्थ बचते हैं। वहाँ दास-दासियों की भी कमी नहीं हैं। गाय, भैंस, बैल, पाड़े, भेड़—बकरियाँ आदि होते हैं, अर्थात् वे पशुधन से समृद्ध हैं। वे लोगों द्वारा अतिरस्कृत होते हैं, अर्थात् वे इतने अधिक रोबिले होते हैं कि कोई उनका तिरस्कार—अपमान करने का साहस नहीं कर सकता। अम्बड़ (देव) ऐसे कुलों में से किसी एक कुल में पुरुष रूप में उत्पन्न होगा।

Gautama : *Bhante* ! When, after having lived there for the stated time, his stay there comes to an end and he descends, where will he go and where will he be reborn ?

Mahāvira : Gautama ! In Mahāvideha, there are various lines which are prosperous, dignified and famous. They possess many mansions, couches and cushions, vehicles and carriers. They have no dearth of treasures and bullion. They make effective application of the means of earning more and more wealth. They prepare food and drink in such a huge quantity that after many are fed, the remnant is so profuse

that many more may be fed. In that land, there is no dearth of valets and maids They are rich in their possession of cattle wealth. He will be born in one of these lines.

तए णं तस्स दारगस्स गब्भत्थस्स चेव समाणस्स अम्मापिईणं धम्मे दढा पतिण्णा भविस्सइ। से णं तत्थ णवण्हं मासाणं बहुपडि-पुण्णाणं अद्धट्ठमाणराइंदियाणं वीइक्कंताणं सुकुमालपाणिपाए जाव...ससिसोमाकारे कंते पियदंसणे सुरूवे दारए पयाहिति।

जब (अम्बड़) उस शिशु के रूप में गर्भ में आयेगा (उसके पुण्य प्रभाव से) माता-पिता की धर्म में दृढ़ प्रतिज्ञा—आस्था होगी। वहाँ पूर्ण नौ महीने तथा साढ़े सात रात्रि-दिन व्यतीत होने पर बालक का जन्म होगा। उसके हाथ-पैर सुकोमल होंगे।...यावत् उसका आकार चन्द्रमा के समान सौम्य होगा। वह कान्तिमान्, देखने में प्रिय तथा अत्यन्त रूपवान् होगा।

As soon as the boy enters into the mother's womb, his parents will be fully devoted to religion. Then on the completion of full nine months and seven and a half day-nights, till will be born a boy as graceful as the moon, dear and with a delight-giving look.

तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो पढमे दिवसे ठिइवडियं काहिंति। बिइयदिवसे चंदसूरदंसणियं काहिंति। छट्ठे दिवसे जागरियं काहिंति। एक्कारसमे दिवसे वीतिक्कंते णिव्वित्ते असुइ-जायकम्मकरणे संपत्ते बारसाहे दिवसे अम्मापियरो इमं एयारूवं गोणं गुणणिप्फण्णं णामधेज्जं काहिंति—जम्हा णं अम्हं इमंसि दारगंसि गब्भत्थंसि चेव समाणंसि धम्मे दढपइण्णा तं होउ णं अम्हं

दारए दढपइण्णे णामेणं। तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो णामधेज्जं करेहिंति दढपइण्णे त्ति।

उसके बाद उस बालक के माता-पिता पहले दिन कुलक्रम के अनुसार पुत्र-जन्म के योग्य अनुष्ठान करेंगे। दूसरे दिन 'चन्द्रसूर्य-दर्शनिका' नामक जन्मोत्सव करेंगे। छट्ठे दिन 'जागरिका'—रात्रि जागरण नामक जन्मोत्सव करेंगे। ग्यारह दिन व्यतीत हो जाने पर वे जनन क्रिया सम्बन्धी अशुचि शोधन विधान से निवृत्त होंगे। बारहवें दिन माता-पिता यह बालक इस रूप से गुणों से सम्बन्धित, गुण निष्पन्न- गुणानुसार बनने वाला नाम संस्कार करेंगे। क्योंकि इस बालक के गर्भ में आते ही हमारी धार्मिक-श्रद्धा दृढ़ हुई थी, अतएव हमारा बालक यह 'दढपइण्ण'— दृढ़प्रतिज्ञ नाम से संबोधित किया जाय। तब यह सोच कर माता-पिता उस बालक का नाम दृढ़प्रतिज्ञ रखेंगे।

Then on the first day after his birth, his parents will fulfil rituals which are conventional to his line ; on the second day, they will celebrate *candra-sūrya-darśanikā*, and *jāgarikā* on the sixth day. On the completion of the eleventh day when the impurity of the house caused by the child birth is wiped clean, then, on the twelfth day, the parents will give him a name, they will think that since due to the coming of the boy we have acquired a firm resolve in religion, so let us name him Dṛḍhapratijña (Firm in resolve). So they will name him like that.

तं दढपइण्णं दारगं अम्मापियरो साइरेगट्ठवासजातगं जाणित्ता सोभणंसि तिहिकरणणक्खत्तमुहुत्तंसि कलायरियस्स उवणेहिंति। तए णं से कलायरिए तं दढपइण्णं दारगं लेहाइयाओ गणियप्पहाणाओ सउणरूयपज्जवसाणाओ बावत्तरिं कलाओ सुत्तो य अत्थतो य करणतो य सेहाविहिति सिक्खाविहिति।

माता-पिता यह जानकर कि अब बालक दृढ़प्रतिज्ञ आठ वर्ष से कुछ अधिक का हो गया है, उसे शुभ तिथि, शुभ करण, शुभ नक्षत्र और शुभ मुहूर्त में 'शिक्षण' के लिये कलाचार्य के पास ले जायेंगे। तब कलाचार्य उस दृढ़प्रतिज्ञ बालक को लेख एवं गणित से लेकर पक्षी शब्द से शुभाशुभ का ज्ञान तक बहत्तर कलाएँ सूत्र रूप में—सैद्धान्तिक दृष्टि से, अर्थ रूप म—व्याख्यात्मक दृष्टि से, तथाकरण रूप में—प्रयोगात्मक दृष्टि से सधायेंगे, सिखायेंगे—अभ्यास करायेंगे।

Then when the boy will complete his eighth year, on an auspicious day, with favourable stars shining, at a very auspicious moment, the parents will take the boy to the family preceptor. The said preceptor will impart to the boy the knowledge of many an art, the art of writing, the art of calculation, the art of omen-reading and many others, the texts, their meaning and their application.

तं जहा—लेहं गणितं रूवं णट्टं गीयं वाइयं सरगयं पुक्खरगयं समतालं जूयं जणवायं पासकं अट्ठावयं पोरेकव्वं दगमट्टियं अण्णविहिं पाणविहिं वत्थविहिं विलेवणविहिं सयणविहिं अज्जं पहेलियं मागहियं गाहं गीइयं सिलोयं हिरण्णजुत्ती सुवण्णजुत्ती गंधजुत्ती चुण्णजुत्ती आभरणविहिं तरुणीपडिकम्मं इत्थिलक्खणं पुरिसलक्खणं हयलक्खणं गयलक्खणं गोणलक्खणं कुक्कुडलक्खणं चक्कलक्खणं छत्तलक्खणं चम्मलक्खणं दंडलक्खणं असिलक्खणं मणिलक्खणं काकणिलक्खणं वत्थुविज्जं खंधारमाणं नगरमाणं वत्थुनिवेसणं वूहं पडिवुहं चारं पडिचारं चक्कवूहं गरूलवूहं सगडवूहं जुद्धं निजुद्धं जुद्धातिजुद्धं मुट्ठिजुद्धं बाहुजुद्धं लयाजुद्धं इसत्थं छरुप्पवाहं धणुव्वेयं हिरण्णपागं सुवण्णपागं वट्टखेडं खुत्ताखेड्डं णालियाखेड्डं पत्तच्छेज्जं कडवच्छेज्जं सज्जीवं निज्जीवं सउणरुतमिति बावत्तरिकला सेहाविति।

वे बहत्तर कलाएँ इस प्रकार हैं—

(१) लेख—लेख लिखने की कला, (२) गणित, (३) रूप—रूप सजाने की कला, (४) नाट्य—अभिनय करने की कला, (५) गीत—गीत गाने की कला, (६) वाद्य—वीणा, दुन्दभि आदि बजाने की कला, (७) स्वरगत—स्वर जानने की कला, (८) पुष्कर-गत—मृदंग आदि वाद्य बजाने की कला, (९) समताल—गान व ताल के लयात्मक समीकरण की कला, (१०) द्यूत—जूआ खेलने की कला, (११) जनवाद—वार्तालाप की कला, (१२) पाशक—पासा फेंकने की विशिष्ट कला, (१३) अष्टापद—विशेष प्रकार की द्यूत-क्रीड़ा, (१४) पौरस्कृत्य—नगर की रक्षा, व्यवस्था की कला, (१५) उदक मृत्तिका—जल और मिट्टी के मिश्रण से वस्तु बनाने की कला, (१६) अन्नविधि—अन्न उत्पन्न करने की कला, (१७) पानविधि—पानी को उत्पन्न करने की कला, (१८) वस्त्रविधि—वस्त्र बनाने की कला, (१९) विलेपनविधि—शरीर पर चन्दन आदि द्रव्यों से लेप करने की कला, (२०) शयनविधि—शय्या निर्माण करने की कला, (२१) आर्या—आर्या आदि मात्रिक छन्द करने की कला, (२२) प्रहेलिका—प्रहेलिका निर्माण की कला, (२३) मागधिका—छन्द विशेष बनाने की कला, (२४) गाथा—प्राकृत भाषा में गाथा निर्माण की कला, (२५) गीतिका—गेय काव्य रचने की कला, (२६) श्लोक—श्लोक बनाने की कला, (२७) हिरण्ययुक्ति—चाँदी बनाने की कला, (२८) सुवर्णयुक्ति—सोना बनाने की कला, (२९) गन्धयुक्ति—सुगन्धित पदार्थ बनाने की कला, (३०) चूर्णयुक्ति—विभिन्न औषधियों द्वारा निर्मित चूर्ण डाल कर औरों को वश में करना, (३१) आभरण विधि—अलंकार बनाने की कला, (३२) तरुणीप्रतिकर्म—स्त्री को शिक्षा देने की कला, (३३) स्त्रीलक्षण—स्त्री के लक्षण जानने की कला, (३४) पुरुषलक्षण—पुरुष के लक्षण जानने की कला, (३५) हयलक्षण—घोड़े के लक्षण जानने की कला, (३६) गज-लक्षण—हाथी के लक्षण जानने की कला, (३७) गोलक्षण—गाय के लक्षण जानने की कला, (३८) कुक्कुटलक्षण—मुर्गे के लक्षण जानने की कला, (३९) चक्रलक्षण—चक्र के लक्षण जानने की कला, (४०) छत्र-लक्षण—छत्र के लक्षण जानने की कला, (४१) चर्मलक्षण—चर्म के

लक्षण जानने की कला, (४२) दण्डलक्षण—दण्ड लक्षण जानने की कला, (४३) असिलक्षण—तलवार के लक्षण जानने की कला, (४४) मणिलक्षण—मणि के लक्षण जानने की कला, (४५) कांकणी-लक्षण—चक्रवर्ती के रत्न-विशेष के लक्षण जानने की कला, (४६) वास्तु-विद्या—भवन निर्माण करने की कला, (४७) स्कन्धावारमान—शत्रु सेना को जीतने की कला, (४८) नगरमान—नगर का प्रमाण जानने की कला, (४९) वास्तुनिवेशन—भवनों के उपयोग के सम्बन्ध में जानने की कला, (५०) व्यूह—व्यूह रचने की कला, (५१) चार-प्रतिचार—सैन्य का प्रमाण आदि जानने की कला, (५२) चक्रव्यूह—चक्र व्यूह रचने की कला, (५३) गरुड़व्यूह—गरुड़ के आकार का व्यूह बनाने की कला, (५४) शकट व्यूह—गाड़ी के आकार में सेना को स्थापित करने की कला, (५५) युद्ध—लड़ाई करने की कला, (५६) नियुद्ध—पैदल युद्ध करने की कला, (५७) युद्धातियुद्ध—तलवार आदि फेंक कर युद्ध करने की कला, (५८) मुष्टियुद्ध—मुक्कों से लड़ने की कला, (५९) बाहुयुद्ध—भुजाओं द्वारा लड़ने की कला, (६०) लतायुद्ध—जैसे बेल वृक्ष पर चढ़ कर उसे जड़ से लेकर शिखर तक आवेष्टित कर लेती है, उसी प्रकार जहाँ योद्धा प्रतियोद्धा के शरीर को प्रगाढ़ रूप से उपमर्दित कर भूमि पर गिरा देता है और उस पर चढ़ बैठता है, (६१) इषु शस्त्र—नाग बाण आदि के प्रयोग का ज्ञान, छुरा आदि फेंकने की कला, (६२) धनुर्वेद—धनुष-बाण सम्बन्धी कौशल होना, (६३) हिरण्यपाक—चाँदी का पाक बनाने की कला, (६४) सुवर्णपाक—सोने का पाक बनाने की कला, (६५) वृत्तखेल—रस्सी आदि पर चलकर खेल दिखाने की कला, (६६) सूत्रखेल—सूत द्वारा खेल दिखाने की कला, (६७) नालिकाखेल—कमल के नाल का छेदन करना, (६८) पत्रच्छेद्य—एक सौ आठ पत्तों में यथेष्ट संख्या के पत्तों को छेदने की कला, (६९) कटकच्छेद्य—कड़ा, कुण्डल आदि छेदने की कला, (७०) सजीव—मृत-मूर्छित को जीवित करने की कला, (७१) निर्जीव—जीवित को मृततुल्य करने की कला, (७२) शकुनरुत -पक्षी के शब्द से शुभाशुभ जानने की कला।

The 72 arts are as follows—

(1) Art of writing, (2) Mathematics, (3) Art of decoration, (4) Acting, (5) Singing, (6) To play with musical

instruments, (7) To know breathing, (8) To play leather instruments, (9) To harmonise song and rhythm, (10) To play dice, (11) Art of conversation, (12) Art of throwing dice, (13) To play special kind of dice, (14) Art of protecting and administering a city, (15) Art of making utensils with earth and water, (16) Art of cultivation, (17) Art of making water, (18) Weaving, (19) Art of anointing body, (20) Art of arranging bed, (21) To write verse in Āryā metre, (22) To write riddles, (23) To write verse in Māgadhi metre, (24) To write *gāthā* (verse) in Prakrit, (25) To compose songs, (26) To write *śloka* or verse, (27) Art of making silver, (28) Art of making gold, (29) Art of preparing perfumes, (30) Art of preparing powder for charm, (31) Art of making ornaments, (32) Art of teaching maidens, (33) To know the types of women, (34) To know the types of men, (35) To know the types of horses, (36) To know the types of elephants, (37) To know the types of cows, (38) To know the types of cocks, (39) To know the types of wheels, (40) To know the types of umbrellas, (41) To know the types of leathers, (42) To know the types of staffs, (43) To know the types of swords, (44) To know the types of jewels, (45) To know the types of *kāṅkiṇī* jewel of the Cakravarti, (46) Art of building construction, (47) Art of winning over enemies, (48) To know the area of a city, (49) To know how to utilise the buildings, (50) To know how to deploy the army, (51) To know the strength of the army, (52) To know wheel-type arrangement of the army, (53) To know Garuḍa-type arrangement of the army, (54) To know vehicle-type arrangement of the army, (55) Art of fighting, (56) Art of fighting on foot, (57) Art of fighting after throwing the sword, (58) Art of fighting with fists, (59) Art of fighting with hands, (60) Art of fighting like creeper by felling the enemy on the ground and sitting on his body, (61) Art of throwing a snake-arrow, (62) Archery, (63) To know how to purify silver, (64) To know how to

purify gold, (65) Art of walking on rope, (66) Art of string play, (67) Art of piercing the lotus stalk, (68) Art of piercing certain number of leaves out of 108 leaves, (69) Art of piercing bangle or ear-rings, (70) To bring to life a dead or an unconscious, (71) To make a living person look like dead, (72) Art of reading signs.

सिक्खावेत्ता अम्मापिईणं उवणेहिति। तए णं तस्स दढपइण्णस्स दारगस्स अम्मापियरो तं कलायरियं विपुलेणं असणपाणखाइम-साइमेणं वत्थगंधमल्लालंकारेण य सक्कारेहिंति सम्माणेहिंति। सक्कारेत्ता संमाणेत्ता विपुलं जीवियारिहं पीइदाणं दलइस्सइ। दलइस्सित्ता पडिविज्जेहिंति।

ये बहत्तर कलाएँ सधा कर, इन का प्रशिक्षण देकर—सम्यक् रूप से अभ्यास करा कर कलाचार्य उस बालक को माता-पिता को सौंप देंगे या उन के पास ले जाएंगे। तब उस दृढ़प्रतिज्ञ बालक के माता-पिता उस कलाचार्य का विपुल—प्रचुर, अशन—अन्नादि निष्पन्न भोज्य पदार्थ, पान—पानी, खाद्य—फल, मेवा, आदि पदार्थ, स्वाद्य—पान, सुपारी इलायची। आदि मुखवासकर पदार्थ, वस्त्र, गन्ध, माला एवं अलंकार द्वारा सत्कार करेंगे, सम्मान करेंगे। सत्कार कर, सम्मान कर उन्हें विपुल—प्रचुर जीविका के योग्य—जिससे समुचित रूप में जीवन का निर्वाह होता रहे, ऐसा प्रीतिदान—पारितोषिक—पुरस्कार देंगे। उन्हें पुरस्कार देकर प्रतिविसर्जित—विदा करेंगे।

Having imparted these arts to the boy, the preceptor will call on the parents of the boy. The parents will welcome the preceptor and will bestow on him a huge quantity of food, drink, dainties and delicacies, clothes, perfumes, garlands and ornaments and honour him suitably. They will offer him enough to live comfortably, and in the end, bid him goodbye.

तए णं से दढपइण्णे दारए बावत्तरिकलापंडिए नवंगसुत्त-पडिबोहिए अट्ठारसदेसीभासाविसारए गीयरती गंधव्वणट्टकुसले हयजोही गयजोही रहजोही बाहुजोही बाहुप्पमद्दी वियालचारी साहसिए अलं भोगसमत्थे आवि भविस्सइ ।

तब वह दृढ़प्रतिज्ञ बालक बहत्तर कलाओं में पण्डित—मर्मज्ञ, सुप्त नव-अंगों—दो कान, दो नेत्र, दो घ्राण, एक जिह्वा, एक त्वचा एवं एक मन इन नौ अंगों की चेतना या संवेदना के जागरण से युक्त, अर्थात् युवावस्था में प्रविष्ट, अठारह देशों की भाषाओं में विशारद—निपुण, संगीत प्रेमी—संगीत-विद्या, नृत्य-कला आदि में कुशल—प्रवीण, अश्वयुद्ध—घोड़े पर सवार होकर युद्ध करना, गजयुद्ध—हाथी पर सवार होकर युद्ध करना, रथयुद्ध—रथ पर सवार होकर युद्ध करना, बाहुयुद्ध—भुजाओं द्वारा युद्ध करना, इन सब में दक्ष, बाहुओं से प्रमर्दन करने वाला, निर्भीकता के कारण रात में भी घूमने-फिरने में निःशंक, प्रत्येक कार्य में साहसी—दृढ़ प्रतिज्ञा वाला, यों वह बालक सांगोपांग विकसित—संवर्द्धित होकर पूर्णतः भोग-समर्थ हो जायेगा ।

Then the said Dṛḍhapratijña, versed in seventytwo arts, fully exposed to the nine *Aṅgas* about which people are in the dark, a polyglot in eighteen languages, fond of music, a dancer in the Gandharva style, a warrior who could fight from horseback, elephant, chariot or even with bare arms, a crusher with his arms, free rover at night and brave, will acquire full capacity to enjoy life.

तए णं दढपइण्णं दारगं अम्मापियरो बावत्तरिकलापंडियं जाव...अलं भोगसमत्थं वियाणित्ता विउलेहिं अण्णभोगेहिं पाण-भोगेहिं लेणभोगेहिं वत्थभोगेहिं सयणभोगेहिं कामभोगेहिं उवणिमंतेहिंति ।

तब माता-पिता दृढ़प्रतिज्ञ बालक को बहत्तर कलाओं में पण्डित—मर्मज्ञ, ...यावत् सर्वथा भोग-समर्थ जान कर विपुल—प्रचुर अन्न भोग—खाने योग्य भोज्य पदार्थ, पान भोग—उत्तम पेय पदार्थ, लयन भोग—सुन्दर गृह आदि में निवास, वस्त्र भोग—उत्तम वस्त्र, शयन भोग—उत्तम शय्या—सोने/ आराम करने योग्य सुखप्रद सामग्री का उपभोग करने का आग्रह करेंगे।

When his parents will realise that the boy has acquired 72 arts, till acquired full capacity to enjoy life, they will provide him with huge supply of food, drink, residence, clothes and couches.

तए णं से दढपइण्णे दारए तेहिं विउलेहिं अण्णभोगेहिं जाव... सयणभोगेहिं णो सज्जिहिति णो रज्जिहिति णो गिज्झिहिति णो अज्झोववज्जिहिति।

तब वह दृढ़प्रतिज्ञ बालक अन्न भोग...यावत् शयन भोग—उत्तम शय्या—बिछौने आदि सुखप्रद सामग्री के भोगों में आसक्त नहीं होगा, रागरञ्जित अर्थात् अनुरक्त नहीं होगा, गृद्ध—लोलुप नहीं होगा, मूर्च्छित—मोहित नहीं होगा, अध्यवसित—मन नहीं लगायेगा।

But the said Dṛḍhapratijña will feel no attachment for the huge supply of food, will have no hankering for them, nor seek joys not provided, nor merge in them.

से जहाणामए उप्पले इ वा पउमे इ वा कुसुमे इ वा नलिणे इ वा सुभगे इ वा सुगंधे इ वा पोंडरीए इ वा महापोंडरीए इ वा सतपत्ते इ वा सहस्सपत्ते इ वा सतसहस्सपत्ते इ वा पंके जाए जले संवुड्ढे णोवलिप्पइ पंकरएणं णोवलिप्पइ जलरएणं एवमेव दढपइण्णे

वि दारए कामेहिं जाए भोगेहिं संवुड्ढे णोवलिप्पिहिति कामरएणं णोवलिप्पिहिति भोगरएणं णोवलिप्पिहिति मित्तणाइणियगसयणसंबंधिपरिजणेण ।

जैसे उत्पल—नील कमल, पद्म—पीत कमल, कुमुद—लाल कमल, नलिन—गुलावी कमल, सुभग—सुनहरा कमल, सुगन्ध—संभवत हरा कमल, पुण्डरीक—सफेद कमल, महापुण्डरीक—विशेष श्वेत कमल, शतपत्र—सौ पंखुड़ी वाला कमल सहस्रपत्र—हजार पंखुड़ी वाला कमल कीचड़ में उत्पन्न होते हैं, जलमें बढ़ते हैं किन्तु पंक-रज—कीचड़ के सूक्ष्म कणों से लिप्त नहीं होते हैं, जल-रज—जल रूप कणों से लिप्त नहीं होते हैं, उसी प्रकार दृढ़प्रतिज्ञ बालक जो काममय—काम-भोग में उत्पन्न होगा, भोगमय जगत में संवर्द्धित होगा, अर्थात् काममय-भोगमय जगत में पलेगा-पुसेगा, किन्तु काम रज—शब्दात्मक, रूपात्मक, गन्धात्मक, रसात्मक और स्पर्शात्मक भोग्य पदार्थों से—भोगासक्ति से लिप्त नहीं होगा। मित्र, सजातीय, भाई-बहन आदि पारिवारिक जन, नाना, मामा आदि—मातृपक्ष के पारिवारिक जन तथा अन्यान्य सम्बन्धी, परिजन—दासी-दास, आदि इनमें आसक्त नहीं होगा।

A lotus, blue, yellow, red, pink, golden, green, white, specially white, with a hundred petals, a thousand petals, with a hundred thousand petals, blossoms in mud, grows in water, but is not contaminated by either mud or water; likewise Dṛḍhapratijña born out of lust and brought up in joy, will never be contaminated by either lust or joy, by pleasure, by friends, kins, relations on either side, or by valets and maids.

से णं तहारूवाणं थेराणं अंतिए केवलं बोहिं बुज्झिहिति। केवलबोहिं बुज्झित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइहिति।

वह तथारूप—वीतराग प्रभु की आज्ञा के अनुवर्ती—अनुसर्ता, स्थविर—ज्ञान तथा चारित्र में वृद्ध—वृद्धिप्राप्त श्रमणों के पास केवल बोधि—विशुद्ध

सम्यग्दर्शन प्राप्त करेगा। वह अगार-अवस्था—गृहवास का परित्याग कर अनगार धर्म—महाव्रतमय श्रमण जीवन स्वीकार करेगा अर्थात् श्रमण धर्म में प्रव्रजित—दीक्षित होगा।

He will experience pure and right faith from the senior monks in the Śramaṇa order and thereafter give up his household and be a homeless monk.

से णं भविस्सइ अणगारे भगवंते ईरियासमिए जाव•••गुत्त-बंभयारी। तस्स णं भगवंतस्स एतेणं विहारेणं विहरमाणस्स अणंते अणुत्तरे णिव्वाघाए निरावरणे कसिणे पडिपुण्णे केवल-वरणाणदंसणे समुप्पज्जिहिति।

वे अनगार—श्रमण भगवान् दृढ़प्रतिज्ञ ईर्या समिति—गमन, हलन, चलन आदि क्रिया में सम्यक् प्रवृत्त—यतनाशील,...यावत् गुप्त ब्रह्मचारी—नियमोपनियमपूर्वक ब्रह्मचर्य का संरक्षण—संपालन करने वाले होंगे। इस प्रकार की चर्या में सम्यक् रूप से प्रवर्तन—ऐसा उत्कृष्ट साधनामय जीवन जीते हुए उन भगवन्त दृढ़प्रतिज्ञ को अनन्त—अनन्त पदार्थों को जानने वाला, अनुत्तर—सर्वश्रेष्ठ, निर्व्याघात—व्यवधान रहित, निरावरण—आवरण से रहित, कृत्स्न—सर्वार्थग्राहक, प्रतिपूर्ण—अपने समग्र अविभागी अंशों से युक्त या समायुक्त केवलज्ञान, केवल दर्शन उत्पन्न होगा।

He will become a monk, revered, ever alert in movements, till fully rooted in the rules of a celibate life. While living life like this, he will acquire infinite, unprecedented, unobstructed, uncovered, meaningful and complete supreme knowledge and faith.

तए णं से दढपइण्णे केवली बहूइं वासाइं केवलिपरियागं पाउणिहिति। केवलिपरियागं पाउणित्ता मासियाए संलेहणाए

अप्पाणं झूसित्ता सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेएत्ता जस्सट्ठाए कीरइ णग्गभावे मुंडभावे अण्हाणए अदंतवणए केसलोए बंभचेरवासे अच्छत्तकं अणोवाहणकं भूमिसेज्जा फलहसेज्जा कट्ठसेज्जा परघरपवेसो लद्धावलद्धं परेहिं हीलणाओ खिंसणाओ णिंदणाओ गरहणाओ तालणाओ तज्जणाओ परिभवणाओ पव्वहणाओ उच्चावया गामकंटका बावीसं परीसहोवसग्गा अहियासिज्जंति । तमट्ठमाराहित्ता चरिमेहिं उस्सासणिस्सासेहिं सिज्झिहिंति बुज्झिहिंति मुच्चिहिंति परिणिव्वाहिंति सव्वदुक्खाणमंतं करेहिंति ॥१४॥४०॥

उसके बाद दृढ़प्रतिज्ञ केवली बहुत वर्षों तक केवली पर्याय—केवली अवस्था का पालन करेंगे अर्थात् केवली-पर्याय में विचरेंगे। यों केवली-अवस्था का पालन कर, एक मास की संलेखना द्वारा अपने में आप को लीन कर के साठ भोजन—एक मास का अनशन—निराहार सम्पन्न कर या भोजन के साठ समयों को बिना खाये-पीये ही काटकर, जिस लक्ष्य के लिये नग्नभाव—शारीरिक संस्कारों के प्रति अनासक्ति, मुण्डभाव—सांसारिक-सम्बन्धों एवं ममता का त्याग कर—श्रमण-जीवन की साधना, अस्नान—स्नान नहीं करना, अदन्तधावन—दाँत नहीं धोना—मंजन न करना, केशलोच—बालों को अपने हाथों से उखाड़ना, ब्रह्मचर्यवास—ब्रह्मचर्य का पालना—बाह्य एवं आभ्यन्तर रूप में अध्यात्म साधना, अच्छत्रक—छाता धारण नहीं करना, पादरक्षिया या जूते धारण नहीं करना, पहनना नहीं, भूमिशय्या—भूमि पर सोना, फलकशय्या—काष्ठ पट पर सोना या सामान्य काठ की पटिया पर शयन करना, आहार के लिये पर गृह में प्रवेश करना, जहाँ चाहे आहार मिला अथवा नहीं मिला हो, अर्थात् सम्मान सहित मिला हो, अपमान सहित मिला हो, दूसरों से जन्म-कर्म की भर्त्सनापूर्ण तिरस्कार, खिंसना—मर्मोद्घाटनपूर्वक अवहेलना, निन्दना—निन्दा, गर्हणा—लोगों के सामने अपने सम्बन्ध में व्यक्त किये गये कुत्सित भाव, तर्जना—अंगुली द्वारा निर्देश—संकेत कर कहे गये कटुतापूर्ण वचन, ताड़ना—थप्पड़ आदि के द्वारा परिताड़न, परिभवना—पराभव—अपमान, परिव्यथना—लोगों के द्वारा दी गई व्यथा, भिन्न-भिन्न प्रकार की इन्द्रिय-विरोधी—आंख, कान, नाक आदि इन्द्रियों के लिये कष्टप्रद स्थितियाँ, बाईस प्रकार

के परीषह एवं देव, मनुष्य आदि कृत उपसर्ग आदि स्वीकार किये गये, उस लक्ष्य की आराधना पूरी कर के अपने अन्तिम उच्छ्वास-निःश्वास में सिद्ध होंगे, बुद्ध होंगे, मुक्त होंगे, परिनिवृत-होंगें तथा सब दुःखों का अन्त करेंगे ॥१४॥४०॥

Having lived as a kevalin for many years, the said Dṛḍhapratijña will undergo a month-long fast missing sixty meals without break, he will attain the supreme goal for which he had discarded his robes, tonsured his head, given up bath and cleaning his teeth, uprooting his hair from time to time, practising celibacy, not using umbrella, not using shoes, lying on the ground or on a piece of flat wood, visiting other people's home to beg food nomatter with what outcome or what sort of reception, bearing with patience the decrial of his birth and *karma* by others, openly or in their own mind, in the presence of others, chastisement, physical torture, defeat, terror created by people, and of course the twenty two hardships which are difficult for the sense organs to bear. Having pursued the goal worthily, he will breathe his last, be perfected and liberated, be withdrawn from the cycle of birth and death and end all misery. 14, 40

प्रत्यनीकों का उपपात

Rebirth of the Opponents

से जे इमे गामागर जाव...सण्णिवेसेसु पव्वइया समणा भवंति तं जहा—आयरियपडिणीया उवज्झायपडिणीया कुल-पडिणीया गणपडिणीया आयरिय-उवज्झायाणं अयसकारगा अवण्णकारगा अकित्तिकारगा ।

ये जो ग्राम, आकर—नमक आदि के उत्पत्ति-स्थान,...यावत् सन्निवेश—झोपड़ियों से बस्ती, या सार्थवाह एवं सेना आदि के ठहरने के स्थान में

प्रव्रजित—दीक्षित श्रमण होते हैं, जो इस प्रकार हैं: आचार्य प्रत्यनीक—आचार्य के विरोधी, उपाध्याय प्रत्यनीक—उपाध्याय के विरोधी, कुल प्रत्यनीक—कुल के विरोधी, गण प्रत्यनीक—गण के विरोधी, आचार्य और उपाध्याय का अपयश करने वाले, अवर्णवाद बोलने वाले, निन्दा करने वाले।

In the villages, towns, etc., till *sanniveśas,* those who are initiated in the Śramaṇa order, but are opposed to the Acārya, to the Upādhyāya, to *Kula,* to *Gaṇa,* who spread infamy of the Acārya and the Upādhyāya, who are disrespectful to him and who decry their achievements.

बहूहिं असब्भावुब्भावणाहिं मिच्छत्ताभिणिवेसेहि य अप्पाणं च परं च तदुभयं च वुग्गाहेमाणा वुप्पाएमाणा विहरित्ता बहूइं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणंति।

वे असद्भाव—वस्तुतः जो नहीं है ऐसी बातों अथवा दोषों के आरोपण या उत्पादन तथा मिथ्यात्व के अभिनिवेश के द्वारा अपने को, दूसरों को तथा स्व-पर इन दोनों को दुराग्रह—असत्य हठाग्रह में डालते हुए, दृढ़ करते हुए, अनहोनी बातों की आरोपण कल्पना में अर्थात् आशातना जनित पापों में निपतित करते हुए, विचरण करते हुए बहुत वर्षों तक श्रमण-पर्याय का पालन करते हैं।

Such monks live for many years in the Śramaṇa order by planting or generating wrong attitudes and false ideas in self, in others, in self as well as others, and in strengthening wrong attitudes and false ideas in self, in others and in self as well as others.

पाउणित्ता तस्स ठाणस्स अणालोइयअपडिक्कंता कालमासे कालं किच्चा उक्कोसेणं लंतए कप्पे देवकिब्विसिएसु देवकिब्वि-

सियत्ताए उववत्तारो भवंति। तहिं तेसिं गतो तेरससागरोवमाइं ठिती। अणाराहगा। सेसं तं चेव ॥१५॥

श्रमण पर्याय का पालन कर उन पाप-स्थानों की आलोचना, प्रतिक्रमण नहीं करते हुए मृत्यु काल आ जाने पर देहत्याग—मरण प्राप्त कर वे उत्कृष्ट लान्तक कल्प संज्ञक छट्ठे देवलोक में किल्विषिक नामक देवों में, जिन का चाण्डाल की तरह साफ-सफाई करना कार्य होता है, किल्विषिक देव के रूप से उत्पन्न होते हैं। अपने स्थान के अनुरूप वहाँ उनकी गति होती है। वहाँ उनकी स्थिति—आयुष्य-परिमाण तेरह सागरोपम प्रमाण होती है। वे आराधक नहीं होते हैं। अवशेष वर्णन पूर्ववत् जानना चाहिये ॥१५॥

Such monks, when they pass away at a certain point in eternal time, without discussion and without atonement, are born in the heaven named Lāntaka, among the Caṇḍāla-like gods, as valet gods. Their length of stay there is thirteen *sāgaropamas*. They do not propitiate rebirth there. The rest as before. 15

संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च योनिकों का उपपात

Rebirth of Five-organ Animals with Mind

से जे इमे सण्णिपंचिंदियतिरिक्खजोणिया पज्जत्तया भवंति तं जहा—जलयरा खहयरा थलयरा।

ये जो संज्ञी—मन सहित, पंचेन्द्रिय—श्रोत्र, चक्षु, घ्राण, रसना और स्पर्शन इन्द्रियों से युक्त, पर्याप्त—आहार, शरीर, इन्द्रिय, श्वासोच्छ्वास, भाषा तथा मन इन छः पर्याप्तियों से युक्त, तिर्यग् योनिक—पशु, पक्षी आदि के जीव होते हैं, जो इस प्रकार हैं: जलचर—जल में चलने वाले, खेचर—आकाश में उड़ने वाले, स्थलचर—पृथ्वी पर चलने वाले।

There are five-organ animals with mind who have attainments. They are : the aquatics, those roaming on the earth and those who fly in the sky.

तेसि णं अत्थेगइयाणं सुभेणं परिणामेणं पसत्थेहिं अज्झवसाणेहिं लेसाहिं विसुज्झमाणाहिं तयावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमेणं ईहावूहमग्गणगवेसणं करेमाणाणं सण्णीपुव्वजाईसरणे समुप्पज्जइ ।

उनमें से कई जीवों के शुभ परिणाम—पुण्यात्मक अन्तःपरिणति, प्रशस्त अध्यवसाय—उत्तम मनःसंकल्प, तथा विशद्ध होती हुई लेश्याओं—अन्तः परिणतियों के कारण तदावरणीय—पूर्व जन्म की स्मृति के आवरक कर्मों के क्षयोपशम से ईहा—यह क्या है ? यों है या दूसरी तरह से है ? —इस प्रकार सत्य अर्थ के आलोचन में अभिमुख बुद्धि, अपोह—यह इस प्रकार है, ऐसी निश्चयात्मक बुद्धि, मार्गण—अन्वय धर्मोन्मुख चिन्तन—अमुक के होने पर अमुक होता है, इस प्रकार का चिन्तन, गवेषण व्यतिरेक धर्मोन्मुख चिन्तन—अमुक के न होने पर अमुक नहीं होता है ऐसा चिन्तन करते हुए अपनी संज्ञित्व-अवस्था से पहले के भवों की स्मृति—जातिस्मरण ज्ञान उत्पन्न हो जाता है।

Of these, some have good luck, wholesome perseverence and pure tinge, because of which they are able to exhaust or tranquilise their past *karma*, because of which, further, they acquire the knowledge and capacity to know about the true nature of things, about their being as well as non-being, and therefrom, because of their being animals with a mind which helps them to recollect things done in previous births, they recover their memory of past lives.

तए णं ते समुप्पण्णजाइसरा समाणा सयमेव पंचाणुव्वयाइं पडिवज्जंति । पडिवज्जित्ता बहूहिं सीलव्वयगुणवेरमणपच्चक्खाण-पोसहोववासेहिं अप्पाणं भावेमाणा बहूइं वासाइं आउयं पालेंति ।

जाति स्मरण ज्ञान के उत्पन्न होते ही वे स्वयं पांच अणुव्रत—स्थूल प्राणातिपात विरमण, स्थूल मृषावाद विरमण, स्थूल अदत्तादान विरमण, स्वदार संतोष और इच्छा परिमाण स्वीकार करते हैं। ऐसा कर—स्वीकार कर अनेकविध शिक्षाव्रत—सामायिक, देशावकाशिक, पौषधोपवास और अतिथि संविभाग, गुणव्रत—अनर्थदण्ड विरमण, दिग्व्रत और उपभोग-परिभोग परिमाण, विरमण—विरति, प्रत्याख्यान—परित्याग, पौषधोपवास आदि द्वारा अपनी आत्मा को भावित—अनुप्राणित करते हुए बहुत वर्षों तक स्व आयुष्य का पालन करते हैं अर्थात जीवित रहते हैं।

With the recovery of a long memory of past lives, they themselves court the five lesser vows, and live for many years practising restraints, controls and atonement, living temporarily like a monk and observing fasts.

पालित्ता भत्तं पच्चक्खंति। बहूइं भत्ताइं अणसणाए छेयंति। छेइत्ता आलोइय पडिक्कंता समाहिपत्ता कालमासे कालं किच्चा उक्कोसेणं सहस्सारे कप्पे देवत्ताए उववत्तारो भवंति। तहिं तेसिं गती अट्ठारस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता। परलोगस्स आराहगा। सेसं तं चेव ॥१६॥

आयुष्य का पालन कर भक्त का प्रत्याख्यान करते हैं। बहुत से भोजन के समयों को बिना खाये-पीये ही काटते हैं। ऐसा कर फिर वे अपने पाप स्थानों की आलोचना कर, उन से प्रतिक्रमण—प्रतिनिवृत्त होकर समाधि-अवस्था प्राप्त करते हैं और मृत्यु काल आ जाने पर देह त्याग कर उत्कृष्ट सहस्रार कल्प नामक आठवें देवलोक में देव रूप में उत्पन्न होते हैं। वहाँ अपने स्थान के अनुरूप उनकी गति होती है। वहाँ उनकी स्थिति—आयुष्य परिमाण अठारह सागरोपम प्रमाण होती है। वे परलोक के आराधक होते हैं। अवशेष वर्णन पूर्ववत् जानना चाहिये। ॥१६॥

They give up food and miss many a meal. They discuss their lapses and be careful not to indulge in them any more.

They enter into a state of trance. Living like this for many years, they die at a point in the eternal flow of time and are born in heaven called Sahasrāra celestial beings. The length of their stay in this heaven is 18 *sāgaropamas*. They propitiate next birth. The rest as before. 16

आजीविकों का उपपात

Rebirth of the Ājīvikas

से जे इमे गामागर जाव...संनिवेसेसु आजीविका भवंति तं जहा—दुघरंतरिया तिघरंतरिया सत्तघरंतरिया उप्पलबेंटिया घरसमुदाणिया विज्जुअंतरिया उट्टियासमणा।

ये जो ग्राम, आकर—नमक आदि के उत्पत्ति-स्थान,...यावत् सन्निवेश—झोपड़ियों से युक्त बस्ती या सार्थवाह व सेना आदि के ठहरने के स्थान में आजीविक—नियतिवादी होते हैं, जो इस प्रकार हैं: दो घरों को छोड़ कर एक घर से भिक्षा लेने वाले, तीन घरों के अन्तर से—तीन घरों को छोड़कर भिक्षा लेने वाले, सात घरों को छोड़ कर भिक्षा लेने वाले, नियम विशेष से भिक्षा में केवल कमल-डंठल लेने वाले, प्रत्येक घर से भिक्षा लेने वाले, जब विद्युत्—विजली चमकती हो, तब भिक्षा ग्रहण नहीं करने वाले, मिट्टी से निर्मित नाद जैसे बड़े वर्तन में प्रवेश कर के तप करने वाले।

In the villages, towns etc., till *sannivesas*, there live the Ājivikas, such as, those who beg from every third household, those who beg from every fourth household, those who beg from every eighth household, those who accept the lotus stalk as offer, those who beg from every household, those who do not accept an offer after a lightning flash, and those who practise penance in a big earthen jar.

तेणं एयारूवेणं विहारेणं विहरमाणा वहूइं वासाइं परियायं पाउणित्ता कालमासे कालं किच्चा उक्कोसेणं अच्चुए कप्पे देवत्ताए उववत्तारो भवंति। तहिं तेसिं गती बावीसं सागरोवमाइं ठिती। अणाराहगा। सेसं तं चेव ॥१७॥

वे इस प्रकार के आचार द्वारा विहार करते हुए—जीवन व्यतीत करते हुए वहुत वर्षों तक आजीविक-पर्याय का पालन कर मृत्युकाल आ जाने पर देहत्याग कर उत्कृष्ट अच्युत कल्प नामक बारहवें देवलोक में देव रूप में उत्पन्न होते हैं। वहाँ अपने स्थान के अनुरूप उनकी गति होती है। वहाँ उनकी स्थिति—आयुष्य परिमाण बाईस सागरोपम प्रमाण होती है। वे आराधक नहीं होते हैं। शेष वर्णन पूर्ववत् जानना चाहिये ॥१७॥

Practising penance like this for many years, they pass away at a point in eternal time, to take birth in Acyutakalpa as celestial beings. The length of their stay there is 22 *sāgaropamas*. They do not propitiate next birth. The rest as before. 17

अत्तुक्कोसियों का उपपात

Rebirth of those who extol themselves

से जे इमे गामागर जाव...सण्णिवेसेसु पव्वइया समणा भवंति तं जहा—अत्तुक्कोसिया परपरिवाइया भूइकम्मिया भुज्जो भुज्जो कोउयकारका। ते णं एयारूवेणं विहारेणं विहरमाणा बहूइं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणंति। पाउणित्ता तस्स ठाणस्स अणालोइय अपडिक्कंता कालमासे कालं किच्चा उक्कोसेणं अच्चुए कप्पे आभिओगिएसु देवेसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति। तहिं तेसिं गई बावीसं सागरोवमाइं ठिइ। परलोगस्स अणाराहगा सेसं तं चेव ॥१८॥

ये जो ग्राम, आकर—नमक आदि के उत्पत्ति-स्थान,...यावत् सन्निवेश—झोपड़ियों से युक्त वस्ती या सार्थवाह, सेना आदि के ठहरने के स्थान में प्रव्रजित—दीक्षित श्रमण होते हैं, जो इस प्रकार हैं: आत्मोत्कर्षक—अपना ही उत्कर्ष दिखाने वाले, अपना वड़प्पन वखानने वाले, पर-परिवादक—औरों की निन्दा करने वाले, भूतिकर्मिक—ज्वर आदि व्यथा, उपद्रव शान्त करने के लिये अभिमन्त्रित भस्म आदि देने वाले, कौतुककारक—भाग्योदय आदि के निमित्त चमत्कारपूर्ण बातें वार-वार करने वाले, वे इस प्रकार की चर्या—आचार लिये विहार करते हुए, जीवन यापन करते हुए बहुत वर्षों तक श्रमण-पर्याय का पालन करते हैं। अपने गृहीत पर्याय का पालन कर वे अपने पाप स्थानों की आलोचना नहीं करते हुए, उनसे प्रतिक्रमण—प्रतिनिवृत्त नहीं होते हुए मृत्यु काल आ जाने पर देह त्यागकर उत्कृष्ट अच्युत कल्प—वारहवें देव लोक में आभियोगिक देवों में—सेवक वर्ग के देवों में देव रूप में उत्पन्न होते हैं। अपने स्थान के अनुरूप वहाँ उनकी गति होती है। वहाँ उनकी स्थिति—आयुष्य परिमाण वाईस सागरोपम प्रमाण होती है। वे परलोक के आराधक नहीं होते हैं। अवशेष वर्णन पूर्ववत् जानना चाहिये।। १८।।

In the villages, towns, till *sannivesas,* there are Śramaṇas who are initiated into monkhood. They are: some who extol themselves, some who decry others, those who offer a pinchful of ashes to serve as antidote, and those who try to improve their luck again and again through propitiatory activity. They live like this in the Śramaṇa order for many years, but discuss not their lapses nor offer atonement, so that, passing away at a certain point in eternal time, they are born in Acyutakalpa among the valet gods as celestial beings. Their span of life there is 22 *sāgaropamas.* They do not propitiate the next birth. The rest as before. 18

निह्लवकारियों का उपपात

Rebirth of the Distorters

से जे इमे गामागर जाव...सण्णिवेसेसु णिण्हगा भवंति तं

जहा—बहुरया जीवपएसिया अव्वत्तिया सामुच्चेइया दोकिरिया तेरासिया अबद्धिया ।

ये जो ग्राम, आकर—नमक आदि के उत्पत्ति-स्थान,...यावत् सन्निवेश—झोपड़ियों से युक्त बस्ती, अथवा सार्थवाह तथा सेना आदि के ठहरने के स्थान में निह्नव—जिनोक्त अर्थ के अपलापक होते हैं, जो इस प्रकार हैं : बहुरत—अनेक समयों के द्वारा ही कार्य की निष्पत्ति मानने वाले, जीव-प्रादेशिक—एक प्रदेश भी कम हो, जीव जीवत्व युक्त नहीं कहा जा सकता, अतएव जिस एक प्रदेश की पूर्णता से जीव, जीव रूप से माना जाता है, वही एक-प्रदेश जीव है, ऐसा मानने वाले, अव्यक्तिक—समस्त जगत् अव्यक्त है, ऐसा मानने वाले, सामुच्छेदिक—नरक, तिर्यञ्च आदि भावों का प्रतिक्षण क्षय होता है, ऐसे मत को मानने वाले, द्वैक्रिय—शीतलता एवं उष्णता आदि की अनुभूतियां एक ही समय में साथ होती हैं, ऐसी मान्यता को मानने वाले, त्रैराशिक—जीव, अजीव, और नो-जीव रूप ऐसी तीन राशियों को मानने वाले, अबद्धिक—कर्म जीव के साथ बँधता नहीं, वह केंचुल की तरह जीव का मात्र स्पर्श किये साथ लगा रहता है, ऐसे मत को मानने वाले ।

In the villages, towns, etc.. till *sannivesas*, there are the distorters, such as, those who believe that a work is done over a long time, those who believe that a space-point (*pradeśa*) is itself the organism, those who believe that the universe cannot be expressed in words, those who believe that the infernal and other states are losing every moment, those who believe that two activities are simultaneously felt, those who believe in three fundamentals, and those who believe that the *jīva* is merely touched by *karma* and not intermingled with it.

इच्चेते सत्त पवयणणिण्हगा केवल(लं)चरियालिंगसामण्णा मिच्छदिट्ठी वहूहिं असब्भावुब्भावणाहिं मिच्छत्ताभिणिवेसेहि य

अप्पाणं च परं च तदुभयं च वुग्गाहेमाणा वुप्पाएमाणा विहरित्ता बहूइं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणंति ।

वे सातों ही निह्नव जिन प्रवचन—जैन सिद्धान्त या वीतराग वाणी का अपलाप करने वाले, अथवा विपरीत प्ररूपणा करने वाले होते हैं। वे केवल चर्या—भिक्षा याचना, तथा लिंग—रजोहरण आदि चिन्हों में श्रमणों के समान होते हैं। वे मिथ्यादृष्टि हैं बहुत से असद्भाव—जिन का अस्तित्व नहीं है, ऐसी अविद्यमान वस्तुओं की निराधार परिकल्पना द्वारा, मिथ्यात्व के अभिनिवेश द्वारा, अपने को, दूसरों को, तथा स्व-पर इन दोनों को दुराग्रह—असत्य कदाग्रह में डालते हुए, दृढ़ करते हुए, जैन सिद्धान्त के विरुद्ध संस्कार जमाते हुए बहुत वर्षों तक श्रमण-पर्याय—महाव्रतमय श्रमण-जीवन यापन करते हैं।

Those are the seven types who distort the code but who are monks in their behaviour and external mark, who, because of their wrong outlook, generate wrong attitudes and falsehood in self, in others, in self and others, and direct them thither, they live like monks for many years.

पाउणित्ता कालमासे कालं किच्चा उक्कोसेणं उवरिमेसु गेवेज्जेसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति। तहिं तेसिं गती एक्कतीसं सागरोवमाइं ठिती। परलोगस्स अणाराहगा। सेसं तं चेव ॥ १९ ॥

वे अपने गृहीत पर्याय का पालन कर मृत्यु-काल आ जाने पर देहत्याग कर उत्कृष्ट ऊपरी ग्रैवेयक देवों में देव रूप में उत्पन्न होते हैं। अपने स्थान के अनुरूप वहाँ उनकी गति होती है। वहाँ उनकी स्थिति—आयुष्य परिमाण इकतीस सागरोपम प्रमाण होती है। वे परलोक के आराधक नहीं होते हैं। अवशेष वर्णन पूर्ववत् जानना चाहिये ॥१९॥

Then at a point in eternal time, they pass away and are reborn in the upper Graiveyakas as celestial beings. The span of their life there is 31 *sāgaropamas*. They propitiate not rebirth. The rest as before. 19

प्रतिविरत-अप्रतिविरत अल्प आरम्भियों का उपपात

Rebirth of people who are restrained, unrestrained and cause little harm, etc.

से जे इमे गामागर जाव...सण्णिवेसेसु मणुया भवंति तं जहा—अप्पारंभा अप्पपरिग्गहा धम्मिया धम्माणुया धम्मिट्ठा धम्मक्खाई धम्मप्पलोइया धम्मपलज्जणा धम्मसमुदायारा धम्मेणं चेव वित्तिं कप्पेमाणा सुसीला सुव्वया सुप्पडियाणंदा ।

ये जो ग्राम, आकर—नमक आदि के उत्पत्ति-स्थान,...यावत् सन्निवेश—झोपड़ियों से युक्त बस्ती, या सार्थवाह, व सेना आदि के ठहरने के स्थान में मनुष्य होते हैं, जो इस प्रकार हैं : अल्पारम्भ—थोड़ी हिंसा से जीवन चलाने वाले, अल्प परिग्रह—परिमित धन-धान्य आदि में संतोष रखने वाले, धार्मिक—श्रुत—चारित्र रूप धर्म का आचरण करने वाले, धर्मानुग—आगमानुमोदित धर्म का अनुसरण करने वाले, धर्मिष्ठ—धर्म में प्रीति रखने वाले, धर्माख्यायी—धर्म का आख्यान करने वाले, या भव्य प्राणियों को धर्म का स्वरूप बताने वाले, अथवा धर्मख्याति—धर्म द्वारा प्रसिद्धि प्राप्त करने वाले, धर्मप्रलोकी—धर्म को उपादेय रूप में देखने वाले, धर्मप्ररंजन—धर्म में विशेषतया अनुरक्त रहने वाले, धर्म समुदाचार—धर्म का सम्यक् रूप से आचरण करने वाले, धर्मपूर्वक अपनी जीविका चलाने वाले, सुशील—उत्तम आचार युक्त, सुव्रत—श्रेष्ठ व्रत से युक्त, सुप्रत्यानन्द—शुभ भाव के सेवन में सदा प्रसन्नचित्त रहने वाले ।

In the villages, towns, till *sannivesas*, there are men who do little harm, who have little accumulation of property,

who are pious, who pursue the spiritual path, who rate religion the highest, who preach religion, who consider religion to be palatable, who are dyed (saturated) in religion, who mould conduct as prescribed in religion, who earn livelihood in a manner not contrary to the code, who are good in their behaviour, who practise what is right and who take delight in maintaining good attitude.

साहूहिं एकच्चाओ पाणाइवायाओ पडिविरया जावज्जीवाए एकच्चाओ अपडिविरया एवं जाव...परिग्गहाओ। एकच्चाओ कोहाओ माणाओ मायाओ लोहाओ पेज्जाओ कलहाओ अब्भक्खाणाओ पेसुण्णाओ परपरिवायाओ अरतिरतीओ मायामोसाओ मिच्छादंसणसल्लाओ पडिविरया जावज्जीवाए एकच्चाओ अपडिविरया।

वे साधुओं के पास—साक्ष्य से अंशतः—स्थूल रूप में जीवन भर के लिये हिंसा से प्रतिविरत—निवृत होते हैं, अंशतः—सूक्ष्म रूप में अप्रतिविरत—अनिवृत्त होते हैं, इसी प्रकार...यावत् परिग्रह से, क्रोध से, मान से, माया से, लोभ से, प्रेय—अप्रगट माया व लोभजनित प्रिय या रोचक भाव से, द्वेष—अव्यक्त मान व क्रोध जनित अप्रिय या अप्रीति रूप भाव से, कलह—लड़ाई-झगड़ा से, अभ्याख्यान—मिथ्या दोषारोपण से, पैशुन्य—चुगली, तथा पीठ पीछे किसी के होते-अनहोते दोषों का प्रगटीकरण, पर परिवाद—निन्दा से, अरति—मोहनीय कर्म के उदय के परिणाम स्वरूप संयम में अरुचि रखना, रति—मोहनीय कर्म के उदय के परिणाम स्वरूप असंयम में सुख मानना, माया-मृषा—छलपूर्वक झूठ बोलना, मिथ्या-दर्शन-शल्य—मिथ्या-विश्वास रूप कांटे से स्थूल रूप में जीवन भर के लिये प्रतिविरत—निवृत होते हैं और सूक्ष्म रूप से अप्रतिविरत—अनिवृत होते हैं।

Who under the advice of monks desist for a while from slaughter but not for their whole life, till accumulation of property. They desist for a while from anger,

pride, attachment, greed, lust, aversion, quarrel, rejection, slander, speaking ill of others, restlessness and non-restlessness, false-hood and the thorn of wrong faith by their mind, words and body, but not for their whole life.

एकच्चाओ आरंभसमारंभाओ पडिविरया जावज्जीवाए एकच्चाओ अपडिविरया। एकच्चाओ करणकारावणाओ पडि-विरया जावज्जीवाए एकच्चाओ अपडिविरया। एकच्चाओ पयणपयावणाओ पडिविरया जावज्जीवाए एकच्चाओ पयणपयाव-णाओ अपडिविरया।

अंशतः स्थूल रूप में जीवन भर के लिये आरम्भ-समारम्भ से प्रतिविरत—निवृत होते हैं, अंशतः सूक्ष्म रूप से अप्रतिविरत—अनिवृत्त होते हैं। वे अंशतः स्थूल रूप में जीवन भर के लिये किसी क्रिया के करने-कराने से निवृत होते हैं, और अंशतः सूक्ष्म रूप से अनिवृत्त होते हैं। वे जीवन भर के लिये अंशतः स्थूल रूप से पकाने, पकवाने से विरत होते हैं। अंशतः सूक्ष्म रूप से अविरत होते हैं।

Who desist in part from slaughter and from causing slaughter and in part do not desist, who desist in part from action and instigating action and in part do not desist, who desist in part from cooking and ordering others to cook and in part do not so desist, and like that for life.

एकच्चाओ कोट्टणपिट्टणतज्जणतालणवहबंधपरिकिलेसाओ पडि-विरया जावज्जीवाए एकच्चाओ अपडिविरया। एकच्चाओ ण्हाणमद्दणवण्णगविलेवणसद्दफरिसरसरूवगंधमल्लालंकाराओ पडि-विरया जावज्जीवाए एकच्चाओ अपडिविरया।

वे अंशतः स्थूल रूप में जीवन भर के लिये कूटने, पीटने, तर्जित—कड़े वचनों द्वारा भर्त्सना करने, ताड़ना करने, थप्पड़ आदि के द्वारा प्रताड़ित करने, वध—प्राण लेने, बन्ध—रस्सी आदि से बांधने, परिक्लेश—पीड़ा/व्यथा देने से प्रतिविरत—निवृत होते हैं। अंशतः सूक्ष्म रूप से अप्रतिविरत—अनिवृत होते हैं। वे अंशतः स्थूल रूप में जीवन भर के लिये स्नान, मर्दन, वर्णक, विलेपन, शब्द, स्पर्श, रस, रूप, गन्ध, माला और अलंकार से निवृत्त होते हैं और अंशतः सूक्ष्म रूप से अनिवृत्त होते हैं।

Who keep aside in part from activities like beating, hurting, rebuking, giving a slap, killing, binding with a rope, and causing pain, and in part do not so desist, and like that for life, who desist in part from bath, rubbing, painting, besmearing, sound, touch, taste, shape, smell, garlands and ornaments, and in part do not so desist, and like that for life.

जेयावण्णे तहप्पगारा सावज्जजोगोबहिया कम्मंता परपाण-परियावणकरा कज्जंति तओ जाव...एकच्चाओ अपडिविरया तं जहा—समणोवासगा भवंति।

इसी प्रकार और भी निन्दनीय, पापात्मक प्रवृत्ति से युक्त, छल-प्रपंच के प्रयोजन से युक्त, दूसरों के प्राणों को कष्ट पहुंचाने वाले कर्म करते हैं। उनसे...यावत् जीवन भर के लिए अंशतः सूक्ष्म रूप से अप्रतिविरत—अनिवृत होते हैं जैसे कि श्रमणोपासक—श्रावक होते हैं।

And likewise, from many sinful and condemnable deeds, they desist in part, and in part do not so desist, from deceit and crookedness, or anything which is painful to others, they desist in part, and in part do not so desist, like the followers of Śramaṇa path.

अभिगयजीवाजीवा उवलद्धपुण्णपावा आसवसंवरनिज्जर-किरिया अहिगरणबंधमोक्खकुसला ।

जिन्होंने जीव, अजीव आदि पदार्थों के स्वरूप को अनेक दृष्टियों से भली-भाँति समझा है, पुण्य और पाप के अन्तर-रहस्य को पूर्णतः जाना है—प्राप्त किया है और वे आश्रव, संवर, निर्जरा, क्रिया, अधिकरण, बन्ध तथा मोक्ष में कुशल—प्रवीण हैं अर्थात् जिन्होंने इन सब को भली-भाँति अवगत किया है ।

Who are well acquainted with the distinction between soul and non-soul (matter), who have realised the distinction between virtue and vice, who know well how to check the influx of fresh *karma*, who have partly uprooted their *karmas*, who know activities, instruments, bondage and liberation.

असहेज्जाओ देवासुरणागसुवन्नजक्खरक्खसकिन्नरकिंपुरिस-गरुलगंधव्वमहोरगाइएहिं देवगणेहिं निग्गंथाओ पावयणाओ अणइक्कमणिज्जा ।

जो किसी दूसरे की सहायता के इच्छुक नहीं है—आत्म निर्भर हैं, जो देव—वैमानिक देव, असुर, नाग कुमार—भवन पति जाति के देव, सुवर्ण—ज्योतिष्क देव, यक्ष, राक्षस, किन्नर, किंपुरुष—व्यन्तर जाति के देव, गरूड़—सुवर्ण कुमार, गन्धर्व-महोरग—व्यन्तर देवविशेष, आदि देवों द्वारा निर्ग्रन्थ-प्रवचन—प्राणी की अन्तर्वर्ती ग्रन्थियों को छुड़ाने वाला आत्मानुशासनमय उपदेश से अनतिक्रमणीय—विचलित नहीं किये जा सकने योग्य है ।

Who are not desirous of any help from others, who are never swayed from the teachings of the *Nirgranthas* by the words of the gods, Asurakumāras, Nāgakumāras, Jyotiṣkas, Yakṣas, Rākṣasas, Kinnaras, Kimpuruṣas, Garuḍas, Gandharvas, Mahoragas.

णिग्गंथे पावयणे णिस्संकिया णिक्कंखिया निव्वितिगिच्छा लद्धट्ठा गहियट्ठा पुच्छियट्ठा अभिगयट्ठा विणिच्छियट्ठा अट्ठिमिंज-पेम्माणुरागरत्ता अयमाउसो ! णिग्गंथे पावयणे अट्ठे अयं परमट्ठे सेसे अणट्ठे ।

वे निर्ग्रन्थ प्रवचन में निःशंकित—संदेह-रहित, निष्कांक्षित—आकांक्षा रहित, निर्विचिकित्स—विचिकित्सा / संशय रहित, लब्धार्थ—श्रुत-चारित्र रूप धर्म के यथार्थ-स्वरूप को प्राप्त किये हुए, गृहीतार्थ—अर्थ को ग्रहण किये हुए, पृष्टार्थ—प्रश्न पूछ कर उसे स्थिर किये हुए, अभिगतार्थ—अर्थ को विविध-विवक्षाओं से विदित किये हुए, वेनिश्चितार्थ—धर्म के यथार्थ-स्वरूप में विशेष रूप से निश्चयात्मक बुद्धि रखने वाले, होते हैं । जिनकी अस्थि और मज्जा तक निर्ग्रन्थ प्रवचन के प्रेम एवं अनुराग से रंगी हुई है । उनका यह सुनिश्चित विश्वास है अर्थात् अन्तर्घोष है : हे आयुष्मन् ! निर्ग्रन्थ-प्रवचन ही अर्थ—प्रयोजन भूत है, इसके अतिरिक्त अन्य अनर्थ—अप्रयोजन भूत है ।

Who have no doubt in the words of the *Nirgranthas*, who have no inclination about the tenets of others (heretics) and their promised outcome, who have obtained the real meaning, who have accepted the meaning, who have acquired the meaning by questions, who have known the meaning from diverse standpoints, who are fully firm about the meaning, whose bones and marrows are dyed with the words of the *Nirgranthas*, and who hear within themselves, 'Oh beloved of the gods! For separating the sensient from the insensient, the words of the *Nirgranthas*, are the guide, the supreme guide, the rest being trash.'

ऊसियफलिहा अवंगुयदुवारा चियत्तंतेउरपरघरदारप्पवेसा चउद्द-सट्ठमुद्दिट्ठपुण्णमासिणीसु पडिपुण्णं पोसहं सम्मं अणुपालेत्ता समणे

णिग्गंथे फासुएसणिज्जेणं असणपाणखाइमसाइमेणं वत्थपडिग्गह-कंबलपायपुंछणणं ओसहभेसज्जेणं पडिहारएण य पीढफलगसेज्जा-संथारएणं पडिलाभेमाणा विहरंति ।

वे उन्नत स्फटिक के सदृश निर्मल चित्तवाले, अपावृतद्वार—जिनके घर के दरवाजे कभी भी बन्द नहीं रहते हों अर्थात् खुले रहते हों, त्यक्तान्तःपुर गृहद्वार प्रवेश—सभ्य जनों के आवागमन के कारण घर के भीतरी भाग में उनका प्रविष्ट होना, जिन्हें प्रिय लगता हो अथवा अन्तःपुर में जिन का प्रवेश प्रीतिकर हो, वे चतुर्दशी, अष्टमी, अमावस्या और पूर्णिमा के दिन प्रतिपूर्ण—परिपूर्ण पौषध—आत्मा की पुष्टि के लिये आहार, अब्रह्म आदि चार तरह के त्याग की एक अहर्निश की साधना का सम्यक् रूप से—निर्दोषपूर्वक अनुपालन करते हुये, श्रमण-निर्ग्रन्थों को प्रासुक—अचित्त, एषणीय—ग्रहण करने योग्य निर्दोष, अशन, पान, खाद्य, स्वाद्य, आहार, वस्त्र, पात्र, कम्बल, पाद-प्रोच्छन, औषध—जड़ी, बूटी आदि वनौषधि या एक द्रव्याश्रित वस्तु, भैषज—तैयार औषधि या अनेक द्रव्यों की समुदाय रूप वस्तु, प्रतिहारिक—लेकर वापस लौटा देने योग्य वस्तु, पाट, बाजोट, निवास-स्थान बिछाने के लिये घास आदि द्वारा प्रतिलाभित करते हुए विहार करते हैं—जीवन-यापन करते हैं ।

Whose heart is as stainless as crystal, who never shut their doors, whose entry into any one's harem, household or door is welcome, who practise with purity *pauṣadha* (living temporarily like a monk) on every fourteenth, eighth, new-moon and full-moon days and provide pure and blemish-free food, drink, dainties and delicacies, cloth, bowls, blanket, duster, medicine (single object), medicine (compound) and objects returnable after use, such as, cushion, stool, residence and wooden plank to lie upon, and live on like this.

विहरित्ता भत्तं पच्चक्खंति । ते बहूइं भत्ताइं अणसणाए छेदिंति । छेदित्ता आलोइय पडिक्कंता समाहिपत्ता कालमासे

कालं किच्चा उक्कोसेणं अच्चुए कप्पे देवत्ताए उववत्तारो भवंति। तहिं तेसिं गई बावीसं सागरोवमाइं ठिई। आराहया। सेसं तहेव ॥२०॥

इस प्रकार जीवन-यापन कर वे अन्ततः आहार का त्याग करते हैं, बहुत से भोजन-काल अनशन—निराहार द्वारा विच्छिन्न कर देते हैं अर्थात् बहुत दिनों तक बिना खाये-पीये रहते हैं। वैसा कर वे पाप-स्थानों की आलोचना और प्रतिक्रमण करते हैं। यों समाधि—शान्ति, चित्त-विशुद्धि प्राप्त कर मृत्युकाल आ जाने पर देह त्याग कर उत्कृष्ट रूप से अच्युत कल्प नामक बारहवें देवलोक में देवरूप से उत्पन्न होते हैं। अपने स्थान के अनुसार वहाँ उन की गति होती है। वहाँ उन की स्थिति—आयुष्य-परिमाण बाईस सागरोपम प्रमाण होती है। वे परलोक के आराधक होते हैं। अवशेष वर्णन पूर्ववत् जानना चाहिये। ॥२०॥

At appropriate time, they practise fast and miss many a meal, discuss, make atonement and enter into trance, then at a point in eternal time, they pass away to be born in Acyutakalpa as celestial beings, with a span of life as long as twenty-two *sāgaropamas*. They propitiate the next birth. The rest as before. 20

अनारम्भिओं का उपपात

Rebirth of those who kill not etc.

से जे इमे गामागर जाव...सण्णिवेसेसु मणुआ भवंति। तं जहा—अणारंभा अपरिग्गहा धम्मिया जाव...कप्पेमाणा सुसीला सुव्वया सुपडियाणंदा साहू सव्वाओ पाणाइवाआओ पडिविरया

जाव...सव्वाओ परिग्गहाओ पडिविरया सव्वाओ कोहाओ माणाओ मायाओ लोभाओ जाव...मिच्छादंसणसल्लाओ पडिविरया ।

जो ये ग्राम, आकर—नमक आदि के उत्पत्ति-स्थान,...यावत् सन्निवेश—झोपड़ियों से युक्त बस्ती, तथा सार्थवाह, सेना आदि के ठहरने के स्थान में मनुष्य होते हैं, जो इस प्रकार हैं: अनारम्भ—आरम्भ से रहित, अपरिग्रह—परिग्रह से रहित, धार्मिक—श्रुत और चारित्र रूप धर्म का आचरण करने वाले,...यावत् धर्मपूर्वक आजीविका चलाने वाले, सुशील—उत्तमशील—आचार युक्त, सुव्रत—श्रेष्ठ व्रत युक्त, सुप्रत्यानन्द—आत्मपरितुष्ट, वे साधुओं के पास—साक्ष्य से सब प्रकार की प्राणातिपात—हिंसा से प्रतिविरत—निवृत्त हो चुके हैं...यावत् संपूर्णतः—सब प्रकार के परिग्रह से निवृत्त हो चुके हैं। सम्पूर्णतः क्रोध से, मान से, माया से और लोभ से... यावत् मिथ्या दर्शन शल्य—मिथ्या-विश्वास रूप काँटे से प्रतिविरत—निवृत्त हो चुके हैं।

In the villages, towns, till *sanniveśas*, there are human beings, who kill not, accumulate not, who abide by the code of conduct, till who act according to religious prescription, who bear a good conduct, good vow, good attitude in which they take delight, who have enthusiasm, who are honest, who are wholly desisted from killing, from accumulation, till from anger, pride, attachment, greed, till thorn of wrong faith, who have separated the activities of their mind, words and body from these.

सव्वाओ आरंभसमारंभाओ पडिविरया। सव्वाओ करण-कारावणाओ पडिविरया । सव्वाओ पयणपयावणाओ पडिविरया । सव्वाओ कुट्टण-पिट्टण-तज्जण-तालण-वहबंध-परिकिलेसाओ पडिविरया। सव्वाओ ण्हाण-मद्दण-वण्णगविलेवण सद्दफरिस-रसरूव-गंध-मल्लालं-काराओ पडिविरया । जेयावण्णे तहप्पगारा सावज्ज-

जोगोवहिया कम्मंता परपाणपरियावणकरा कज्जंति तओवि पडिविरया जावज्जीवाए।

सर्वतः—सब प्रकार के आरंभ-समारंभ से प्रतिविरत—निवृत्त हो चुके हैं, करने एवं कराने से सर्वथा निवृत्त होते हैं, पकाने तथा पकवाने से सम्पूर्णतः निवृत्त होते हैं, वे सम्पूर्ण रूप में कूटने-पीटने तर्जित करने—कड़े वचनों द्वारा भर्त्सना करने, ताड़ना करने, थप्पड़ आदि के द्वारा प्रताड़ित करने, वध—प्राण लेने, बन्ध—रस्सी आदि से बांधने, परिक्लेश—किसी को कष्ट देने से प्रतिविरत—निवृत होते हैं। वे स्नान, मर्दन, वर्णक, विलेपन, शब्द, स्पर्श, रस, रूप, गन्ध, माला तथा अलंकार से सम्पूर्णतः प्रतिविरत—निवृत्त होते हैं। इसी प्रकार और भी पापात्मक प्रवृत्तियों से युक्त, कपटपूर्ण प्रपंच युक्त, दूसरों के प्राणों को कष्ट—व्यथा पहुँचाने वाले कर्मांशों को करते हैं। उनसे भी वे जीवन भर के लिये निवृत्त होते हैं।

They are desisted in all respects from slaughter, from torturing others and ordering others to do the same, from cooking and ordering others to cook, from beating and hurting and ordering others to do the same, from abusing, beating, killing, tying, causing grief or obstruction, desisted in all respects from bath, rubbing, painting, besmearing, from sound, touch, taste, shape and smell, from garlands and ornaments, and they have wholly separated themselves from those who indulge in torturing others and in activities involving deception, cunning, and this for whole life.

से जहाणामए अणगारा भवंति—ईरियासमिया भासासमिया जाव...इणमेव णिग्गंथं पावयणं पुरओकाउं विहरंति। तेसि णं भगवंताणं एएणं विहारेणं विहरमाणाणं अत्थेगइयाणं अणंते जाव... केवलवरणाणदंसणे समुप्पज्जइ।

जैसे कि कोई अनगार—श्रमण ऐसे होते हैं. जो ईर्या—गमन, हलन, चलन आदि क्रिया, भाषा में समित—सम्यक् रूप से प्रवृत्त अर्थात् यतनाशील होते हैं...यावत् निर्ग्रन्थ-प्रवचन—वीतराग देव की वाणी, जिनेश्वर की आज्ञा को सम्मुख रखते हुए विचरण करते हैं अर्थात् ऐसे परम-पावन आचार युक्त जीवन का सम्यक् रूप से निर्वाह करते हैं। इस प्रकार की चर्या द्वारा संयमी जीवन का निर्वाह करने वाले उन भगवन्त—पूजनीय श्रमणों में से कइयों को अनन्त अन्तरहित या अनन्त-पदार्थों के यथार्थ स्वरूप... यावत् केवल ज्ञान और केवल दर्शन समुत्पन्न होता है।

For instance, there may be some monks who are homeless, who follow the prescribed code in movement, in their speech, till who live on keeping in view the words of the *Nirgranthas*. Some from among those, while living as aforesaid, come to acquire supreme knowledge and faith.

ते बहूइं वासाइं केवलिपरियागं पाउणंति। पाउणित्ता भत्तं पच्चक्खंति। पच्चक्खित्ता बहूइं भत्ताइं अणसणाइं छेदेन्ति। छेदित्ता जस्सट्ठाए कीरइ णग्गभावे अंतं करेंति।

वे बहुत वर्षों तक केवली-पर्याय का पालन करते हैं अर्थात् कैवल्य-अवस्था में विचरण करते हैं। वे अपनी गृहीत पर्याय का पालन कर अन्ततः आहार का त्याग करते हैं। परित्याग कर बहुत से भोजन-काल अनशन द्वारा विच्छिन्न करते हैं। अर्थात् बहुत दिनों तक निराहार रहते हैं। वैसा कर जिस लक्ष्य के लिये नग्न भाव—शारीरिक संस्कारों के प्रति अनासक्ति—औदासीन्य—विरक्त बने थे...यावत् सब दुःखों को अन्त-विनष्ट कर देते हैं।

Then they live for many years in that state, the state of a *Kevalin* or Omniscient personality, after which they enter into

a long fast, missing many a meal to attain the goal for which they underwent hardships, till end all misery.

जेसिंपि य णं एगइयाणं णो केवलवरनाणदंसणे समुप्पज्जइ ते बहुइं वासाइं छउमत्थपरियागं पाउणंति। पाउणित्ता आबाहे उप्पण्णे वा अणुप्पण्णे वा भत्तं पच्चक्खंति। ते बहुइं भत्ताइं अणसणाए छेदेंति। छेदित्ता जस्सट्ठाए कीरइ णग्गभावे जाव... तमट्ठमाराहित्ता चरिमेहिं ऊसासणीसासेहिं अणंतं अणुत्तरं निव्वाघायं निरावरणं कसिणं पडिपुण्णं केवलवरणाणदंसणं उप्पाडिंति तओ पच्छा सिज्झिहिंति जाव...अंतं करेहिंति।

जिन कइयों—कतिपय श्रमणों को केवल-ज्ञान और केवल-दर्शन समुत्पन्न नहीं होता है वे बहुत वर्षों तक छद्मस्थ-पर्याय—कर्मावरण से युक्त अवस्था में विचरण करते हुए संयम का पालन करते हैं अर्थात् अध्यात्म-साधना में संलग्न रहते हैं। वे अपने गृहीत पर्याय का पालन कर फिर किसी आबाध—रोगादि विघ्न के उत्पन्न होने पर अथवा न होने पर भी वे आहार का त्याग कर देते हैं। वे बहुत से भोजन-काल अनशन—निराहार द्वारा विच्छिन्न करते हैं। अनशन सम्पन्न कर जिस लक्ष्य के लिये नग्न भाव—शारीरिक संस्कारों के प्रति अनासक्ति या जिस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु अध्यात्म-मार्ग स्वीकार किया, उसे आराधित कर—पूर्ण कर अपने अन्तिम उच्छ्वास-निःश्वास में अनन्त-अनन्त पदार्थों को जानने वाला या अन्त-रहित, अनुत्तर—सर्वाधिक श्रेष्ठ निर्व्याघात—व्यवधान रहित या बाधा-मुक्त, निरावरण—आवरणों से रहित, कृत्स्न सर्वार्थग्राहक, प्रतिपूर्ण—अपने समस्त अविभागी अंशों से समायुक्त, केवल-ज्ञान, केवल-दर्शन प्राप्त करते हैं। वे उस के बाद सिद्ध होते हैं.. यावत् सब दुःखों का अन्त करते हैं।

And those who fail to attain the state of supreme knowledge and faith, they continue to live as *chadmasthas*, with a cover of

karma, after which they may or may not have the obstruction from some disease, and they give up their food and drink, and having passed many days without food and drink missing many a meal, they too attain the goal for which they gave up clothing, etc., and at the time of their throwing out the last breath, they attain the supreme knowledge and faith, infinite, unprecedented, unobstructed, uncovered, complete and full, are perfected, till end all misery.

एगच्चा पुण एगे भयंतारो पुव्वकम्मावसेसेणं कालमासे कालं किच्चा उक्कोसेणं सव्वट्ठसिद्धे महाविमाणे देवत्ताए उववत्तारो भवंति। तहिं तेसिं गई तेत्तीसं सागरोवमाइं ठिई। आराहगा। सेसं तं चेव ॥२१॥

कई एक ही भव करने वाले अर्थात् भविष्य में केवल एक बार मनुष्य-शरीर को धारण करने वाले, भगवन्त—अनुष्ठान-विशेष का सेवन करने वाले, अथवा भयत्राता—संयम-साधना के द्वारा संसार-भय से स्वयं का परित्राण करने वाले (श्रमण जिन के) पूर्व संचित कर्मों में से कुछ क्षय अवशेष है अर्थात् क्षीण होते हुए कर्मों में से अवशिष्ट रहे हुए कर्म, उन के कारण मृत्युकाल आ जाने पर मरण प्राप्त कर—देह त्याग कर उत्कृष्ट सर्वार्थसिद्ध महाविमान में देव रूप में उत्पन्न होते हैं। अपने पद के अनुरूप वहाँ उनकी गति होती है। उनकी स्थिति—आयुष्य-परिमाण तैंतीस सागरोपम प्रमाण बतलाई गई है। वे परलोक के आराधक होते हैं। अवशेष वर्णन पूर्ववत् जानना चाहिये ॥२१॥

And maybe someone, who in a future life, takes for the last time the body of a human being, fulfils certain practices and assumes safe-guard against fear, because of some *karma* not yet extinct in the bunch of other *karma* which are fast fading out, is born as a being in the great *vimāna* called

Sarvārthasiddha, where the span of stay is as long as 33 *sāgaropamas*. They propitiate next birth. The rest as before. 21

सर्व काम विरतों का उपपात

Rebirth of those who are desisted from all desires

से जे इमे गामागर जाव·· सण्णिवेसेसु मणुआ भवंति। तं जहा—सव्वकामविरया सव्वरागविरया सव्वसंगातीता सव्वसिणेहातिक्कंता अक्कोहा णिक्कोहा खीणक्कोहा एवं माणमायालोहा अणुपुव्वेणं अट्ठकम्मपयडीओ खवेत्ता उप्पिं लोयग्गपइट्ठाणा हवंति ॥२२॥४१॥

ये जो ग्राम, आकर—नमक आदि के समुत्पत्ति-स्थान,...यावत् मनुष्य होते हैं, जो इस प्रकार हैं: सर्वकामविरत—समस्त शब्द, वर्ण, गन्ध आदि काम्य-विषयों से निवृत्त या उन में उत्सुकता न रखना, सर्वराग विरत—सब प्रकार के रागात्मक परिणामों से हटे हुए, सर्व संगातीत सब प्रकार की आसक्तियों से निवृत्त, सर्वस्नेहातिक्रान्त—सब प्रकार के प्रेमानुराग से विमुक्त—रहित, अक्रोध—क्रोध को विफल करने वाले, निष्क्रोध—क्रोध का उदय ही नहीं होने देना या जिन्हें क्रोध आता ही नहीं है, क्षीण क्रोध—अन्तरंग—समरांगण में क्रोध निःशेष कर देना या जिन का क्रोध-कषाय—क्रोध मोहनीय कर्म क्षीण—क्षय हो गया है, इसी प्रकार जिन के मान, माया और लोभ विस्मृत हो गये हों, वे आठों कर्म-प्रकृतियों का क्रमशः क्षय करते हुए लोक के अग्र भाग में प्रतिष्ठित अवस्थित होते हैं—मोक्ष प्राप्त करते हैं ॥२२॥४१॥

In the villages, towns, till *sanniveśas*, there may be men who are desisted from all desires, from all attachments, from

all relations with the world, from all affection, who are capable to baffle all anger, who are able not to let anger come up, who have made the existence of anger insignificant, and likewise with pride, attachment, greed, who reduce the eight types of *karma* to insignificance, they are lodged at the crest of the universe. 22, 41

केवलिसमुद्घात के पुद्गल

Matter of Kevali-transformation

गौतम : अणगारे णं भंते ! भाविअप्पा कवलिसमुग्घाएणं समोहणित्ता केवलकप्पं लोयं फुसित्ता णं चिट्ठइ ?

महावीर : हंता चिट्ठइ ।

गौतम : से णूणं भंते ! केवलकप्पे लोए तेहिं णिज्जरा-पोग्गलेहिं फुडे ?

महावीर : हंता फुडे ।

गौतम : छउमत्थे णं भंते ! मणुस्से तेसिं णिज्जरा-पोग्गलाणं किंचि वण्णेणं वण्णं गंधेणं गंधं रसेणं रसं फासेणं फासं जाणइ पासइ ?

महावीर : गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे ।

गौतम : से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—छउमत्थे णं मणुस्से तेसिं णिज्जरापोग्गलाणं णो किंचि वण्णेणं वण्णं जाव... जाणइ पासइ ?

महावीर : गोयमा ! अयं णं जंबुद्दीवे दीवे सव्वदीव-समुद्दाणं सव्वब्भंतरए सव्वखुड्डाए वट्टे तेल्लपूयसंठाणसंठिए वट्टे रहचक्कवालसंठाणसंठिए वट्टे पुक्खरकण्णियासंठाणसंठिए वट्टे पडिपुण्णचंदसंठाणसंठिए एक्कं जोयणसयसहस्सं आयामविक्खंभेणं

तिण्णि जोयणसयसहस्साइं सोलससहस्साइं दोण्णि य सत्तावीसे जोयणसए तिण्णि य कोसे अट्ठावीसं च धणुसयं तेरस य अंगुलाइं अद्धंगुलियं च किंचि विसेसाहिए परिक्खेवेणं पण्णत्ते ।

गौतम : हे भगवन् ! भावितात्मा—विशुद्धात्मा—अध्यात्म मार्ग का अनुसर्ता अनगार—श्रमण केवलि समुद्घात द्वारा—मुक्ति के निकट अधिकारी आत्मा के प्रदेशों से सम्बद्ध कर्मों की साम्यावस्था के लिये होने वाली एक विशिष्ट प्रकार की स्वाभाविक आत्मिक प्रक्रिया या आत्म प्रदेशों को शरीर से बाहर निकाल कर, विस्तृत होकर क्या सम्पूर्ण लोक का स्पर्श कर स्थित होते हैं ?

महावीर : हाँ गौतम ! स्थित होते हैं—रहते हैं।

गौतम : हे भगवन् ! उन निर्जरा प्रधान—कर्मावस्था को प्राप्त नहीं हुए पुद्गलों से—खिरे हुए पुद्गलों से समूचा लोक स्पृष्ट होता है ?

महावीर : हाँ गौतम, ऐसा होता है।

गौतम : हे भगवन् ! छद्मस्थ—अष्टविध कर्मावरण युक्त या केवलज्ञान से रहित मनुष्य क्या उन निर्जरा प्रधान पुद्गलों के किञ्चित् वर्ण रूप से वर्ण को, गन्ध रूप से गन्ध को, रस रूप से रस को, और स्पर्श रूप से स्पर्श को जानता है, देखता है ?

महावीर : हे गौतम ! यह आशय संगत नहीं है, अर्थात् ऐसा संभव नहीं है ।

गौतम : हे प्रभो ! यह किस आशय—अभिप्राय से कहा जाता है कि छद्मस्थ-व्यक्ति उन अकर्मावस्थाप्राप्त पुद्गलों—खिरे हुए पुद्गलों के वर्ण रूप से वर्ण को, गन्ध रूप से गन्ध को, रस रूप से रस को तथा स्पर्श रूप से स्पर्श को किञ्चित् जरा भी नहीं जानता है, नहीं देखता है ?

महावीर : गौतम ! यह जम्बूद्वीप नामक द्वीप सभी द्वीप समुद्रों के बिलकुल बीचोबीच स्थित है। यह आकार में सब से छोटा है, गोल है। तेल में पके हुए पूये के सदृश गोल है। यह जम्बूद्वीप रथ के पहिये के आकार के समान गोल है। कमल-कर्णिका—कमल के बीज-कोष के समान गोलाकार है। पूर्ण चन्द्र के आकार के सदृश गोल है। यह

(जम्बूद्वीप) एक लाख योजन-प्रमाण लम्बा और चौड़ा है। इसकी परिधि तीन लाख सोलह हजार दो सौ सत्ताइस योजन तीन कोस एक सौ अट्ठाईस धनुष तथा साढ़े तेरह अंगुल से और कुछ अधिक बतलाई गई है।

Gautama : *Bhante*! Does a pure-hearted monk expand himself and be in touch with the entire universe through *kevalī samudghāta* ?

Mahāvīra : Yes, he does.

Gautama : *Bhante*! Is the entire universe covered by *pudgala* (matter) which is scattered in the process ?

Mahāvīra : Yes, it is.

Gautama : *Bhante*! Is it possible for a novice (*chadmastha*), who is not equipped with *kevala*-knowledge, to know and to see colour, smell, taste, touch of the scattered matter as above ?

Mahāvīra : No, it is not possible.

Gautama : *Bhante*! Why do you say so etc. ?

Mahāvīra : Gautama ! Jambūdvīpa, which is at the centre of all the isles (continents) and oceans and is the smallest, is round like a *pūā* (a sweet cake), like a chariot-wheel, like the central seed-stand of a lotus, like the full-moon. It has the dimension of 1 lakh *yojanas* in length as well as breadth, with a circumference which is slightly more than 3,16,227 *yojanas*, 3 *krośas*, 128 *dhanuṣ* and 13 *aṅgulas* (fingers).

देवे णं महिड्ढीए महज्जुइए महब्बले महाजसे महासुक्खे महाणुभावे सविलेवणं गंधसमुग्गयं गिण्हइ। गिण्हित्ता तं अवदालेइ। अवदालित्ता जाव...इणामेवत्तिकट्टु केवलकप्पं जंबुद्दीवं तिहिं अच्छराणिवाएहिं तिसत्तखुत्तो अणुपरिअट्टित्ता णं हव्वमागच्छेज्जा। से णूणं गोयमा ! से केवलकप्पे जंबुद्दीवे दीवे तेहिं घाणपोग्गलेहिं फुडे ?

गौतम : हंता फुडे।

महावीर : छउमत्थे णं गोयमा! मणुस्से तेसिं घाण-पोग्गलाणं किंचि वण्णेणं वण्णं जाव...जाणंति पासंति ?

गौतम : भगवं! णो इणट्ठे समट्ठे।

महावीर : से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ—छउमत्थे णं मणुस्से तेसिं णिज्जरापोग्गलाणं नो किंचि वण्णेणं वण्णं जाव... जाणइ पासइ। ए सुहुमा णं ते पोग्गला पण्णत्ता। समणाउसो! सव्वलोयंपि य णं ते फुसित्ता णं चिट्ठंति।

एक अत्यन्त ऋद्धिमान्, परम द्युतिमान, अत्यधिक बलवान्, महान् यशस्वी, बहुत सुखी, विशेष प्रभावशाली, देव चन्दन, केसर आदि विलेपन के योग्य सुगन्धित द्रव्य से परिपूर्ण भरे हुए डिब्बे को लेता है। उसे लेकर—खोलता है। खोलकर...यावत् उस सुगन्धित द्रव्य को सर्वत्र बिखेरता हुआ, तीन बार चुटकी बजाने जितने समय में सम्पूर्ण जम्बूद्वीप नामक द्वीप की इक्कीस बार परिक्रमाएँ कर तुरन्त आ जाता है। तो हे गौतम! क्या समग्र जम्बूद्वीप उन घ्राण पुद्गलों—सुगन्धित परमाणुओं से स्पृष्ट—व्याप्त हो जाता है ?

गौतम : हाँ भगवन्! हो जाता है।

महावीर : हे गौतम! क्या छद्मस्थ—विशिष्ट ज्ञान—केवल ज्ञान से रहित या कर्मावरण युक्त मनुष्य घ्राण पुद्गलों—सुगन्धित-परमाणुओं को वर्ण रूप से वर्ण...यावत् आदि को जरा भी जानता है, देखता है ?

गौतम : भगवन्! ऐसा संभव नहीं है।

महावीर : गौतम! इसी अभिप्राय से यह कहा जाता है कि छद्मस्थ—कर्मावरण से युक्त मनुष्य उन निर्जराप्रधान—खिरे हुए पुद्गलों के वर्ण रूप से वर्ण को...यावत् आदि को जरा भी नहीं जान पाता है, नहीं देख पाता है। आयुष्मान् श्रमण! वे सम्पूर्ण लोक को स्पृष्ट—स्पर्श कर स्थिर रहते हैं।

A god who has great fortune, great glow, great strength, great fame, great happiness and great heart, opens a box containing scented cream and moves round the whole of Jambūdvīpa twenty-one times in as much time as is taken by two fingers rubbed together thrice to make a sound and returns quickly. Then Gautama, does that smell pervade the whole of Jambūdvīpa ?

Gautama : Yes, it does.

Mahāvīra : Gautama ! Does an ordinary man know and see that scented cream ?

Gautama : No, that is not possible.

Mahāvīra : On the same ground, it has been said that an ordinary man does not know nor see the matter which is scattered in the process. This is so because matter is so minute and fine. And, oh long-lived monk, matter particles remain there touching the whole universe.

केवली समुद्‌घात का कारण

Causes of Kevalī-Samudghāta

गौतम : कम्हा णं भंते ! केवली समोहणंति ? कम्हा णं केवली समुग्घायं गच्छंति ?

महावीर : गोयमा ! केवलीणं चत्तारि कम्मंसा अपलिक्खीणा भवंति । तं जहा—वेयणिज्जं आउयं णामं गुत्तं । सव्वबहुए से वेयणिज्जे कम्मे भवइ । सव्वत्थोवे से आउए कम्मे भवइ । विसमं समं करेइ बंधणेहिं ठिईहि य । विसमसमकरणयाए बंधणेहिं ठिईहि य एवं खलु केवली समोहणंति । एवं खलु केवली समुग्घायं गच्छंति ।

गौतम : सव्वे वि णं भंते ! केवली समुग्घायं गच्छंति ?
महावीर : णो इणट्ठे समट्ठे ।

अकित्ता णं समुग्घायं अणंता केवली जिणा ।
जरामरणविप्पमुक्का सिद्धिं वरगइं गया ।।१

गौतम : हे प्रभो ! केवली किस कारण से समुद्घात—आत्म प्रदेशों को शरीर से बाहर निकाल कर विस्तीर्ण करते हैं—फैलाते हैं ? किस कारण, फैले हुए आत्म प्रदेशों की स्थिति को प्राप्त करते हैं ?

महावीर : गौतम ! केवलियों के ये चार कर्मांश सम्पूर्ण रूप में अपरिक्षीण होते हैं—सर्वथा क्षीण नहीं होते हैं, जो इस प्रकार हैं—वेदनीय, आयुष्य, नाम और गोत्र । इन चार कर्मों में वेदनीय कर्म सब से अधिक होता है । आयुष्य कर्म सब से कम होता है । बन्धन—प्रदेश बन्ध और अनुभाग बन्ध, तथा स्थिति द्वारा विषम—उन कर्मों को वे सम करते हैं । इस प्रकार केवली बन्धन एवं स्थिति द्वारा विषम कर्मों को सम करने के लिये आत्मप्रदेशों को विस्तीर्ण करते हैं—उन्हें फैलाते हैं। अर्थात् समुद्घात करते हैं । वे समुद्घात को प्राप्त होते हैं ।

गौतम : भगवन् ! क्या सभी केवली समुद्घात को प्राप्त होते हैं—समुद्घात करते हैं अर्थात् आत्म प्रदेशों को विस्तीर्ण करते हैं ?

महावीर : गौतम ! यह आशय संगत नहीं हैं—ऐसा नहीं होता है । समुद्घात किये बिना ही अनन्त केवली—जिन वीतराग (जन्म), जरा—वृद्धावस्था तथा मृत्यु से सर्वथा रहित होकर सिद्धि—सिद्धावस्था रूप सबसे उत्कृष्ट गति को प्राप्त हुए हैं ।।१

Gautama : *Bhante* ! Why does the *Kevalī* spread the space-points of his soul ? What is the reason for which he does so ?

Mahāvīra : Gautama ! In the case of the *Kevalis*, four

types of *karma* are not wholly uprooted, viz., those giving experience, life-span, name and lineage. Of these, the highest is *karma* giving experience and the lowest is *karma* giving life-span. They have to equal their *karma* giving experience which is pretty high with life-span. This they do through a vigorous and sudden transformation called *samudghāta*.

Gautama : *Bhante*! Is it necessary for each and every *Kevalī* to undergo this vigorous and sudden transformation ?

Mahāvīra : No, this is not so. For, it is said, without undertaking *samudghāta*, many a *Kevalī Jina* has been liberated from life and death, to attain perfection. 1

केवली समुद्घात का स्वरूप

Nature of Kavalī-Samudghāta

गौतम : कइ समए णं भंते ! आउज्जीकरणे पण्णत्ते ?

महावीर : गोयमा ! असंखेज्जसमइए अंतोमुहुत्तिए पण्णत्ते ।

गौतम : केवली समुग्घाए णं भंते ! कइसमइए पण्णत्ते ?

महावीर : गोयमा ! अट्ठसमइए पण्णत्ते । तं जहा—पढमे समए दंडं करेइ । बिइए समए कवाडं करेइ । तईए समए मंथं करेइ । चउत्थे समये लोयं पूरेइ । पंचमे समए लोयं पडिसाहरइ । छट्ठे समए मंथं पडिसाहरइ । सत्तमे समए कवाड पडिसाहरइ । अट्ठमे समए दंडं पडिसाहरइ । पडिसाहरित्ता तओ पच्छा सरीरत्थे भवइ !

गौतम : भगवन् ! आवर्जीकरण—कर्म पुद्गलों को उदयावस्था में लाने का प्रक्रियाक्रम कितने समय का बतलाया गया है ?

महावीर: गौतम! वह असंख्यात समयवर्ती अन्तर्मुहूर्त कहा गया है।

गौतम: भगवन्! केवली समुद्घात कितने समय का बतलाया गया है?

महावीर: गौतम! केवली समुद्घात—आत्मप्रदेशों को देह से निकालना, आठ समय का कहा गया है। जो इस प्रकार है—प्रथम समय में केवली अपने आत्म प्रदेशों को विस्तीर्ण कर दण्ड के आकार में करते हैं अर्थात् पहले समय में उनके आत्म प्रदेश ऊँचे एवं नीचे लोक के अन्त तक प्रसृत हो कर—दण्डाकार हो जाते हैं। दूसरे समय में वे केवली दण्डाकार में बने हुए आत्म प्रदेशों को विस्तीर्ण कर कपाट के आकार में करते हैं। अर्थात् उन के आत्म प्रदेश पूर्व दिशा एवं पश्चिम दिशा में प्रसृत होकर—फैल कर कपाट के सदृश आकार धारण कर लेते हैं। तीसरे समय में केवली कपाट के आकार की तरह बने हुए उन आत्म प्रदेशों को उत्तर तथा दक्षिण दिशा में विस्तीर्ण करते हैं, जिस से वे मथानी का आकार ले लेते हैं। अर्थात् वे मन्थनाकार धारण कर लेते हैं। चौथे समय में केवली लोक के शिखर सहित इन के अन्तराल—मन्थान के आंतरों की पूर्ति हेतु आत्म प्रदेशों को विस्तीर्ण करते हैं, उन्हें पूरते हैं। पाँचवें समय में केवली अन्तराल में अवस्थित आत्म प्रदेशों को प्रतिसंहृत करते हैं, अर्थात उन्हें वापिस संकुचित करते हैं। छठे समय में केवली मथानी के आकार में स्थित—दक्षिण तथा उत्तर इन दोनों दिशावर्ती आत्म प्रदेशों को प्रतिसंहृत कर लेते हैं। सातवें समय में केवली कपाट के आकार में अवस्थित पूर्व एवं पश्चिम दिशावर्ती आत्म प्रदेशों को प्रतिसंहृत करते हैं—वापिस संकुचित करते हैं। आठवें समय में केवली दण्डाकार में अवस्थित—ऊर्ध्वलोक तथा अधोलोक के अन्त तक प्रसृत आत्मप्रदेशों को प्रतिसंहृत करते हैं। उस के बाद वे केवली (पूर्ववत) शरीरस्थ हो जाते हैं।

Gautama : *Bhante*! How many time-units are taken in *āvarjīkaraṇa*?

Mahāvīra : Gautama! Innumerable time-units.

Gautama : *Bhante*! How many time-units are taken in *kevalī-samudghāta*?

Mahāvīra : Gautama ! Eight time-units as follows :

In the first time-unit, they transform their space-points of the soul in the shape of a stick. In the second time-unit, they spread them this way or that like the movement of a door. In the third time-unit, the space-points stretched door-like between the north and the south are put in the shape of a churner. In the fourth time-unit, they fill up the gaps between the teeth of the churner with the universe. In the fifth time-unit they withdraw the universe and revert to the state of the churner. In the sixth time-unit, the churner is withdrawn and the space-points stand door-like. In the seventh time-unit, the door-like shape is withdrawn and the space-points stand like a stick. In the eighth time-unit, the stick-like shape is withdrawn and they return to the body.

गौतम : से णं भंते ! तहा समुग्घायं गए किं मणजोगं जुंजइ ? वयजोगं जुंजइ ? काययोगं जुंजइ ?

महावीर : गोयमा ! णो मणजोगं जुंजइ णो वयजोगं जुंजइ कायजोगं जुंजइ ।

गौतम : भगवन् ! समुद्घातगत—समुद्घात में प्रवर्तमान केवली क्या मनोयोग का प्रयोग अर्थात् मानसिक-क्रिया करते हैं ? क्या वचन योग का प्रयोग अर्थात् वाचिक क्रिया करते हैं ? क्या काययोग का प्रयोग—कायिक क्रिया करते हैं ?

महावीर : हे गौतम ! वे मनोयोग का प्रयोग नहीं करते हैं, वे वचन योग का प्रयोग नहीं करते हैं। किन्तु काय योग का प्रयोग करते हैं।

Gautama : *Bhante !* Do the Kevalins who have attained

the state of *samudghāta* have the activity of the mind, or of the *speech or of the body ?*

Mahāvīra : Gautama ! They do not have the activity of the mind nor of the speech, but only of the body.

गौतम : कायजोगं जुंजमाणे किं ओरालियसरीरकायजोगं जुंजइ ? ओरालियमिस्ससरीरकायजोगं जुंजइ ? वेउव्वियसरीर-कायजोगं जुंजइ ? वेउव्वियमिस्ससरीरकायजोगं जुंजइ ? आहारसरीरकायजोगं जुंजइ ? आहारसरीरमिस्सकायजोगं जुंजइ ? कम्मासरीरकायजोगं जुंजइ ?

महावीर : गोयमा ! ओरालियसरीरकायजोगं जुंजइ । ओरालियमिस्ससरीरकायजोगंपि जुंजइ । णो वेउव्वियसरीर, कायजोगं जुंजइ णो वेउव्वियमिस्ससरीरकायजोगं जुंजइ । णो आहारगसरीरकायजोगं जुंजइ । णो आहारगमिस्ससरीर-कायजोगं जुंजइ । कम्मसरीरकायजोगं पि जुंजइ ।

पढमट्ठमेसु समएसु ओरालियसरीरकायजोगं जुंजइ । बिइयइ-छट्ठसत्तमेसु समएसु ओरालियमिस्ससरीरकायजोगं जुंजइ । तईय-चउत्थपंचमेहिं कम्मासरीरकायजोगं जुंजइ ।

गौतम : हे भगवन् ! काययोग को प्रयुक्त करते हुए—कायिक-व्यापार करते हुए क्या वे औदारिक शरीर—अवशेष पुद्गलों की अपेक्षा स्थूल पुद्गलों से बने हुए शरीर से कायिक क्रिया करते हैं ? क्या औदारिक मिश्र—औदारिक और कार्मण इन दोनों शरीरों से क्रिया करते हैं ? क्या वैक्रिय शरीर—विशिष्ट कार्य करने में सक्षम सूक्ष्म पुद्गलों से बने हुए शरीर से क्रिया करते हैं ? क्या वैक्रिय मिश्र—कार्मण मिश्रित अथवा औदारिक मिश्रित वैक्रिय शरीर से क्रिया करते हैं ? क्या आहारक शरीर—'विशिष्टतम पुद्गलों से निष्पन्न' से क्रिया करते हैं ? क्या आहारक मिश्र—औदारिक

मिश्रित आहारक शरीर से क्रिया करते हैं ? क्या कार्मण शरीर से क्रिया करते हैं ? अभिप्राय यह है कि उक्त सात प्रकार के काय योग में से किस काय योग का प्रयोग करते हैं ?

महावीर : हे गौतम ! वे औदारिक शरीर से काययोग का प्रयोग करते हैं—कायिक क्रिया करते हैं। औदारिक मिश्र शरीर से भी कायिक क्रिया करते हैं। वे वैक्रिय शरीर से काय योग का प्रयोग नहीं करते हैं। वैक्रिय मिश्र शरीर से कायिक क्रिया नहीं करते हैं। आहारक शरीर से काय योग का प्रयोग नहीं करते हैं। आहारक मिश्र शरीर से भी क्रिया नहीं करते हैं। अर्थात वे इन कायिक योगों का प्रयोग नहीं करते हैं। पर औदारिक एवं औदारिक मिश्र के साथ-साथ कार्मण शरीर से काययोग का भी प्रयोग करते हैं, अर्थात् इस शरीर से कायिक क्रिया करते हैं।

पहले तथा आठवें समय में वे औदारिक शरीर स कायिक क्रिया करते हैं। दूसरे, छट्ठे एवं सातवें समय में वे औदारिक मिश्र शरीर काय योग का प्रयोग करते हैं। तीसरे, चौथे और पाँचवें समय में वे कार्मण शरीर से कायिक क्रिया करते हैं।

Gautama : *Bhante* ! While having the activity of the body, do they have the activity of the gross body, or of the mixed gross body, or of the fluid body or of the mixed fluid body, or of the caloric body or of the mixed caloric body or of the *kārmaṇ* body ?

Mahāvīra : Gautama ! They have the activity of the gross body, also of the mixed gross body, but not of the fluid body, nor of the mixed fluid body, nor of the caloric body, nor of the mixed caloric body ; but they have the activity of the *kārmaṇ* body.

In the first time-unit and the eighth, they have the activity of the gross body ; in the second, sixth and seventh, of the mixed gross body ; and in the third, fourth and fifth time-units, they have the activity of the *kārmaṇ* body.

समुद्घात के बाद की योग प्रवृत्ति

Post-samudghāta Yoga-activities

गौतम : से णं भंते ! तहा समुग्घायगए सिज्झिहिइ बुज्झिहिइ मुच्चहिइ परिनिव्वाहिइ सव्वदुक्खाणमंतं करेइ ?

महावीर : णो इणट्ठे समट्ठे । से णं तओ पडिनियत्तइ । तओपडिनियत्तित्ता इहमागच्छइ । आगच्छित्ता तओ पच्छा मणजोगंपि जुंजइ । वयजोगंपि जुंजइ । कायजोगंपि जुंजइ ।

गौतम : भगवन् ! क्या कोई समुद्घातगत—समुद्घात करने के समय सिद्ध होते हैं ? बुद्ध होते हैं ? मुक्त होते हैं ? परिनिवृत्त होते हैं अर्थात् परिनिर्वाण प्राप्त करते हैं ? सब दुःखों का अन्त करते हैं ?

महावीर : हे गौतम ! यह आशय संगत नहीं है अर्थात् ऐसा नहीं होता है । वे उस से—समुद्घात से परिनिवृत्त—वापस लौटते हैं । लौट कर अपने ऐहिक—मनुष्य शरीर में आते हैं—अवस्थित होते हैं । आकर उस के बाद मन योग का प्रयोग करते है—मानसिक क्रिया करते हैं । वचन योग का प्रयोग भी करते हैं । तथा काय-योग का प्रयोग भी करते हैं । अर्थात् वाचिक तथा कायिक क्रिया भी करते हैं ।

Gautama : *Bhante* ! Is one who has undergone *samudghāta* perfected ? Is he enlightened ? Is he liberated ? Does he attain *nirvāṇa* ? Does he end all misery ?

Mahāvīra : No, this is not correct. He reverts from that. Having reverted, he returns to this earth. Thereafter he performs the activity of the mind, of the speech and of the body.

गौतम : मणजोगं जुंजमाणे किं सच्चमणजोगं जुंजइ ?

मोसमणजोगं जुंजइ ? सच्चामोसमणजोगं जुंजइ ? असच्चा-मोसमणजोगं जुंजइ ?

महावीर : गोयमा ! सच्चमणजोगं जुंजइ । णो मोसमण-जोगं जुंजइ । णो सच्चामोसमणजोगं जुंजइ । असच्चामोस-मणजोगंपि जुंजइ ।

गौतम : भगवन् ! वे मनोयोग को प्रयुक्त करते हुए क्या सत्य मनोयोग को प्रयुक्त करते हैं ? क्या मृषा—असत्य मनोयोग को प्रयुक्त करते हैं ? क्या सत्य-मृषा—सत्य-असत्य मिश्रित अर्थात् जिस का कुछ अंश सत्य हो, और कुछ अंश असत्य हो, ऐसे मनोयोग को प्रयुक्त करते हैं ? क्या असत्य-अमृषा—न सत्य न असत्य ऐसा व्यवहार मनोयोग को प्रयुक्त करते हैं ?

महावीर : हे गौतम ! वे सत्य मनोयोग को प्रयुक्त करते हैं—सत्य मन की क्रिया करते हैं । असत्य मनोयोग को प्रयुक्त नहीं करते हैं—असत्य मनोयोग की क्रिया नहीं करते हैं । सत्य-असत्य मिश्रित—जिस का कुछ अंश सत्य हो और कुछ अंश असत्य हो, ऐसे मनोयोग को प्रयुक्त नहीं करते हैं अर्थात् मनोयोग की क्रिया नहीं करते हैं । किन्तु असत्य-अमृषा—न सत्य न मृषा मनोयोग—व्यवहार मनोयोग को भी वे प्रयुक्त करते हैं, असत्य-अमृषा मन की क्रिया भी करते हैं ।

Gautama : *Bhante* ! While performing the activity of the mind, does he perform the activity based on truth, or on untruth, or on truth-untruth, or on non-truth-non-untruth ?

Mahāvīra : Gautama ! He has activity based on truth, not on untruth, nor on truth and untruth, but he has activity based on non-truth-non-untruth.

गौतम : वयजोगं जुंजमाणे किं सच्चवइजोगं जुंजइ ? मोस-

वइजोगं जुंजइ ? सच्चामोसवइजोगं जुंजइ ? असच्चामोस-वइजोगं जुंजइ ?

महावीर : गोयमा ! सच्चवइजोगं जुंजइ। णो मोसवइ-जोगं जुंजइ। णो सच्चामोसवइजोगं जुंजइ। असच्चामोस-वइजोगं पि जुंजइ।

गौतम : भगवन् ! वाक् योग का उपयोग करते हुए—वचन-क्रिया में प्रवृत्त होते हुए क्या सत्य वाक् योग का उपयोग करते हैं ? क्या मृषा—असत्य वाक् योग का उपयोग करते हैं ? क्या सत्य-मृषा—सत्य-असत्य मिश्रित—जिस का कुछ अंश सत्य हो और कुछ अंश असत्य हो, ऐसे वाक् योग का उपयोग करते हैं ? क्या असत्य-अमृषा—न सत्य न मृषा—व्यवहार वाक् योग का उपयोग करते हैं ?

महावीर : हे गौतम ! वे सत्य वाक् योग का उपयोग करते हैं। मृषा—असत्य वाक् योग का उपयोग नहीं करते हैं। न वे सत्य-असत्य मिश्रित वाक् योग का ही उपयोग करते हैं। वे असत्य-अमृषा वाक् योग—व्यवहार वचन योग का उपयोग भी करते हैं।

Gautama : *Bhante* ! While performing the activity of the speech, does he speak the truth, untruth, truth-untruth or non-truth-non-untruth ?

Mahāvīra : Gautama ! He speaks the truth, not untruth, nor truth-untruth, but he indulges in non-truth-non-untruth.

कायजोगं जुंजमाणे आगच्छेज्ज वा चिट्ठेज्ज वा णिसीएज्ज वा तुयट्टेज्ज वा उल्लंघेज्ज वा पल्लंघेज्ज वा उक्खेवणं वा अवक्खेवणं वा तिरियक्खेवणं वा करेज्जा पाडिहारियं वा पीढफलग-सेज्जसंथारगं पच्चप्पिणेज्जा ॥४२॥

वे काययोग को प्रयुक्त करते हुए कायिक-क्रिया में प्रवृत्त होते हुए आगमन करते हैं, स्थित होते हैं—ठहरते हैं, बैठते हैं, लेटते हैं—सोते हैं, उल्लंघन करते हैं—लांघते हैं, प्रलंघन करते हैं—विशेष रूप से लांघते हैं, उत्क्षेपण करते हैं—हाथ आदि को ऊपर करते हैं, अवक्षेपण करते हैं—हाथ आदि को नीचे करते हैं, तथा तिर्यक् क्षेपण करते हैं—तिरछे अथवा आगे पीछे करते हैं, अथवा ऊँची, नीची एवं तिरछी गति करते हैं, प्रातिहारिक—वापस लौटाने योग्य उपकरण—पट्ट, शय्या, तथा संस्तारक आदि लौटाते हैं ॥४२॥

While performing the activity of the body, he comes, stays, sits, lies, crosses, especially crosses, throws up, down or sideways (i. e., he goes up or down or on either side). He returns cushion, wooden plank, bed and duster which are returnable. 42

योग निरोध और सिद्धि

Control of Yogas and Liberation

गौतम : से णं भंते ! तहा सजोगी सिज्झिहिए जाव...अंतं करेहिइ ?

महावीर : णो इणट्ठे समट्ठे ।

गौतम : भगवन् ! क्या सयोगी—मन, वचन, एवं काय योग से युक्त सक्रिय सिद्ध होते हैं ?...यावत् सब दुःखों का अन्त करते हैं ?

महावीर : हे गौतम ! यह आशय संगत नहीं है—ऐसा नहीं होता है ।

Gautama : *Bhante* ! Can it be said that one with activity is perfected, till ends all misery ?

Mahāvīra : No, this is not correct.

से णं पुव्वामेव संण्णिस्स पंचिंदियस्स पज्जत्तगस्स जहण्णजोगस्स हेट्ठा असंखेज्जगुणपरिहीणं पढमं मणजोगं णिरुंभइ। तयाणंतरं च णं विंदियस्स पज्जत्तगस्स जहण्णजोगस्स हेट्ठा असंखेज्जगुण-परिहीणं विइयं वइजोगं णिरुंभइ। तयाणंतरं च णं सुहुमस्स पणगजीवस्स अपज्जत्तगस्स जहण्णजोगस्स हेट्ठा असंखेज्जगुणपरिहीणं तईयं कायजोगं णिरुंभइ।

वे सब से पहले पर्याप्तक—आहार, शरीर, इन्द्रिय आदि पर्याप्ति युक्त, संज्ञी—समनस्क, पंचेन्द्रिय—श्रोत्र, चक्षु, घ्राण आदि इन्द्रियों से युक्त जीव के जघन्य मनोयोग के नीचे के स्तर से असंख्यात गुणहीन प्रथम मनोयोग का निरोध करते है। अर्थात् इतना मनोव्यापार उन के अवशेष रहता है। तत्पश्चात् पर्याप्तक द्वीन्द्रिय जीव के जघन्य वचन योग के नीचे के स्तर से भी असंख्यात गुणहीन द्वितीय वचन योग का निरोध करते हैं। अर्थात् उस जीव की निम्नतम स्तरीय वाचिक प्रवृत्ति की असंख्यातवें भाग जितनी वाचिक प्रवृत्ति रहती है, अवशेष का निरोध कर देते हैं। उस के वाद अपर्याप्त—आहार, शरीर, इन्द्रिय आदि पर्याप्तियों से रहित, सूक्ष्म पनक—नीलन—फूलन जीव के जघन्य योग के नीचे के स्तर से असंख्यात गुणहीन तृतीय काय योग का निरोध करते हैं।

First of all, he cuts out all the activities of the mind to the smallest fraction of the minimum activity of a five-organ being with a mind and with full attainments. Next, he cuts out all the activities of the speech to the smallest fraction of the minimum activity of speech of a two-organ being with attain-ments. And after that he cuts out the activity of the body to the smallest fraction of the minimum activity of the minutest form of life without attainment.

से णं एएणं उवाएणं पढममणजोगं णिरुंभइ। मणजोगं णिरुंभित्ता वयजोगं णिरुंभइ। वयजोगं णिरुंभित्ता कायजोगं णिरुंभइ। कायजोगं णिरुंभित्ता जोगणिरोहं करेइ।

इस उपाय—उपक्रम द्वारा वे पहले मनोयोग—मानसिक-क्रिया का निरोध करते हैं। मनोयोग का निरोध कर वाक् योग—वाचिक क्रिया का निरोध करते हैं। वचन योग का निरून्धन कर काययोग—कायिक क्रिया का निरोध करते हैं। काययोग का निरोध कर सर्वथा रूप से योग निरोध करते हैं अर्थात् मन, वचन तथा काया से सम्बन्धित प्रवृत्ति मात्र को रोकते हैं।

In this manner, first of all, he stops the activity of the mind, thereafter the activity of the speech, thereafter the activity of the body. In this way, he stops all activities.

जोगणिरोहं करेत्ता अजोगत्तं पाउणंति। अजोगत्तं पाउणित्ता ईसिंहस्सपंचक्खरउच्चारणद्धाए असंखेज्जसमइयं अंतोमुहुत्तियं सेलेसिं पडिवज्जइ।

इस प्रकार योग—मन, वचन और काय की प्रवृत्तिमात्र का निरोध कर वे अयोगत्व—अयोगी अवस्था प्राप्त करते हैं। अयोगावस्था प्राप्त कर ईषत् स्पृष्ट पांच ह्रस्व अक्षर—अ, इ, उ, ऋ, लृ, के उच्चारण के असंख्यात समयवर्ती अन्तर्मुहूर्त तक होने वाली शैलेषी अवस्था—मेरुपर्वत के सदृश अप्रकम्प दशा प्राप्त करते हैं।

Having stopped activities, he attains the state of non-activity. Having attained this state, he is in a state of rock-like steadfastness, no longer than the time normally taken to utter five short vowels or the *antarmuhūrtas* of innumerable time-units.

पुव्वरइयगुणसेढियं च णं कम्मं तीसे सेलेसिमद्धाए असंखेज्जाहिं गुणसेढीहिं अणंते कम्मंसे खवेंति। वेयणिज्जाउयणामगुत्ते इच्चेते चत्तारि कम्मंसे जुगवं खवेइ।

उस शैलेषी काल में पूर्व रचित—शैलेषी अवस्था से पहले रची गई, गुणश्रेणी के रूप में रहे हुए कर्मों को—असंख्यात गुणश्रेणियों में अनन्त कर्मांशों को क्षीण करते हैं। वेदनीय, आयुष्य, नाम और गोत्र इन चारों कर्मांशों का युगपत्—एक साथ क्षय करते हैं।

He cuts all *karma* acquired till the time of attaining rock-like steadfastness and still extant in the form of *guṇaśreṇī*, i. e., consciously brought up in a manner to be conveniently cut at one stroke, and also on infinite number of such *karma* parts still extant similarly brought up. And then *karma* giving experience, life-span, name lineage, these four are exhausted at a time.

खवित्ता ओरालियतेयाकम्माइं सव्वाहिं विप्पयहणाहिं विप्पजहइ। विप्पजहित्ता उज्जूसेढीपडिवण्णे अफुसमाणगई उड्ढं एक्कसमएणं अविग्गहेणं गंता सागारोवउत्ते सिज्झिहिइ।

इन्हें एक साथ क्षय कर औदारिक, तैजस, तथा कार्मण शरीर को, अशेष—विविध त्यागों के द्वारा पूर्ण रूप परित्याग कर देते हैं। वैसा करपरित्याग कर ऋजुश्रेणी प्रतिपन्न हो लोकाकाश-प्रदेशों की सीधी—पंक्ति का अवलम्बन कर, अस्पृश्यमान गति द्वारा सीधे एक समय में ऊर्ध्व गमन कर—ऊँचे पहुँच कर साकारोपयोग—ज्ञानोपयोग में सिद्ध होते हैं।

After this he gives up through diverse methods of renun-

ciation the gross, fluid and *kārmaṇ* bodies. Then he takes shelter in the sky in what is called *ṛjuśreṇī* (the straight lairs in the sky) and rises further up, untouched, equipped with knowledge, to enter into perfection.

तत्रस्थित सिद्ध का स्वरूप

Nature of the Liberated at the Crest

ते णं तत्थ सिद्धा हवंति सादीया अपज्जवसिया असरीरा जीवघणा दंसणणाणोवउत्ता णिट्ठियट्ठा णिरेयणा णीरया णिम्मला वितिमिरा विसुद्धा सासयमणागयद्धं कालं चिट्ठंति ।

वे वहाँ—लोक के अग्र भाग में सिद्ध होते हैं, सादि—आदि सहित अर्थात् मोक्ष-प्राप्ति के काल की अपेक्षा से आदि-सहित हैं, अपर्यवसित—अन्त रहित, अशरीर—शरीर रहित, जीवघन—सघन अवगाह रूप आत्म प्रदेश युक्त, दर्शन ज्ञानोपयुक्त—दर्शन रूप अनाकार उपयोग तथा ज्ञान रूप साकार उपयोग सहित, निष्ठितार्थ—समग्र प्रयोजनों को, समाप्त किये हुए, निरेजन—निश्चल या प्रकम्पन से रहित अर्थात् सुस्थिर नीरज—कर्म रूप रज से सर्वथा रहित अर्थात् बध्यमान कर्मों से विमुक्त, निर्मल—मल रहित—पूर्वबद्ध कर्म-मल से रहित, वितिमिर—अज्ञान रूप अन्धकार से पूर्णतः रहित, विशुद्ध—परम शुद्ध अर्थात् कर्म क्षय निष्पन्न आत्मिक शुद्धि युक्त, सिद्ध भगवान् भविष्य में—शाश्वत काल पर्यन्त अपने ज्योतिर्मय स्वरूप में संस्थित रहते हैं ।

There, (at the crest of the universe), he is perfected, with a beginning but without an end, body-less, pure soul, equipped with knowledge and faith, freed from all needs, freed from the dirt of *karma*, freed from *karma* acquired previously, freed from ignorance, pure, eternal, living there for ever in the future.

गौतम : से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—ते णं तत्थ सिद्धा भवंति सादीया अप्पज्जवसिया जाव...चिट्ठंति ?

महावीर : गोयमा ! से जहाणामाए वीयाणं अग्गिदड्ढाणं पुणरवि अंकुरुप्पत्ती ण भवइ एवामेव सिद्धाणं कम्मवीए दड्ढे पुणरवि जम्मुप्पत्ती ण भवइ। से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—ते णं तत्थ सिद्धा भवंति सादीया अपज्जवसिया जाव... चिट्ठंति।

गौतम : भगवन् ! आप किस आशय से इस प्रकार फरमाते हैं वहाँ वे सिद्ध होते हैं, सादि—मोक्ष प्राप्ति के काल की अपेक्षा से आदि सहित, अपर्यवसित—अन्तरहित, यावत् शाश्वत काल पर्यन्त स्थित रहते हैं ?

महावीर : हे गौतम ! जैसे अग्नि से सर्वथा जले हुए बीजों की पुनः अंकुरों के रूप में समुत्पत्ति नहीं होती है उसी प्रकार कर्म-बीजों के सर्वथा जल जाने के कारण सिद्धों की भी फिर जन्म रूप उत्पत्ति नहीं होती है। इसलिये हे गौतम ! मैं इसी अभिप्राय से ऐसा कह रहा हूँ कि वे वहाँ सिद्ध होते हैं, सादि—आदि सहित, अपर्यवसित—अन्तरहित यावत् शाश्वत काल पर्यन्त स्थित रहते हैं।

Gautama : *Bhante* ! Why do you say so, that there he is perfected, with a beginning, but without an end, till for ever in the future ?

Mahāvīra : Gautama ! As in the case of the seeds roasted on fire, they do not germinate any more, so in the case of the perfected beings, whose seeds of *karma* have been burnt, they are not born again. It is for this it has been said that there he is perfected, with a beginning, but without an end, till for ever in the future.

20

सिद्ध्यमान के संहननादि

Bone-structure, etc. of the Liberated

गौतम : जीवा णं भंते ! सिज्झमाणा कयरंमि संघयणे सिज्झंति ?

महावीर : गोयमा ! वइरोसभणारायसंघयणे सिज्झंति ।

गौतम : जीवा णं भंते ! सिज्झमाणा कयरंमि संठाणे सिज्झंति ?

महावीर : गोयमा ! छण्हं संठाणाणं अण्णतरे संठाणे सिज्झंति ।

गौतम : भगवन् ! सिद्ध्यमान—सिद्ध होते हुए जीव किस संहनन—दहिक अस्थि-बन्ध में सिद्ध होते हैं ?

महावीर : हे गौतम ! वे बज्र-ऋषभ-नाराच संहनन—कीलिका और पट्टी सहित मर्कट बन्धमय सन्धियों वाला अस्थियों का बन्धन में सिद्ध होते हैं।

गौतम : प्रभो ! सिद्ध्यमान—सिद्ध होते हुए जीव कौन से संस्थान—शारीरिक आकार में सिद्ध होते हैं ?

महावीर : हे गौतम ! छह संस्थानों—समचतुरस्र, न्यग्रोध-परिमण्डल, सादि, वामन, कुब्ज एवं हुंड में से किसी भी संस्थान में सिद्ध हो सकते हैं।

Gautama : *Bhante* ! A being marked for perfection, in what type of bone-structure is he perfected ?

Mahāvīra : Gautama ! He is perfected in a bone-structure called *vajra-ṛṣabha-nārāca*.

Gautama : *Bhante* ! In what body form is one marked for perfection perfected ?

Mahāvīra : Gautama ! Of the six forms, he may be perfected in any one.

गौतम : जीवा णं भंते ! सिज्झमाणा कयरंमि उच्चत्ते सिज्झंति ?

महावीर : गोयमा ! जहण्णेणं सत्तरयणीओ उक्कोसेणं पंचधणुस्सए सिज्झंति ।

गौतम : जीवा णं भंते ! सिज्झमाणा कयरंम्मि आउए सिज्झंति ?

महावीर : गोयमा ! जहण्णेणं साइरेगट्ठवासाउए उक्कोसेणं पुव्वकोडियाउए सिज्झंति ।

गौतम : भगवन् ! सिद्ध्यमान—सिद्ध होते हुए जीव कितनी अवगाहना—ऊँचाई में सिद्ध होते हैं ?

महावीर : हे गौतम ! जघन्य—कम से कम सात हाथ तथा उत्कृष्ट—अधिक से अधिक पाँच सौ धनुष की अवगाहना—ऊँचाई में सिद्ध होते हैं।

गौतम : हे प्रभो ! सिद्ध्यमान—सिद्ध होते हुए जीव कितने आयुष्य में सिद्ध होते हैं ?

महावीर : हे गौतम ! जघन्य—कम से कम आठ वर्ष से कुछ अधिक आयुष्य में सिद्ध हो सकते हैं। तथा उत्कृष्ट—अधिक से अधिक करोड़

पूर्व के आयु वाले जीव सिद्ध होते ह। तात्पर्य यह है कि आठ वर्ष अथवा उस से कम की आयु वाले तथा करोड़ पूर्व से अधिक की आयु के जीव सिद्ध नहीं होत हें।

Gautama : *Bhante* ! A being marked for perfection, at what height is he perfected ?

Mahāvīra : He is perfectcd at an height of which the minimum is seven cubits and maximum 500 *dhanuṣ*.

Gautama : *Bhante* ! A being marked for perfection, in what part of the life-span is he perfected ?

Mahāvīra : Gautama ! Minimum beyond eight years and maximum *kroḍ-pūrva* years.

सिद्धों का निवासस्थान

Residence of the Liberated

गौतम : अत्थि णं भंते ! इमीसे रयणप्पहाए पुढवीए अहे सिद्धा परिवसंति ?

महावीर : णो इणट्ठे समट्ठे । एवं जाव...अहे सत्तमाए ।

गौतम : भगवन् ! क्या इस रत्नप्रभा पृथ्वी—प्रथम नारक भूमि के नीचे सिद्ध निवास करते हैं ?

महावीर : हे गौतम ! नहीं, ऐसा अर्थ—आशय ठीक नहीं है। रत्नप्रभा के साथ-साथ शर्कराप्रभा, वालुकाप्रभा, पंकप्रभा, धूम्रप्रभा, तमः-प्रभा और तमस्तमः-प्रभा,—पहली पृथ्वी से सातवीं पृथ्वी तक सभी नारक भूमियों के विषय में ऐसा ही समझना चाहिये अर्थात् उन के नीचे सिद्ध निवास नहीं करते हैं।

Gautama : *Bhante* ! Do the *Siddhas* reside beneath this Ratnaprabhā hell ?

Mahāvīra : No, this is not correct, and likewise with all the seven worlds underneath.

गौतम : अत्थि णं भंते ! सोहम्मस्स कप्पस्स अहे सिद्धा परिवसंति ?

महावीर : णो इणट्ठे समट्ठे । एवं सव्वेसिं पुच्छा ईसाणस्स सणंकुमारस्स जाव...अच्चुयस्स गेविज्जविमाणाणं अणुत्तर विमाणाणं ।

गौतम : हे प्रभो ! सिद्ध सौधर्म कल्प (देव लोक) के नीचे निवास करते हैं ?

महावीर : हे गौतम ! नहीं, ऐसा अर्थ—अभिप्राय ठीक नहीं है। ईशान, सनत्कुमार...यावत् अच्युत तक ग्रैवेयक विमानों तथा अनुत्तर विमानों के विषय में भी ऐसा ही समझना चाहिये ।

Gautama : *Bhante* ! Do they reside beneath Saudharma *kalpa* ?

Mahāvīra : No, this is not correct, and the same holds of Iśāna, Sanatkumāra, till Acyuta, Graiveyaka *vimānas* and Anuttara *vimānas*.

गौतम : अत्थि णं भंते ! ईसीपब्भाराए पुढवीए अहे सिद्धा परिवसंति ?

महावीर : णो इणट्ठे समट्ठे ।

गौतम : से कहिं खाइ णं भंते ! सिद्धा परिवसंति ?

महावीर : गोयमा ! इमीसे रयणप्पहाए पुढवीए बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ उड्ढं चंदिमसूरियग्गहगणणक्खत्त-ताराभवणाओ बहूइं जोयणसयाइं बहूइं जोयणसहस्साइं बहूइं जोयणसयसहस्साइं बहूओ जोयणकोडीओ बहूओ जोयणकोडा-कोडीओ उड्ढतरं उप्पइत्ता सोहम्मीसाणसणंकुमारमाहिंदबंभलं-तगमहासुक्कसहस्सारआणयपाणयआरणच्चुय तिण्णि य अट्ठारे गेविज्जविमाणावाससए वीइवइत्ता विजयवेजयंतजयंतअपराजिय-सव्वट्ठसिद्धस्स य महाविमाणस्स सव्वउपरिल्लाओ थूभियग्गाओ दुवालसजोयणाइं अबाहाए एत्थं णं ईसीपब्भारा णाम पुढवी पण्णत्ता ।

गौतम : हे भगवन् ! क्या सिद्ध ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी के नीचे निवास करते हैं ?

महावीर : नहीं, ऐसा अर्थ—अभिप्राय ठीक नहीं है ।

गौतम : हे भगवन् ! फिर सिद्ध कहाँ निवास करते हैं ?

महावीर : हे गौतम ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के बहुसम रमणीय भूमि भाग के ऊपर चन्द्र, सूर्य, ग्रहगण, नक्षत्र तथा ताराओं के भवनों से बहुत-से योजन, बहुत-से सैंकड़ों योजन, बहुत-से हजारों योजन, बहुत-से लाखों योजन, बहुत-से करोड़ों योजन, बहुत-से क्रोड़ों-क्रोड़ों योजन से ऊर्ध्वतर—बहुत-बहुत ऊपर जाने पर सौधर्म, ईशान, सनत्कुमार, माहेन्द्र, ब्रह्म, लान्तक, महाशुक्र, सहस्रार, आनत, प्राणत, आरण, अच्युत, तीन सौ अठारह ग्रैवेयक विमान आवासों को पार कर या उन से ऊपर, विजय, वैजयन्त, जयन्त, अपराजित और सर्वार्थसिद्ध महाविमान के सर्वोच्च शिखर के अग्रभाग से बारह योजन के अन्तर पर ऊपर ईषत्प्राग्भारा नामक पृथ्वी कही गई है ।

Gautama : *Bhante* ! Do they reside beneath the Iṣat-prāgbhārā earth (the *Siddhaśilā*) ?

Mahāvīra : No, this is not correct.

Gautama : *Bhante* ! Then where do they reside ?

Mahāvīra : Gautama ! Far, far above the excellent region from the Ratnaprabhā hell, are the *bhavanas* (abodes) of the moon, the sun, the planets, the stars, etc., and many *yojanas*, hundreds, thousands, hundred-thousands, crores, crores and crores *yojanas* above the said *bhavanas*, are the heavens Saudharma, Iśāna, Sanatkumāra, Māhendra, Brahma, Lāntaka, Mahāśukra, Sahasrāra, Āṇata, Prāṇata, Āraṇa, Acyuta, beyond the 318 Graiveyaka *vimānas*, beyond Vijaya, Vaijayanta, Jayanta, Aparājita and Sarvārthasiddha, the great *vimānas*, atop these, with a gap of 12 *yojanas*, there is a world named Iṣatprāgbhārā.

पणयालीसं जोयणसयसहस्साइं आयामविक्खंभेणं एगा जोयण-कोडी वायालीसं सयसहस्साइं तीसं च सहस्साइं दोण्णि य अउणापण्णे जोयणसए किंचि विसेसाहिए परिरएणं। ईसिपब्भारा य णं पुढवीए बहुमज्झदेसभाए अट्ठजोयणिए खेत्ते अट्ठजोयणाइं बाहुल्लेणं। तयाऽणंतरं च णं मायाए मायाए पडिहायमाणी पडिहायमाणी सव्वेसु चरिमपेरंतेसु मच्छियपत्ताओ तणुयतरा अंगुलस्स असंखेज्जइभागं बाहुल्लेणं पण्णत्ता।

वह पृथ्वी पैंतालीस लाख योजन की लम्बी-चौड़ी है। उसकी परिधि एक करोड़ बयालीस लाख तीस हजार दो सौ उनचास योजन से कुछ अधिक है। वह ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी अपने बहु मध्य देश भाग में अर्थात् मध्य भाग में आठ योजन जितने क्षेत्र में आठ योजन मोटी है। उस के बाद मोटेपन में क्रमशः कुछ-कुछ कम होती हुई सब से अन्तिम किनारों—छोरों पर मक्षिका—मक्खी की पाँख से भी पतली है। उन अन्तिम किनारों की मोटाई अंगुल के असंख्यातवें भाग जितनी बतलाई गई है।

This world is 45 lakh *yojanas* in length and breadth with a circumference which is a little more than 14230249 *yojanas*. In the middle part of it, upto eight *yojanas*, its thickness is eight *yojanas*, and then, on both the sides, the thickness gradually declines so that at the two extremities, it is no bigger than the winglet of a fly. The thickness is no more than a fraction of the thickness of a finger.

ईसीपब्भाराए णं पुढवीए दुवालस णामधेज्जा पण्णत्ता। तं जहा—ईसी इ वा इसीपब्भारा इ वा तणू इ वा तणूतणू इ वा सिद्धी इ वा सिद्धालए इ वा मुत्ती इ वा मुत्तालए इ वा लोयग्गे इ वा लोयग्गथूभिया इ वा लोयग्गपडिबुज्झणा इ वा सव्वपाणभूय-जीवसत्तसुहावहा इ वा।

ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी के बारह नाम बतलाये गये हैं, जो इस प्रकार हैं—

(१) ईषत्—अल्प, हलकी या छोटी, (२) ईषत्प्राग्भारा—अल्प बड़ी, (३) तनु—पतली, (४) तनुतनु—विशेष रूप से पतली, (५) सिद्धि, (६) सिद्धालय—सिद्धों का घर, (७) मुक्ति, (८) मुक्तालय, (९) लोकाग्र, (१०) लोकाग्र स्तूपिका—लोकाग्र का शिखर, (११) लोकाग्र प्रतिबोधना—जिस के द्वारा लोकाग्र जाना जाता हो ऐसी, (१२) सर्व प्राण, भूत, जीव और सत्त्व सुखावह।

This world named Iṣatprāgbhārā has twelve names, viz., Iṣat, Iṣatprāgbhārā, Tanu, Tanutanu, Siddhi, Siddhālaya, Mukti, Muktālaya, Lokāgra, Lokāgrastūpikā, Lokāgrapratibodhanā and the giver of peace to all—one to four organ beings, five-organ beings, plant life and life that is immobile.

ईसीपब्भारा णं पुढवी सेया संखतलविमलसोल्लियमुणाल-

दगरयतुसारगोक्खीरहारवण्णा उत्ताणयछत्तसंठाणसंठिया सव्व-ज्जुणसुवण्णयमई अच्छा सण्हा लण्हा घट्ठा मट्ठा णीरया णिम्मला णिप्पंका णिक्कंकडच्छाया समरीचिया सुप्पभा पासादीया दरिस-णिज्जा अभिरूवा पडिरूवा। ईसीपब्भाराए णं पुढवीए सीयाए जोयणंमि लोगंते। तस्स जोयणस्स जे से उवरिल्ले गाउए तस्स णं गाउअस्स जे से उवरिल्ले छभागिए तत्थ णं सिद्धा भगवंतो सादीया अपज्जवसिया अणेगजाइजरामरणजोणिवेयणसंसारकलंकलीभावपुण-ब्भवगब्भवासवसहीपवंचसमइक्कंता सासयमणागयमद्धं चिट्ठंति ॥४३॥

ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी शंख के तल जैसी निर्मल, सौल्लियपुष्प—एक प्रकार का फूल, मृणाल—कमल नाल, जलकण, तुषार, गाय के दूध, तथा हार के समान श्वेतवर्ण युक्त है। वह उलटे छत्र के आकार के समान आकार में अवस्थित है, अर्थात् उलटे किये हुए छत्र के सदृश उस का आकार है। वह अर्जुन स्वर्ण—अत्यधिक मूल्यवान् श्वेत धातु विशेष जैसी द्युति—कान्ति लिये हुए है। वह आकाश अथवा स्फटिक के समान स्वच्छ, श्लक्ष्ण—कोमल परमाणु स्कन्धों से निष्पन्न होने के कारण कोमल तन्तुओं से बने हुए वस्त्र के सदृश मुलायम, लष्ट—सुन्दर आकृति युक्त, घृष्ट—तेज शान पर घिस कर मानों पाषाण के सदृश संवारी हुई सी, सुकुमार शान से संवारी हुई सी अथवा प्रमार्जनिका से शोधी हुई सी, नीरज—रज-रहित, निर्मल—मल से रहित, आर्द्रमल से रहित, कलङ्क से रहित, शोभायुक्त, समरीचिका—सुन्दर किरणों से—प्रभा से युक्त, प्रासादीय—मन को प्रसन्न करने वाली, दर्शनीय—देखने योग्य अर्थात् जिसे निहारते हुए नयन अघाते न हों, अभिरूप—मनोज्ञ, अर्थात् मन को अपने में रमा लेने वाली एवं प्रतिरूप—मन में बस जाने वाली हैं। ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी के तल से उत्सेधांगुल—माप विशेष, द्वारा एक योजन पर लोकान्त है। उस योजन का जो ऊपर का कोस है, उस कोस का जो ऊपर का छठा भाग है, वहाँ सिद्ध भगवान् हैं, जो सादि—आदि सहित, मोक्ष प्राप्ति के काल की अपेक्षा से आदि सहित है, अपर्यवसित—अन्त रहित—अनन्त हैं, जो जन्म, जरा—बुढ़ापा, मृत्यु प्रधान आदि अनेक योनियों की वेदना तथा संसार के भीषण दुःख में पर्यटन से पुनः-पुनः होने वाले, गर्भवास में निवास के प्रपञ्च—विस्तार अर्थात् बार-बार

गर्भ में आने के संकट अतिक्रान्त कर चुके हैं अर्थात् उन्हें लांघ चुके हैं। वे अपने शाश्वत—नित्य, अनागत काल में सदा सुस्थिर स्वरूप में स्थित रहते हैं ॥४३॥

This world is as smooth as the surface of a counch, and white like *saulliya* flower, or the lotus stalk, or a drop of water, snow, cow's milk or a necklace. It looks like an umbrella turned upside down and is made of Arjuna (white ?) gold. It is made of sky-like or crystal-like transparent atomic clusters, neatly polished in diverse ways to impart glaze, free from dust, free from dirt, free from mud, spotlessly clean, uncovered, with unblemished beauty, shining with rays, beautifully radiant, pleasant to the mind, pleasant to the eyes, tender and never to disappear from the mind's eye after being seen once. 43

सिद्धस्तवन

Hymns to the Perfected Souls

कहिं पडिहया सिद्धा कहिं सिद्धा पडिट्ठिया ।
कहिं बोंदिं चइत्ता णं कत्थ गंतूण सिज्झई ॥१॥

सिद्ध किस स्थान पर रुकते हैं—आगे जाने से रुक जाते हैं ? वे कहाँ प्रतिष्ठित—अवस्थित होते हैं ? वे कहाँ देह त्याग कर कहाँ जाकर सिद्ध होते हैं ? ॥१॥

Where the *Siddhas* halt ?
Where do they stay ?
Where they discard their mortal frame ?
Where they attain perfection ? 1

अलोगे पडिहया सिद्धा लोयग्गे य पइट्ठिया ।
इहं बोंदि चइत्ता णं तत्थ गंतूण सिज्झई ॥२॥

सिद्ध लोक के अग्रभाग में स्थित होते हैं। अतएव वे अलोक में जाने में रुक जाते हैं अर्थात् वे अलोक में नहीं जाते हैं। और इस मनुष्य लोक में देह का त्याग कर वे लोकाग्र—सिद्ध स्थान पर जाकर सिद्ध—कृत्यकृत्य होते हैं ॥२॥

They halt at *aloka*, the vast space,
They stay at the crest of the universe,
They discard their mortal frame right here,
They attain there the coveted goal. 2

जं संठाणं तु इहं भवं चयं तस्स चरिमसमयंमि ।
आसी य पएसघणं तं संठाणं तहि तस्स ॥३॥

मनुष्य-शरीर का त्याग करते समय—अन्तिम-समय में जो प्रदेशघन—आकार—नाक, कान, उदर आदि पोले अंगों की रिक्तता के विलय से घनीभूत आकार बना था, वही आकार उन का वहाँ—सिद्ध स्थान में होता है—रहता है ॥३॥

There they have a similar form,
As they had here in human frame,
With many a space-point giving it shape,
The form exactly when breathing his last. 3

दीहं वा हस्सं वा जं चरिमभवे हवेज्ज संठाणं ।
तत्तो तिभागहीणं सिद्धाणोगाहणा भणिया ॥४॥

दीर्घ अथवा ह्रस्व—बड़ा-छोटा, लम्बा-ठिगना जैसा भी आकार अन्तिम भव में होता है, उस से तिहाई भाग कम में अर्थात् तीसरे भाग जितने कम स्थान में सिद्धों की अवगाहना—अवस्थिति अथवा व्याप्ति होती है, ऐसा जिनेश्वर देव के द्वारा कहा गया है ॥४॥

Long or short, whatever the size,
Before breathing out from the last life,
One-third less space than occupied then,
A perfected soul occupies this much space. 4

तिण्णि सया तेत्तीसा धणूत्तिभागो य होइ वोद्धव्वा ।
एसा खलु सिद्धाणं उक्कोसोगाहणा भणिया ॥५॥

सिद्धों की उत्कृष्ट—अधिक से अधिक अवगाहना—ऊँचाई, तीन सौ तेंतीस धनुष तथा तिहाई धनुष अर्थात् वत्तीस अंगुल होती है। सर्वज्ञों ने ऐसा वतलाया है। ॥५॥

इस का तात्पर्य यह है कि जिन की देह पांच सौ धनुष विस्तारमय होती हैं यह उन की अवगाहना है।

Three hundred and thirty three *dhanuṣas*
Plus a third of *dhanuṣa* one,
This has been said by the omniscient beings,
To be the maximum size of a perfected soul. 5

चत्तारि य रयणीओ रयणित्तिभागूणिया य बोद्धव्वा ।
एसा खलु सिद्धाणं मज्झिमओगाहणा भणिया ॥६॥

सिद्धों की मध्यम अवगाहना चार हाथ तथा तिहाई—तीसरा भाग कम एक हाथ (सोलह अंगुल) होती है। ऐसा सर्वज्ञों द्वारा भाषित है ॥६॥

इस का अभिप्राय यह है कि जिन की देह की अवगाहना सात हाथ परिमाण होती हैं, उन की यह अवगाहना बतलाई गई है।

The medium size of a perfected soul,
As stated by the omniscients,
Is said to be four cubits in length,
Plus one-third less in a cubit more. 6

एक्का य होइ रयणी साहीया अंगुलाइं अट्ठ भवे ।
एसा खलु सिद्धाणं जहण्णओगाहणा भणिया ॥७॥

सिद्धों की जघन्य—कम से कम अवगाहना एक हाथ तथा आठ अंगुल अधिक होती है। ऐसा सर्वज्ञों ने निरूपित किया है ॥७॥

इस का तात्पर्य यह है कि सिद्धों की यह जघन्य अवगाहना का निरूपण कूर्मपुत्र आदि की अपेक्षा से हैं, जिन की देह की अवगाहना दो हाथ-परिमाण होती हैं।

The minimum size of a perfected soul,
Is said to be a cubit and eight fingers more. 7

ओगाहणाए सिद्धा भवत्तिभागेण होइ परिहीणा ।
संठाणमणित्थंथं जरामरण विप्पमुक्काणं ॥८॥

सिद्ध अन्तिम भव की अवगाहना से तिहाई—तीसरा भाग जितनी कम अवगाहना से युक्त होते हैं। जो जरा—वार्धक्य—बुढ़ापा तथा मृत्यु से सर्वथा मुक्त हो गये हैं—बिल्कुल छूट गये हैं, उन का संस्थान—आकार किसी भी लौकिक आकार से नहीं मिलता है ॥८॥

इत्थं—इस प्रकार थं—स्थित, अणित्थं थं—इस प्रकार के आकारों में नहीं रहा हुआ हो ऐसा।

The *Siddhas* are less by one-third,
Of the size they had before death,
The shape of one who has no age nor death,
Is never the same as that of a worldly being. 8

जत्थ य एगो सिद्धो तत्थ अणंता भवक्खयविमुक्का।
अण्णोण्णसमवगाढा पुट्ठा सव्वे य लोगंते ॥९॥

जहाँ एक सिद्ध हैं, वहाँ भव क्षय—जन्म-मृत्यु रूप संसार-आवागमन के सर्वथा नष्ट हो जाने से मुक्त हुए अनन्त सिद्ध हैं, जो परस्पर-अवगाढ—एक-दूसरे में मिले हुए हैं और वे सभी लोकान्त—लोक के अग्र भाग का संस्पर्श किये हुए हैं ॥९॥

Where there is a liberated soul,
There is an infinite number more,
Freed from death, saturated in unconceived end,
They touch the end of the universe. 9

फुसइ अणंते सिद्धे सव्वपएसेहिं णियमसो सिद्धा।
तेवि असंखेज्जगुणा देसपएसेहिं जे पुट्ठा ॥१०॥

एक-एक सिद्ध निश्चय ही अपने समग्र आत्म प्रदेशों द्वारा अनन्त सिद्धों का सम्पूर्ण रूप में संस्पर्श किये हुए हैं। यों एक सिद्ध की अवगाहना में अनन्त सिद्धों की अवगाहना है। अर्थात् एक सिद्ध में—अनन्त सिद्ध अवगाढ़ हो जाते हैं। और उन से भी असंख्येय गुण वे सिद्ध हैं, जो देशों तथा प्रदेशों से अर्थात् कतिपय भागों से एक दूसरे में अवगाढ़—समाये हुए हैं। ॥१०॥

वास्तविकता यह है कि सिद्ध अमूर्त्त होने के कारण उन की एक—दूसरे में अवगाहना होने में किसी भी प्रकार की बाधा उत्पन्न नहीं होती है।

As a rule, does a *Siddha* touch,
With his space-points an infinite number more,
A perfected being touches an infinite number more,
With all the space-points of the soul,
Much more are those
Who are touched by some space-points of the soul. 10

असरीरा जीवघणा उवउत्ता दंसणे य णाणे य।
सागारमणागारं लक्खणमेयं तु सिद्धाणं ॥११॥

वे सिद्ध अशरीर—शरीर रहित, जीवघन—सघन अवगाह रूप आत्म प्रदेशों से युक्त, दर्शन और ज्ञान—दर्शनोपयोग व ज्ञानोपयोग से उपयुक्त हैं। इस प्रकार साकार—विशेष उपयोग ज्ञान और अनाकार—सामान्य उपयोग—दर्शन, चेतना सिद्धों के लक्षण हैं। ॥११॥

These perfected beings, they have no body,
Soul alone, saturated in knowledge and faith,
The sign of a perfected soul is
Its saturation in knowledge and faith. 11

केवलणाणुवउत्ता जाणंति सव्वभावगुणभावे ।
पासंति सव्वओ खलु केवलदिट्ठी अणंताहिं ॥१२॥

वे सिद्ध केवल ज्ञानोपयोग के द्वारा समस्त पदार्थों—वस्तुओं के गुणों एवं पर्यायों को जानते हैं तथा अनन्त केवल दृष्टि—दर्शन के द्वारा सर्वतः—सब ओर से समस्त भावों को देखते हैं। ॥१२॥

With the help of knowledge supreme,
They know the quality and category of all things,
With supreme vision, which is infinite,
They can view from directions all. 12

णवि अत्थि माणुसाणं तं सोक्खं णविय सव्वदेवाणं ।
जं सिद्धाणं सोक्खं अव्वाबाहं उवगयाणं ॥१३॥

सिद्धों को जो अव्यावाध—विघ्न और पीड़ा से सर्वथा रहित, शाश्वत सुख प्राप्त हैं, वह न तो मनुष्यों को प्राप्त है और न सभी देवताओं को ही प्राप्त है। ॥१३॥

Neither the humans nor all celestial beings,
Have the same experience of bliss,
Which is free from obstruction and disease,
Which is attainable by the perfected souls. 13

जं देवाणं सोक्खं सव्वद्धापिंडियं अणंतगुणं ।
ण य पावइ मुत्तिसुहं णंताहिं वग्गवग्गूहिं ॥१४॥

तीन काल—अतीत, वर्तमान, तथा भूत—तीनों कालों से गुणित—अनन्त देव-सुख है, उसे अनन्त बार, वर्ग-वर्गित किया जाए, ऐसा वह अनन्त गुण सुख मोक्ष-सुख के समान नहीं हो सकता ॥१४॥

The joys enjoyed by the divine beings,
Multiplied by three for three periods of time,
And raised to square an infinite times,
Still it equals not the joy of a perfected being. 14

सिद्धस्स सुहो रासी सव्वद्धापिंडिओ जइ हवेज्जा ।
सोऽणंतवग्गभइओ सव्वागासे ण माएज्जा ॥१५॥

एक सिद्ध के सुख को तीनों कालों—अतीत, वर्तमान तथा भूत से गुणित करने पर जो सुखराशि निष्पन्न होती है, उसे यदि अनन्त वर्ग से विभाजित—वर्गीकृत किया जाए तो जो सुख-राशि भाग-फल के रूप में उपलब्ध होती है वह इतनी अधिक होती है कि समूचे आकाश में समाहित नहीं हो सकती—अर्थात् नहीं समा सकती ॥१५॥

The quantum of joy a perfected soul enjoys,
Multiplied by three for three periods of time,
And divided the sum by an infinite number of categories,
Still it's more than the capacity of the sky to contain. 15

जह णाम कोइ मिच्छो नगरगुणे बहुविहे वियाणंतो ।
ण चएइ परिकहेउं उवमाए तहिं असंतीए ॥१६॥

जैसे कोई म्लेच्छ—असभ्य—जंगली मनुष्य नगर के बहुविध—अनेक तरह के गुणों को जानता हुआ भी वन में वैसी कोई उपमा—नगर के तुल्य कोई पदार्थ नहीं पाता हुआ उस (नगर) के गुणों को कहने में या गुणकीर्तन करने में समर्थ नहीं हो सकता ॥१६॥

Just like an aborigin who may know,
Many a strong point of urban living,
But since they are not there in the forest,
So he cannot describe the former's merits. 16

इय सिद्धाणं सोक्खं अणोवमं णत्थि तस्स ओवम्मं ।
किंचि विसेसेणेत्तो ओवम्ममिणं सुणह वोच्छं ॥१७॥

उसी प्रकार सिद्धों का सुख अनुपम है। उसकी कोई उपमा नहीं है। तथापि सामान्य जनों के बोध हेतु कुछ विशेष रूप से उपमा के द्वारा उस सुख को समझाया जा रहा है, सुनें ॥१७॥

तात्पर्य यह कि मैं उस सुख की उपमा कहता हूँ, सो सुनो।

The joy enjoyed by the *Siddhas* has no parallel,
There's nothing on this earth which may its equal be,
Still I will try to describe this joy,
With the help of comparisons, listen to me. 17

जह सव्वकामगुणियं पुरिसो भोत्तूण भोयणं कोइ ।
तण्हाछुहाविमुक्को अच्छेज्ज जहा अमियतित्तो ॥१८॥

जैसे कोई व्यक्ति अपने द्वारा चाहे गये सर्व गुणों—समग्र विशेषताओं से युक्त भोजन कर, भूख व प्यास से रहित होकर अमित—अपार तृप्ति का अनुभव करता है ॥१८॥

By enjoying a dish having all desired food,
Just as a man who has it,
He is freed from hunger and thirst,
Has a gratification which knows no limit. 18

इय सव्वकालतित्ता अतुलं णिव्वाणमुवगया सिद्धा ।
सासयमव्वाबाहं चिट्ठंति सुही सुहं पत्ता ॥१९॥

उसी प्रकार सर्वकालतृप्त—समस्त समयों में परम तृप्ति युक्त, अतुल—अनुपम शान्तियुक्त सिद्ध शाश्वत—नित्य तथा अव्याबाध—विघ्न-बाधा से सर्वथा रहित परम सुख में संस्थित—निमग्न रहते हैं ॥१९॥

So a perfected being, gratified,
Who has attained liberation which has no parallel,
He lives by being happy,
For, happiness eternal and unobstructed is his. 19

सिद्धत्ति य बुद्धत्ति य पारगयत्ति य परंपरगयत्ति ।
उम्मुक्ककम्मकवया अजरा अमरा असंगा य ॥२०॥

वे सिद्ध हैं—उन्होंने अपने सर्व प्रयोजन साध लिये हैं, कृतकृत्य हैं, वे बुद्ध हैं—केवलज्ञान के द्वारा विराट् विश्व का यथार्थ बोध जिन्हें स्वायत्त है, वे पारगत हैं—भव-सागर को पार कर चुके हैं, वे परंपरागत हैं—परम्परा-क्रम से प्राप्त मोक्ष के उपायों का अवलम्बन लेकर वे संसार-समुद्र के पार पहुँचे हुए हैं, वे उन्मुक्त-कर्म-कवच हैं—जो पुण्य-पाप रूप कर्मों का वख्तर उन पर लगा था, उस से वे सर्वथा मुक्त हुए हैं—छूटे हुए हैं। वे अजर हैं- वृद्धावस्था से रहित हैं। वे अमर हैं—मरण से रहित हैं और वे असंग हैं—सब पर-पदार्थों के संसर्ग से रहित हैं अर्थात् सब प्रकार की आसक्तियों के प्रगाढ़ जाल से छूटे हुए हैं ॥२०॥

Perfected are they, they are enlightened,
They have reached the end of life step by step.
Liberated of all the bondages of *karma*,
Freed of age, of death and of all pains. 20

णिच्छिण्णसव्वदुक्खा जाइजरामरणबंधणविमुक्का ।
अव्वाबाहं सुक्खं अणुहोंति सासयं सिद्धा ॥२१॥

सिद्ध सर्व-दुःखों को पार कर चुके हैं। जन्म, बुढ़ापा और मृत्यु के बन्धन से सर्वथा मुक्त हुए हैं। निर्बाध—बाधा रहित, शाश्वत—नित्य सुख का अनुभव करते हैं ॥२१॥

All their pains are at an end,
They are free from birth, age and death,
They have bliss which is not transient,
Eternal joy the *Siddhas* enjoy. 21

अतुलसुहसागरगया अव्वाबाहं अणोवमं पत्ता ।
सव्वमणागयमद्धं चिट्ठंति सुही सुहं पत्ता ॥२२॥

अनुपम सुख-सागर में निमग्न, अव्याबाध—निर्बाध या विघ्न-बाधा से रहित, अनुपम मुक्तावस्था प्राप्त किये हुए सिद्ध समग्र—अनागत व भविष्य काल में सर्वदा प्राप्तसुख—सुखयुक्त स्थित रहते हैं ॥२२॥

Having attained a state, unparalleled,
Free from disease and obstruction all,
Having attained joys of times not yet arrived,
They live on immersed in bliss. 22

उववाइयसुत्तं समत्तं

औपपातिक सूत्र समाप्त

Aupapātika Sūtra ends.

PRAKRIT BHARATI ACADEMY
PUBLICATIONS

S. No.	Title	Author	Price
1	Kalpa Sutra (Illustrated) (P. H. E)	M. Vinay Sagar	200/-
2	Rajasthan ka Jain Sahitya (H)	M. Vinay Sagar & others	30/-
3	Prakrit Svayam Shikshak (P. H)	Dr. Prem Suman Jain	15/-
4	Agam Teerth (H)	Dr. Hariram Acharya	10/-
5	Smaran Kala (H)	Mohan Muni Shardula	15/-
6	Jainagam Digdarshan (H)	Dr. Muni Nagraj	20/-
7	Jain Kahaniyan (H)	Up. Mahendra Muni	4/-
8	Jati Smaran Jnana (H)	Up Mahendra Muni	5/-
9	Half A Tale (H, E)	Dr. Mukund Lath	150/-
10	*Ganadharvad* (H)	M. Vinay Sagar	50/-
11	Jain Inscriptions of Rajasthan (E)	Ramballabh Somani	70/-
12	Basic Mathematics (E)	Prof. L. C. Jain	15/-
13	Prakrit Kavya Manjari (P. H)	Dr. Prem Suman Jain	15/-
14	Mahavir ka Jeevan Sandesh (H)	Kaka Kalelkar	20/-
15	Jain Political Thought (E)	Dr. G. C. Pande	40/-
16	Study of Jainism (E)	Dr. T. G. Kalghatgi	100/-
17	Jain, Bauddh Aur Gita ka Sadhana Marg (H)	Dr. Sagarmal Jain	20/-
18	Jain, Bauddh Aur Gita ka Samaj Darshan (H)	Dr. Sagarmal Jain	16/-
19	Jain, Bauddh Aur Gita ke Aachar Darshanon ka Tulanatmak Adhyayan, vol. I (H)		
20	Ibid., vol. II (H)	Dr. Sagarmal Jain	140/-
21	Jain Karm Siddhant ka Tulanatmak Adhyayan (H)	Dr. Sagarmal Jain	14/-
22	Hem Prakrit Vyakaran Shikshak (P. H)	Dr. Udai Chand Jain	16/-
23	Acharang Chayanika (P. H)	Dr. K. C. Sogani	18/- Hard Bound 25/-

24	Vakpatiraj ki Lokanu-bhuti (P. H)	Dr. K. C. Sogani	12/-
25	Prakrit Gadya Sopan (P.H)	Dr. Prem Suman Jain	16/-
26	Apabhransh Aur Hindi (H)	Dr. Devendra K. Jain	30/-
27	Neelanjana (H)	Ganesh Lalwani	20/-
28	Chandanmurti (H)	Ganesh Lalwani	20/-
29	Astronomy & Cosmology (E)	Prof. L. C. Jain	15/-
30	Not Far From The River (P.E)	David Ray	50/-
31	Upmiti Bhava Prapancha Katha vol. I (H)		
32	Ibid., vol. II (H)	M. Vinay Sagar	150/-
33	Samana Suttam Chayanika (P. H. E)	Dr. K. C. Sogani	16/-
34	Milay Man Bheetar Bhagvan (H)	Vijai Kalapurna Suri	30/-
35	Jain Dharm Aur Darshan (H)	Ganesh Lalwani	9/-
36	Jainism (Some Essays) (E)	Dalsukh Malvania	30/-
37	Dashavaikalik Chayanika (P.H)	Dr. K. C. Sogani	12/-
38	Rasa Ratna Samucchaya (S.E)	Dr. J. C. Sikdar	15/-
39	Neeti Vakyamritam (S.H.E)	Dr. S. K. Gupta	100/-
40	Samayik Dharm : Ek Purna Yoga (H)	Vijai Kalapurna Suri	10/-
41	Gautam Raas : Ek Pari-sheelan (P.H)	M. Vinay Sagar	15/-
42	Ashtapahud Chayanika (P. H)	Dr. K. C. Sogani	12/-
43	Vajjalagg mein Jeevan Mulya (P.H)	Dr. K. C. Sogani	10/-
44	Geeta Chayanika (S.H.E)	Dr. K. C. Sogani	16/-
45	Ahimsa : The Science of Peace (E)	Surendra Bothra	30/-
46	Rishi Bhashita Sutra (P.H.E)	M. Vinay Sagar & Kalanath Shastri	100/-
47	Nadivijnanam & Nadi-prakasham (S.E)	Dr. J. C. Sikdar	30/-

S : Sanskrit, P : Prakrit, H : Hindi, E : English

कुछ प्रतिक्रियायें

पुस्तक : गौतम रास : एक परिशीलन—लेखक : म० विनय सागर

मूल्य—१५·००

"इन्द्रभूति गौतम से सम्बन्धित व्यवस्थित विवरण की दृष्टि से यह पुस्तक अत्यन्त उपयोगी है। आगम-साहित्य में वर्णित प्रथम गणधर इन्द्रभूति गौतम से सम्बद्ध शोधों के लिये उपयोगी है। लेखक की भाषा साहित्यिक एवं वर्णन-शैली रोचक है।"

—अशोक कुमार सिंह, अमर भारती

"गौतम स्वामी का प्रामाणिक जीवन चरित्र, गौतम रास का सम्पूर्ण अर्थ विशिष्ट है जो कि अत्यन्त ज्ञान वर्धक, कल्याण मांगलिक एवं लब्धिसिद्धियों का द्योतक है। प्रत्येक भविक जैन को मार्मिक प्रसंग का चित्रण नेत्रों में अंकित कर श्रवण करना चाहिये।"

—ज्योति-संदेश, भोपाल

"भगवान गौतम पर अब तक जितने शोध-कार्य हुए हैं, प्रस्तुत पुस्तक उनका प्रतिनिधित्व करने में सक्षम है। श्री विनय सागरजी ने इस रचना का सानुवाद समीक्षात्मक अध्ययन प्रस्तुत कर लोकोपयोगी कार्य किया है। पुस्तक की उपादेयता असंदिग्ध है।"

—मुनि महिमाप्रभसागर, हुबली

पुस्तक : समणसुत्तं-चयनिका—सं० एवं अनु० : डा० कमलचंद सोगानी

मूल्य—१२·००

"Here are the *suttas* which help each one of us to enrich our lives by the power of our own efforts—a philosophy that puts happiness into meaningful framework of daily living. These *suttas* explore the richness of dedication, the promise of hope. What *Dhammapada, Bible, Koran* and *Gita* is for Buddhists, Christians, Muslims and Hindus respectively, *Samaṇasuttaṁ* is for the Jains, the central book of philosophy."

—Prof. K. S. Ramkrishna Rao

"समणसुत्तं की भूमिका पढ़ते-पढ़ते ऐसा लगता है, जैसे मन के नयन खुल रहे हैं।"

—जनार्दन राय ना र

उपकुलपति, राजस्थान विद्यापीठ, उदयपुर

पुस्तक : सचित्र कल्पसूत्र—संपादक : म० विनय सागर

मूल्य—२००·००

"It is a unique work of artistry in which the noble spirit of Jainism is revealed."

—Acharya Chitrabhanu

"संपादन-प्रकाशन अद्भुत है।"

—आचार्य पद्मसागर सूरि

"....कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि अब तक के अनुदित, सम्पादित व प्रकाशित कल्पसूत्रों में यह प्रथम कोटि का है।"

—डा० मुनि नगराजजी

"कल्पसूत्र का वैसे तो अनेक स्थानों से प्रकाशन हुआ है और वे जनता द्वारा समादरणीय भी हुए हैं, किन्तु 'प्राकृत-भारती' जयपुर द्वारा प्रस्तुत प्रकाशन का अपने में एक विशिष्ट रूप है। शुद्ध मूल पाठ, संक्षिप्त किन्तु भावस्पर्शी शब्दानुसारी हिन्दी अनुवाद, साथ ही अंग्रेजी भाषा में रूपान्तर। बीच-बीच में यथास्थान हस्तलिखित प्राचीन प्रतियों पर से लिये गए भावपूर्ण रंगीन चित्रों का अंकन भी प्रस्तुत संस्करण की अपनी एक विशेषता है।"

—मुनि समदर्शी, श्री अमर भारती: